❀ *दिशाएं साक्षी है*

❀ सस्मरण

❀ लेखिका
❀ साध्वीरत्नत्रयी, शान्तमूर्ति
डॉ ज्ञानलता जी म सा
❀ डॉ. दर्शनलता जी म.सा
❀ डॉ. चारित्रलता जी म.सा

❀ प्रथम-सस्करण - 2057

❀ आवृत्ति - 1000

प्रकाशक
श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ
गुलाबपुरा (राजस्थान)

❀ मूल्य - 35/- रु मात्र

❀ **सौजन्य**
दानवीर, श्रेष्ठिवर्य
श्री सुवालाल जी ज्ञानचन्द जी सा ललवाणी
मेडतासिटी - नागौर (राज)

❀ मुद्रक
निओ ब्लॉक एण्ड प्रिन्ट्स
अजमेर © 422291

पुरोवाक्

भगवान महावीर से गौतम ने पूछा "भन्ते आत्मा नीचे अधोगति मे क्यो जाती है एव उर्ध्व गति मे कब उठती है ?" भगवान ने कहा - गौतम एक सूखी अखण्ड तूम्बी को जल मे डालने पर वह नहीं डूबती मगर उस पर मिट्टी का लेप लगा कर सुखाओ फिर लेप लगाओ, इस प्रकार आठ बार मिट्टी का लेप लगाकर उसे जल मे डालेगे तो वह तैरेगी नहीं बल्कि अपने बोझ से पानी मे डूब जायेगी। हमारी आत्मा की स्थिति भी तुम्बी के समान है । यह स्वभाव से ही ऊपर उठी हुई है, मगर इस पर आठ कर्मो का लेप चढ जाने से यह अधोगति की ओर उन्मुख है । इसके आठ लेप रूपी आठो कर्मों को धो डालो एव हिसा, असत्य, असयम, चोरी, क्रोध, मान, माया, लोभ आदि से उपरत हो आओ, यह आत्मा उर्ध्वगति को प्राप्त कर लेगी ।

मानव जीवन को प्राप्त कर हम सभी का यह लक्ष्य होना चाहिए कि हम उर्ध्वगति को प्राप्त करे । जैनधर्म मे समभाव की साधना को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है । समभाव मे रमण करने के लिए यह आवश्यक है कि हम स्वाध्यायी बनकर सत्साहित्य की सलिला मे तैरते रहे । सत्साहित्य को मनुष्य का सबसे उत्तम साथी माना गया है । स्वाध्याय के माध्यम से मनन करता हुआ मानव अपने अष्टकर्मों का अन्त करके उर्ध्वगति की ओर उन्मुख हो सकता है । यह जीवन के आध्यात्मिक उत्कर्ष हेतु सजीवनी का कार्य करता है । आज के आदमी के पास आनन्द कम अन्तर्व्यथा अधिक है । वह मुस्कान से ज्यादा पीडा का बोझ ढो रहा है । जागरण की वेला मे प्रमाद ने उसको घेर रखा है । आशा के आगन मे निराशा के जलद ने असमय अधकार को आमत्रण दे दिया है । मानव मन से निराशा के नीरद को हटाने हेतु ज्ञान का सुरभित समीर चलाने का कार्य, युगो युगो से सन्त-मनीषी करते रहे हैं ।

जैन परम्परा तो सत्साहित्य का अथाह महासागर है जिसमे अहर्निश विभिन्न पावन सलिलाओ का जल आता रहता है । जैन वाड्मय की विभिन्न साहित्यिक विधाओ मे अनवरत लेखन का क्रम प्रवहमान है । सृजनशील जैन सन्त-सतियो के क्रम मे महासती डॉ साध्वी रत्नत्रयी जी, जो कि तीन तन एक मन हे का महत्त्वपूर्ण स्थान है । प्राकृत, सस्कृत, हिन्दी, गुजराती एव राजस्थानी पर आपका समान अधिकार है । नियमित प्रवचन, धर्मचर्चा, स्वाध्याय एव लेखन आपके जीवन के सूत्र वन चुके हैं । इस वात की दिशाए साक्षी हैं । शास्त्रो का स्वाध्याय और उन पर अपनी

कलम चलाते हुए जीवन मे प्रतिपल घटने वाली घटनाओ के प्रति भी आप सदैव सजग है । धर्मशास्त्रो का अध्ययन एव जीवन का अवलोकन करते हुए आप निर्झर की भाँति सतत गतिमान रहे है । आत्म साधना मे रत रहते हुए जीवनानुभवो के सत्य को सस्मरण के माध्यम से उद्घाटित करने का आपका यह प्रयास स्तुत्य है ।

प्रत्येक मानव के समक्ष प्रतिदिन कोई न कोई पल ऐसा आता है जो उसके मन एव मस्तिष्क को प्रभावित किये बिना नहीं रहता । कृति का प्रत्येक अग अनुभव जनित सत्य को प्रकट करता है । साधु-साध्वी पाद विहार करते हुए दूर दूर तक भगवान महावीर के सन्देश के प्रचार मे रत रहते है । वे धर्म प्रचार के साथ-साथ सामाजिक एव राष्ट्रीय कर्त्तव्यो से विमुख नहीं होते हैं । आप अपने कर्त्तव्यो सहित उत्तरदायित्वो का भी निभृत रहते हुए पालन कर रहे हैं ।

यह कृति धर्म, समाज एव राष्ट्र के प्रति अपने दायित्वो का प्रतिविम्व है । अजमेर से लेकर मध्यप्रदेश तक की यात्रा के सस्मरणो के रूप मे पाठको के समक्ष रखने का यह प्रयास प्रत्येक सहृदय पाठक के लिए प्रेरणादायक सिद्ध । प्रत्येक सस्मरण के लेखन के पीछे शिक्षा एव उद्देश्य निहित है जो प्रभावित बिना नहीं रहता । दिशाएँ साक्षी है कृति एक ऐसे सूरज की तरह है जिसकी भी किरणे प्रकट होकर अधकार मे प्रकाश भरने हेतु निकली है । ये किरणे मार्ग मे मिले बचपन के बिम्ब को बताती है तो बुढापे की सकडी गलियो मे प्रवेश कर उन्हे अनुभव का उजाला भी बाँटती है ।

दिशाएँ साक्षी हैं पुस्तक को पढकर हम अपने अन्तर मे ज्ञान का चिराग जला सके तो जीवन मे अन्धकार का अन्त सभव है । यह कृति एक ऐसी आत्मकथा है जिसमे समाज एव राष्ट्र की व्यथा है, धर्म का सुमधुर नाद हे, सत्य से शाश्वत सवाद है । सहृदय पाठक इस कृति का स्वाध्याय कर जीवन मे आस्था के नये आयाम स्थापित करने मे सफल हो सकेगे तो लेखिका का श्रम सार्थक सिद्ध होगा। पद यात्रा के साथ-साथ इस अनूठी सृजन यात्रा के लिए महासती डॉ साध्वी रत्नत्रयी जी द्वारा सुधी पाठको को नव दृष्टि प्रदान करने हेतु मेरा बार बार साधुवाद ।

डॉ. शशिकर 'खटका राजस्थानी'
एम ए , पी एचडी (जैन साहित्य)

कवि कुटीर,
राणा प्रताप मार्ग,
बिजयनगर-अजमेर (राज)

❀ ❀ ❀

स्वकथ्य

महापुरुषो ने गति को ही जीवन का नाम दिया है । जिसने भी गति को पकड लिया वही आगे बढ गया । जीवन पथ पर चलते हुए उगते सूर्य से लेकर ढलती साझ तक अनेक व्यक्तियो से साक्षात्कार होता है । सभी की अपनी रूचि, विचार एव प्रभामण्डल होता है । जीवन की राहो मे मिलने वाले पथिक कभी हमसे प्रभावित होते हैं तो कभी हम उनसे प्रभावित होकर प्रमुदित होते हैं । कुछ चलचित्र की तरह आकर स्मृति पटल से दूर चले जाते हैं तो कुछ अद्‌भुत व्यक्तित्व की ऐसी रश्मियाँ बिखेरते है जो मन को मुग्ध कर देती है । उनके स्मृति बिम्ब मन और मस्तिष्क मे अमिट छाप छोड देते हैं ।

साधु का जीवन तो निर्झर की भाति सदैव गतिशील होता है । अकारण किसी एक स्थान पर अधिक ठहरना उसे स्वीकार नहीं होता । वीतराग पथ पर कदम बढाने के पश्चात चरैवेति चरैवेति का लक्ष्य लेकर निरन्तर आगे बढते रहे। जैन सन्त-सती की यात्रा पैदल ही होती है । महानगरो से ग्राम एव ढाणी तक की उनकी सम्पूर्ण यात्रा पाँव-पाँव पूरी होती है । इस यात्रा के क्रम मे कभी-कभी ऐसी घटनाए प्रसूता व चर्चाएँ अन्तर्मन को आलोडित कर देती हैं कि वे भुलाये नहीं भूली जाती ।

आचार्यप्रवर स्वाध्याय शिरोमणी पूज्य गुरुदेव श्री 1008 श्री सोहनलाल जी म सा एव वर्तमान आचार्य श्री सुदर्शनलाल जी म सा पावस प्रवास हेतु अजमेर विराज रहे थे । पूज्य गुरुदेव श्री की सुखद सन्निधि मे अजमेर प्रवास सानन्द सम्पन्न हुआ । आपके मगलमय आशीर्वाद से मेवाड-मालवा की ओर विहार करते हुए मन मे यह भाव जाग्रत हुआ कि इस विहार यात्रा को शब्दबद्ध कर लिया जाये । दिन मे जो देखा, जिनसे धर्म-चर्चा हुई, जिनके जीवन मे परिवर्तन का बोध हुआ वह सारा घटनाक्रम-चिन्तन लेखनी से कागज पर उतारता गया । स्वाध्याय के क्षणो मे कभी-कभी बीते कल की घटनाओ पर दृष्टि जाती, तो वे क्षण चलचित्र की भाति आँखो मे उभर आते । इन सस्मरणो मे परिमित शब्दो के द्वारा अपरिमित भावो को प्रकट करने का प्रयास किया गया है । जीवन का प्रत्येक यथार्थ लेखनी के माध्यम से अभिव्यक्ति पाने का प्रयास करता है । मैंने प्रतिदिन जो देखा, सोचा एव किया

वह हर शब्द वाक्य बनकर खाली पृष्टो को भरता रहा है । साधु स्वभाव के कारण हर पल समभाव को जगाये रखना, आत्मीयता का प्रसार करना, ऋजुता की सतत अभिवृद्धि करना, वात्सल्ययुक्त करुणा भाव उत्पन्न करना, सत्य अहिसा एव दया का प्रचार करना, व्यसन और फैशन से मानव मन को हटाकर धर्म प्रचार मे रत रहना ही जीवन का उद्देश्य है।

अपने कर्त्तव्य एव उत्तरदायित्व का निर्वाह करते हुए साधु जीवन की मर्यादा मे रहकर समाज को दिशा बोध देना एक लक्ष्य रहा है । दूर दराज की विहार यात्रा मे यह दृष्टिगोचर हुआ कि आज का आदमी बडी दुविधा मे जी रहा है । समस्याओ में इस कदर उलझ कर रह गया है कि वह समाधान के विषय मे सोचना ही भूलता जा रहा हे ।

जीवन के पथ मे चलते तो सभी हैं, मगर यात्रा जनित अनुभव से सीख लेने वाले कम ही मिलते हैं । कुछ आदमी जन्म लेते हैं, जीवन जीकर अपनी यात्रा पूरी कर लेते हैं पर उनके जीवन का कोई उद्देश्य एव लक्ष्य नहीं होता । समतायुक्त [illegible]क जीवन पथ के अनुभवो को चिन्तन के धरातल पर उतारकर भविष्य की राह [illegible] करता है । इस विहार यात्रा मे जीवन के खट्टे-मीठे जो भी अनुभव हुए उन्हे [illegible]बद्ध करने मे कभी प्रमाद नहीं किया । यही कारण है कि इन सस्मरणो मे कहीं [illegible] दिवस का दर्शन है, वहीं कहीं पर निशा का चिन्तन झलकता है । कहीं पर शास्त्रो का अनुभूत सत्य है तो कहीं श्रावको का श्रद्धायुक्त कृत्य है । इन सस्मरणो को पढकर लगता है कि आज समाज मे बाते तो बडी-बडी की जा रही है मगर धर्म, राष्ट्र और समाज की पीडा को हरने वालो की कमी आ गई है । इन सस्मरणो के लेखन एव उनके चिन्तन के पीछे सदैव यही भावना रही है कि मानव चरित्रवान बनकर राष्ट्र मे सुख, शान्ति एव समृद्धि के सुमन खिलाकर सत्य से स्वय साक्षात्कार करने का प्रयास करे, धर्मभावना मे अभिवृद्धि करे, सदाचार की भावना को जीवन का लक्ष्य बनाये क्योकि सदाचार की नींव पर ही धर्म का पावन भवन खडा है।

प्रस्तुत कृति को मूर्त रूप देने के पीछे सदैव यही भावना रही है कि धर्म, समाज एव जीवन मे जो विसगतियाँ है उन्हे सुधी पाठको तक पहुँचाया जाये । समय के झझावातो ने मन, मानव एव मानवीयता को झकझोर कर रख दिया है। भौतिकता की चकाचौंध से अध्यात्म की नींवे हिल रही है । बाह्य सौन्दर्य मे डूबा

हुआ आज का मानव भीतर के शाश्वत सौन्दर्य का बोध नहीं कर पा रहा है । परिग्रह की दौड मे लगा इसान जब दौडते दौडते थक जाता है तब अध्यात्म के सुनहले आँगन मे ही उसे आनन्द मिलता है । यह सच है कि भौतिकता ने जहाँ जीवन मे उलझने बढाने का कार्य किया वहीं अध्यात्म ने उन उलझनो को सुलझाया है।

आज का पथ भ्रमित मानव अभय एव आनन्द की खोज मे अध्यात्म से दूर निकल गया है । दिग्मूढ एव दिशाहीन मानव को अपने जीवन पथ पर आगे बढाने हेतु जिनवाणी ने जो कुछ भी किया आज भी दिशाएँ उसकी साक्षी है ।

पवित्र उद्देश्य को लेकर राष्ट्रीय भावधारा को धर्म के साथ जोडते हुए सामाजिक चेतना को आगे बढाया, जिससे जीवन बगियाँ मे ज्ञान की सौरभ फूटी, हजारो लोगो ने व्यसन को विराम दिया । सत्य की साधना के प्रति आस्था जगाई, उसकी आज भी दिशाएँ साक्षी है । पूर्व, पश्चिम, उत्तर एव दक्षिण दिशा मे जिधर भी कदम बढे वहीं धर्म प्रभावना का अद्भुत एव अनुपम मेला जुड गया । ज्ञान, दर्शन व चारित्र की कैसी त्रिवेणी कहाँ पर बही यह बात तो वे ही बता सकते हैं जिन्होने इस त्रिवेणी मे अवगाहन किया है या फिर दिशाए ही इसकी साक्षी है, जिन्होने पथ, घर, गली, सडक एव स्थानक मे साधना के सूर्य को निकलते देखा है ।

दिशाएँ साक्षी है कृति के सभी सस्मरण ज्ञान का आलोक पाने का सहज रास्ता है । इस रास्ते पर मिले शूलो को धर्म प्रभावना से फूलो मे बदलने का सतत प्रयास किया है । पाठको तक इन्हे पहुँचाने के लिए लेखन को अपने दैनिक जीवन मे धार्मिक अनुष्ठान एव कर्त्तव्य समझकर कार्य किया है । स्वाध्याय के क्षणो मे शब्दो का परिमार्जन किया मगर मूल भावना मे किंचित भी फेर बदल नहीं किया है । चातुर्मास काल के प्रवचन मे भी ये सस्मरण श्रोताओ तक पहुँचे तब कुछ श्रद्धालुओ की भावना रही कि ऐसे सस्मरण प्रकाशित हो तो पाठको को भी लाभ मिलेगा । उसी आग्रह के फलस्वरूप यह कृति अपना मूर्त स्वरूप प्राप्त कर सकी है । यह कृति जीवन एव जगत की अनुभूति का दर्शन है । इसमे मिट्टी की महक एव प्रकृति का अद्भुत आकर्षण है । सहृदय भावनाशील, धर्मप्रेमी पाठक कृति की अतल गहराई मे उतरकर जीवन के मोती ढूढ सके तो यह प्रयास सार्थक सिद्ध होगा ।

जैन स्थानक, *डॉ. साध्वी रत्नत्रयी*

गुलाबपुरा दि ९ जुलाई, २०००

प्रकाशकीय

श्रमण का जीवन एक यायावर का जीवन होता है । स्वकल्याण के उद्देश्य से प्रव्रजित होकर 'चरैवेति चरैवेति' के सिद्धान्तानुसार निरन्तर भ्रमणशील रहना उनकी शास्त्रानुमोदित आचार-परम्परा है । इससे पर-कल्याण का आनुषगिक लाभ भी उन्हे मिलता है । ये आत्मदृष्टा साधक मधुकर के समान होते हें जो अकिचनवृत्ति के अनुसर्ता बनकर कहीं भी, किसी एक ही वस्तु या व्यक्ति के प्रति प्रतिबद्ध नहीं होते । और तो क्या, वे अपने देह पर भी ममत्व नहीं रखते ।

इस भ्रमण-चर्या मे उन्हे भिन्न-भिन्न स्वभाव वाले व्यक्तियो, विभिन्न दृश्यावलियो, प्रकृति के अनेक रूपो, भाँति-भाँति के पशु-पक्षियो आदि के दर्शन होते हैं । कहीं विस्तीर्ण राजमार्ग पर गमन करते हैं तो कहीं कण्टकाकीर्ण ग्राम-वीथिकाएँ उनके पदच्छेदन कर अपनी निर्ममता व्यक्त करती है । इन सभी प्रकार की परिस्थितियो मे जो समभाव रखता है वही सच्चा श्रमण है । साधना के पथ पर चलते हुए वे राग के बन्धन व तृष्णा के बन्धन काटते चलते हैं ।

परमश्रद्धेया, श्रमणीवर्या साध्वीरत्नत्रयी डॉ ज्ञानलता जी म सा भी एक ऐसी इस महापथ की निर्भीक यात्री है जिन्होने अपनी सहवर्तिनी साध्वियो के साथ क्ष भाव से इस धरा पर विचरण किया है । मारवाड मे पाली-जोधपुर भू-का, मेवाड सभाग मे चितौड-उदयपुर अचल का स्पर्श किया है, वहीं मध्यप्रदेश के सिगोली कस्बे मे मगलमय चातुर्मास व्यतीत कर स्पृहणीय आदर्श प्रस्तुत किया है । इस यात्राक्रम मे दुग्ध-धवल मुस्कान से भरे शिशुओ के चेहरे, गहरे पारिवारिक विषाद मे निमग्ना युवतियो के म्लान-मुख, धार्मिक-क्रियाओ को मात्र क्रियाकाण्डपूर्वक सपन्न करती महिलाओ की त्वरापूर्ण मुखमुद्रा, अपने ईमान को कसोटी पर कसती सन्नारियो के चरित्र, धर्म को आडम्बर-मात्र मानने वाले मार्गच्युत युवाओ की मनोदशा आदि को पढने-समझने का अवसर मिला है तो कभी कभी राम-भरत-मिलाप के दृश्य को साकार करते हुए दो बिछुडे भाइयो के मिलन को भी देखा है । श्रद्धासिक्त हृदयो का समर्पण तो आपने हमेशा ही पाया है ।

इन सबके बीच अपने कर्त्तव्य-बोध द्वारा धार्मिक सस्कारो को सुदृढ करते हुए, पारिवारिक, सामाजिक व धार्मिक परिस्थितियो को सुलझाने का, गहन चिन्तनपूर्वक,

तटस्थ भाव से सही दिशा-निर्देश देने का आपने सुअवसर भी पाया है । धर्मस्थान मे व बाहर भी विविध पकार की मानसिकता वालो को खुली आँखो से देखा, मुक्त मन से उनकी चित्तवृत्तियो का अकन किया एव समरसपूर्ण भावो से परिपूर्ण होकर, उन्हे चलने के लिए दिशा दी । कहीं-भी स्वगत मनोभावो का आरोपण नहीं - दबाव नहीं । सहज निर्मल-निश्छल भावो से जो कुछ भी आपने कहा - समझाया, उसे आस्तिक जनो ने गहराई से हृदय मे उतार लिया । यही वह प्रभाव होता है जो स्थायी होता है - हृदय-परिवर्तन कर पाता है ।

ऐसे अनेक विध सस्मरण दृश्यो को प्रकृति के साहचर्य से बिम्बित किया है महासतीवर्या ने इस 'दिशाएँ साक्षी हैं' मे । भक्तजनो का आग्रह था कि आप अपनी उन अनुभूतियो को लोक-कल्याणार्थ अपनी लेखनी से अकित कर दे ताकि वर्तमान का अभ्यासी व्यक्ति सुखद भविष्य का भी बोध पा सके । हमे प्रसन्नता है कि श्रद्धेया महासती जी म सा ने हमारे आग्रह को स्वीकार कर अपने अनुभवो को शब्दायित किया, जिसे पाठको को समर्पित करते हुए हमे प्रसन्नता है ।

इसके प्रकाशन को माननीय श्रेष्ठिवर्य श्री सुवालाल जी सा ललवाणी, मेडतावालो ने अपने द्रव्य का सदुपयोगकर सर्वजन सुलभ बनाया है अत उनके प्रति हम हार्दिक आभार प्रकट करते हैं ।

साथ ही कविवर डॉ शशिकर जी 'खटका राजस्थानी' ने इसके लिए भूमिका लिखने की कृपा की है । उनके प्रति भी हम कृतज्ञता ज्ञापन करते हैं ।

पाठक इन सस्मरणो को पढकर अपनी स्मृति मे सजो सकेगे, तभी हम इसकी सार्थकता का अनुभव करेगे । कि

गुलाबपुरा

मत्री

आषाढ पूर्णिमा २०५७

श्री श्वे स्था जैन स्वाध्यायी सघ

धर्मनिष्ठ ललवाणी परिवार एक परिचय

ज्ञानियो ने कहा हे कि "व्यक्ति की महत्ता इसी मे ह कि वह सत्य का अनुसरण करता है, जो अन्दर और बाहर के सभी प्रलोभनो का प्रतिरोध करता हे एव सद्भावना, सहयोग, उदारता व निर्मलता की भावनाए जिसके हृदय मे अठखेलिया करती हे ।"

प्रस्तुत कसौटी पर यदि हम मेडता निवासी श्रेष्ठिवर्य सुश्रावक श्रीमान् सुवालाल जी सा ललवाणी के जीवन को परखते हैं तो उनके जीवन मे सर्वत्र सरलता, उदारता व व्यवहारगत मधुरता ही दृष्टिगत होती हे । आप एक श्रद्धाशील सुश्रावक हे, उदारता के धनी हे तथा भौतिकता के आकर्षण से परे रहकर आध्यात्मिक जीवन जीनेवाले धर्मनिष्ठ महानुभाव ह ।

आपका जन्म शुभमिति श्रावण सुदी ११ सम्वत् १९९६ को धर्मप्रेमी सुश्रावक श्रीमान् किशनलाल जी सा ललवाणी के यहाँ मातुश्री ईचरज बाई की कुक्षि से हुआ। प्रारभ से ही आप धर्मानुरागी, सत-सेवा-परायण एव परम गुरुभक्त रहे हे । आपकी धर्मशीला श्रीमती चचलदेवी जी भी आपकी प्रत्येक सत्प्रवृत्ति में सहयोगी समाज-सेवा के क्षेत्र मे अग्रणी हे ।

आपके पुत्र श्रीमान् ज्ञानचद जी ललवाणी एक योग्य, होनहार व कर्मठ समाज-युवक है जो बम्बई मे व्यवसायरत हे । आपकी धर्मपत्नी श्रीमती सुशीलादेवी जी भी प्रज्ञासम्पन्न, जागरूक महिला हे । पौत्र श्री हितेशकुमार एव पौत्री सुश्री अकिता भी प्रतिभाशाली व विद्यानुरागी ह जिनसे धर्म व समाज को अनेक आशाए ह ।

आपके तीन पुत्रिया हे - श्रीमती ललितादेवी जी चौधरी, श्रीमती कान्तादेवी जी बेताला एव श्रीमती मजूबाई जी साखला जो सुयोग्य, सुसस्कार समन्न सुश्राविकाए हे । आपके तीनो दामादो - श्रीमान् अशोककुमार जी सा का पोरुर (चैन्नै) मे, श्रीमान् विमलचद जी सा का सुरत मे व श्रीमान् मदनलाल जी सा का बम्बई मे व्यवसाय हैं जो अपनी प्रामाणिकता के लिए सुप्रसिद्ध ह ।

माधुर्यपूर्ण, मिलनसार स्वभाव के धनी श्रीमान् सुवालाल जी सा ललवाणी का सम्पूर्ण परिवार आदर्श, श्रद्धाशील, उत्तम सस्कार सम्पन्न व धर्मनिष्ठ है । प्रस्तुत प्रकाशन मे आपका उदार सहयोग प्राप्त हुआ है, अत हार्दिक साधुवाद ।

श्रीमान् सुवालाल जी सा. ललवाणी
मेड़तासिटी - जिला नागौर

श्रीमती चंचलबाई जी ललवाणी
धर्मपत्नी श्रीमान् सुवालाल जी सा. ललवाणी
मेड़तासिटी - जिला नागौर

ज्ञानियो ने कहा है कि "व्यक्ति की महत्ता इसी मे है कि वह सत्य का अनुसरण करता है, जो अन्दर और बाहर के सभी प्रलोभनो का प्रतिरोध करता हे एव सद्‌भावना, सहयोग, उदारता व निर्मलता की भावनाए जिसके हृदय मे अठखेलिया करती है ।"

प्रस्तुत कसोटी पर यदि हम मेडता निवासी श्रेष्ठिवर्य सुश्रावक श्रीमान् सुवालाल जी सा ललवाणी के जीवन को परखते हैं तो उनके जीवन मे सर्वत्र सरलता, उदारता व व्यवहारगत मधुरता ही दृष्टिगत होती है । आप एक श्रद्धाशील सुश्रावक है, उदारता के धनी ह तथा भौतिकता के आकर्षण से परे रहकर आध्यात्मिक जीवन जीनेवाले धर्मनिष्ठ महानुभाव हैं ।

आपका जन्म शुभमिति श्रावण सुदी ११ सम्वत् १९९६ को धर्मप्रेमी सुश्रावक श्रीमान् किशनलाल जी सा ललवाणी के यहॉ मातुश्री ईचरज बाई की कुक्षि से हुआ। प्रारभ से ही आप धर्मानुरागी, सत-सेवा-परायण एव परम गुरुभक्त रहे है । आपकी धर्मपत्नी धर्मशीला श्रीमती चचलदेवी जी भी आपकी प्रत्येक सत्प्रवृत्ति में सहयोगी वनकर समाज-सेवा के क्षेत्र मे अग्रणी है ।

आपके पुत्र श्रीमान् ज्ञानचद जी ललवाणी एक योग्य, होनहार व कर्मठ समाज-मेवी युवक ह जो बम्बई मे व्यवसायरत है । आपकी धर्मपत्नी श्रीमती सुशीलादेवी भी प्रज्ञासम्पन्न, जागरूक महिला है । पौत्र श्री हितेशकुमार एव पोत्री सुश्री अकिता प्रतिभाशाली व विद्यानुरागी ह जिनसे धर्म व समाज को अनेक आशाए ह ।

आपके तीन पुत्रिया है - श्रीमती ललितादेवी जी चौधरी, श्रीमती कान्तादेवी वेताला एव श्रीमती मजूवाई जी साखला जो सुयोग्य, सुसस्कार समन्न सुश्राविकाए ह । आपके तीनो दामादो - श्रीमान् अशोककुमार जी सा का पोरुर (चेन्ने) मे, श्रीमान् विमलचद जी सा का सुरत मे व श्रीमान् मदनलाल जी सा का बम्वई मे व्यवसाय हें जो अपनी प्रामाणिकता के लिए सुप्रसिद्ध है ।

माधुर्यपूर्ण, मिलनसार स्वभाव के धनी श्रीमान् सुवालाल जी सा ललवाणी का सम्पूर्ण परिवार आदर्श, श्रद्धाशील, उत्तम सस्कार सम्पन्न व धर्मनिष्ठ ह । प्रस्तुत प्रकाशन मे आपका उदार सहयोग प्राप्त हुआ है, अत हार्दिक साधुवाद ।

श्रीमान् सुवालाल जी सा. ललवाणी
मेड़तासिटी - जिला नागौर

श्रीमती चंचलबाई जी ललवाणी
धर्मपत्नी श्रीमान् सुवालाल जी सा. ललवाणी
मेड़तासिटी - जिला नागौर

विषय सूची

1 एक सच्ची चाह

मध्याह्न मे सुनाई जाने वाली चरित्रकथा (धार्मिक काव्य-कथानक) का कार्यकम समाप्त हो चुका था । अधिकाश बहिने अपने घरो को लौट चुकी थी । आकाश मे आज हलके बादल छाये हुए थे । तीन चार दिन से बरसात नहीं हुई थी । कुछ बालक अपने घरो की छत पर चढकर पतगे उडा रहे थे। एक पतग अपने धागे से टूटकर स्थानक मे आ गिरी । कटी हुई पतग छत की दीवार के पास पडी थी । इसी समय एक सुन्दर सलौना बालक अपनी माँ के साथ वहाँ आया । प्रसन्न मन से उसने वन्दना की और इधर उधर देखने लगा । उसका ध्यान दूर पडी उस कटी पतग पर जाकर टिक गया । वह अब ललचाई दृष्टि से उसकी ओर देख रहा था। उसकी माँ को सकेत करते हुए धीरे-धीरे कह रहा था कि वहाँ पतग पडी है ।

माँ ने पतग की ओर देखकर कहा - शायद कट करके यहाँ गिर गई होगी।

"मैं ले लूँ इसको" वह बालक बोला ।

मेरे मुस्कराने पर उसकी माँ ने कहा - जा जा ले ले, फाडना मत। उसकी स्वीकृति मिलते ही बालक ने दोडकर पतग उठाई और जाते जाते कहने लगा महाराज सा कल मैं फिर आऊँगा । यदि कोई पतग आ जाये तो आप मेरे लिए रख लेना किसी दूसरे को मत देना । कल मैं जरूर आऊँगा । वह पतग को हवा मे लहराता हुआ स्थानक से बाहर की ओर दोडता-दोडता वहाँ से नो दो ग्यारह हो गया ।

मै उस अबोध बालक को जाते हुए देखती रह गई । आकाश मे डोलती हुई पतग अस्थिरता का बोध कराती है । व्योम के वक्षस्थल मे लहराती हुई पतग उडाने वालो एव देखने वालो के हृदय मे प्रसन्नता भर देती है, पर जब वही पतग किसी कारण से कट जाती है तब उसकी एव उडाने वाले की स्थिति क्या होती है यह एक विचारणीय प्रश्न हे । ऊपर की ओर बढती हुई पतग कटते ही अधोगति की ओर जाने लगती है । कटने के पश्चात् वह कहाँ जाकर गिरेगी, इसकी क्या गति होगी ? जमीन पर गिरेगी या किसी वृक्ष की टहनियो मे उलझकर रह जायेगी । यह उसकी नियति पर निर्भर है । जब तक वह उडाहक के अधिकार मे होती है उसका केवल एक ही रक्षक होता है मगर वही जब कटकर नीचे की ओर आती है तो हर कोई उस पर अधिकार करने की चेष्टा करता है । सुरक्षित धरती पर उतरने के पश्चात् वह फिर किसी दूसरे के हाथो से आकाश की सैर करेगी और अन्त मे तो उसे धरती पर गिरकर नष्ट होना ही है । नभ मे उसका ठहराव निश्चित नहीं होता क्योकि कहा है -

हर मौसम मे कब चलती है एक ही हवा ।
हर रोग में कब लगती है एक ही दवा ।
बदलती है दशा, बदलते हैं दिन भी यहाँ,
हर दिल से कब मिलती है एक-सी दुआ ॥

प्राणी का जीवन भी पतग जैसा ही है । जीवन मे हर क्षण आशकाओ बादल मँडराते रहते हैं । कभी भूल से चैन की सास मिली भी तो दु खो धूप उसे तुरन्त आ घेरती है । अभिशप्त जिन्दगी मे खुशी का हर क्षण पीडा पहरो मे कैद हे । एक-एक मुस्कान के पीछे सौ-सौ ऑसू पहरेदार बने बेठे ह । इस ससार में ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है, जिसे कभी दु खो ने नही सताया हो । लाखो मे कोई विरला ही ऐसा होता हे जिसके शुभकर्म ही सदेव उदय मे रहते हें । ऐसे लोगो के लिए ही किसी शायर ने कहा ह -

जिन्दगी में हमें खुशी मिली थी इतनी ।
कि कभी रोए हो यह भी याद नहीं ॥

दु खो मे जिसका जीवन डूबा हो वह सुख-शान्ति का आनन्द कैसे पा सकता है । जब भी मेरी मुस्कान के सुनहले पलो से भेट होती है तो तुरन्त अनुभव होता है कि यह मुस्कान स्थायी नहीं है । दिन का रात से, छाया का धूप से जो सम्बन्ध है वही सुखो से दुखो का है । मुस्कान के पीछे छुपी उदासी को ठुकराने का साहस कौन कर सकता है । आज तो स्थितियाँ बद से बदतर बनती जा रही है । इक्कीसवीं शताब्दी की चौखट तक आते-आते तो पनघट ने भी मरघट का रूप ले लिया है। मानव विचारो के अनचाहे बोझ को ढो रहा है । खुशी, सुख, मुस्कान और आनन्द की प्रतीक्षा मे हाथ-पॉव पटक रहा है, यही सोचकर किसी ने कहा है -

ये आशा की घड़ियाँ, तो विप्रलंभी होती हैं,
ये श्रद्धा की घड़ियाँ, प्राणों में कभी खोती हैं,
बरसती है आँखे, तुम्हें ही देखने को नित,
ये प्रतीक्षा की घड़ियाँ, सच बहुत लम्बी होती है ॥

इस ससार मे सुख की तिलमात्र भी खोज निरा पागलपन है । जो इस तथ्य को समझ लेता है भौतिकता के जाल से निकल करके अध्यात्म की भूमि पर चल पडता है । उसके लिए एकमात्र आराध्य देव-प्रभु की भक्ति का ही सम्बल रहता है । उनके दर्शन की चाह लिए वह सदेव प्रतीक्षारत रहता है। आत्मा का परमात्मा से साक्षात्कार हो जाये यही उसकी चाह होती है । पतग बनकर गिरे या पतगा बनकर जल मरे आखिर अन्त तो होना ही है, तो फिर जीवन मे वह कार्य क्यो ना करे जिससे जीवन निखर जाये । किमी महान् उद्देश्य को लेकर जीवन जीना ही प्रत्येक मानव का अन्तिम लक्ष्य होना चाहिए । यह लक्ष्य ही परम शान्ति पदान करेगा ।

2 मिच्छामि दुक्कड़म्

सूरज अपनी दिव्य किरणो को छिटकाता व्योम की सीढियाँ चढ रहा था । दैनिक कार्यो से निवृत्त होकर स्वाध्याय के लिए आसन बिछाया ही था कि एक अधेड श्राविका ने कक्ष मे प्रवेश किया । उसकी वेशभूषा, चाल ढाल एव सामायिक के उपकरणो से लगा कि वह सम्पन्न एव धार्मिक सस्कारो से ओतप्रोत है । वह सीधी मेरे समक्ष आई और मत्थएण वदामि बोलकर आसन बिछाते हुए एक दृष्टि दीवार पर लगी घडी पर डालकर बैठ गई ।

मैं उसे अपलक देख रही थी । मुख पर मुँहपत्ती लगाकर 'मिच्छामि ' का उच्चारण करके बोली - सामायिक करवाइये महाराज । मैंने अपनी ऊपर उठा करके परम्परा का निर्वाह करते हुए 'करेमि भते' के पाठ का किया । वह कुछ-क्षण चुप रही । मै अपना ध्यान स्वाध्याय हेतु पुस्तक पर केन्द्रित करने जा रही थी कि वह भद्र महिला बोली - मिच्छामि दुक्कडम् महाराज । कुछ आहार लिया ?

'आज उपवास है ।'

'मिच्छामि दुक्कडम् महाराज । आप कहाँ से पधारे हे ?'

'चित्तोड की ओर से आ रहे हैं ।'

'मिच्छामि दुक्कडम् महाराज । आगे कहाँ पधारेगे ?'

मैंने मन ही मन विचार किया - आज तो हो गया स्वाध्याय । स्वय को सहज बनाकर कहा - नीमच की ओर जाने की भावना है ।

'मिच्छामि दुक्कडम् । यहाँ कितने सती जी आये हैं ?'

'हम पाँच है । आप बार-बार मिच्छामि दुक्कडम् का उच्चारण क्यो करती है ?' इस बार पश्न मैंने उछाल दिया था ।

'मानव स्वभाव है, सत्य, असत्य मुख से निकल सकता है, असत्य उच्चारण से पाप लगता है, कर्मबन्धन होते हैं, इससे बचने के लिए मैं मिच्छामि दुक्कडम् बोल लेती हूँ ।'

ठीक है, अब आप मौन धारण कर सामायिक करे, मैं भी स्वाध्याय कर लेती हूँ । आप चाहेगी तो हम फिर बात कर लेगे ।

वह अब कुछ नहीं बोली मेरे मानस का सागर हिलोरे लेने लगा । आँखे पुस्तक पर गडी थी मगर मन मे ज्वार उठ रहा था । मैं सोच रही थी - क्या पाप का रग इतना कच्चा है जो मात्र मिच्छामि दुक्कडम् के उच्चारण से ही उतर जायेगा।

शास्त्रो के अध्ययन से महापुरुषो ने कर्मबन्धन की तीन कोटियाँ वताई हे- स्पृष्ट, बद्ध एव निकाचित । जो कर्म आत्मा का केवल स्पर्श करते हैं वे अनुतापपूर्वक मिच्छामि दुक्कडम् से दूर हो सकते हैं । बद्धकर्म जप, तप एव धर्मसाधना से निर्जरित होते हैं । जो कर्म निकाचित रूप मे वध जाते हैं उन्हे तो जीवात्मा को भोगना ही पडता है ।

आज का मानव यथार्थ से भटक गया है । वास्तविकता से कोसो दूर जा चुका हे । धर्म क्रियाएँ ओपचारिक वनकर रह गई हैं । क्या यह युग तीर्थकरो की वाणी का अनुसरण कर रहा है ? सुख मे सत्य एव शास्त्रो की वाते स्मरण रहती ह पर तनिक वाधा मानव को राजपथ से विचलित कर गन्दे गलियारो मे भटकने को विवश कर देती हे । रास्ते अपनी जगह कायम हैं मगर पथिक उनसे हट गया ह । पथ भ्रमित को अपनी मजिल कैसे मिल सकती है ?

आज हर व्यक्ति को दूसरे के कार्य मे हस्तक्षेप की आदत हो गई हे। स्वय के लिए भी चिन्तन करना चाहिए । प्रतिक्रमण कर्म निर्जरा का माध्यम है। प्रतिदिन विधिपूर्वक अन्तर्हृदय से प्रतिक्रमण किया जाये, व्रतो मे लगे अतिचारो की जागरूकता से आलोचना की जाये तो कर्मभार वढता नहीं है । आज की भूल भविष्य मे न हो तभी प्रतिक्रमण की सार्थकता है । सत्य को समझकर सत्पथ के पथिक बने ।

मै विचार तरगो मे डुबकियाँ लगा रही थी कि वह महिला बोल उठी- मिच्छामि दुक्कडम् महाराज । एक सामायिक पूरी हो गई हैं ।

एक क्षण उसकी ओर देखकर कहा - हाँ हो गई है, अव क्या विचार है ?

'सोचती हूँ एक सामायिक और ले लूॅ, पर मिच्छामि दुक्कडम् महाराज। अधिक देर तक बैठने पर मेरी पीठ मे दर्द होने लगता है ।'

'ठीक है बाद मे ले लेना ।'

'मिच्छामि दुक्कडम् महाराज । बहू घर पर अकेली है । वह न जाने क्या कर रही होगी । एक बार घर का चक्कर लगा आती हूँ फिर वापिस आकर ...यिक ले लूँगी । आप मगल पाठ सुना दीजिए ।'

मगल पाठ सुन करके वह सामायिक के उपकरण वहीं दीवार के सहारे रखकर बोली - मिच्छामि दुक्कडम् महाराज । ये सामायिक के उपकरण यहीं पडे हें । मैं जल्दी ही आ जाऊँगी ।

मैं उसे जाते हुए देख रही थी । मेरे कानो मे एक ही वाक्य गूज रहा था- मिच्छामि दुक्कडम् - मिच्छामि दुक्कडम् ।

❀ ❀ ❀

3 साधना बनाम समता

एक ओर सम्पूर्ण राष्ट्र स्वतत्रता दिवस मनाने की पूर्व तैयारी कर रहा था । राष्ट्रीय पर्व की यह उमग विद्यालय के छात्रो मे विशेष दिखाई दे रही थी । वहीं दूसरी ओर आध्यात्मिक जगत मे पर्वराज पर्युषण का पदार्पण हो गया । वह अपने साथ सभी के लिए प्रेरणापद उपहारो की झोली भर कर लाया था । श्रावक एव श्राविकाओ मे नया उत्साह था । बालक एव युवावर्ग भला कैसे पीछे रहता । वे भी पर्वराज की आराधना हेतु साधना करने को तत्पर हो रहे थे । श्रद्धालुवर्ग जप, तप, ध्यान और स्वाध्याय-साधना मे आकण्ठ निमग्न होने को उद्यत हो उठा ।

सभी श्रद्धालु स्थानक भवन मे धार्मिक उपकरणो के साथ सज धज कर आ रहे थे । पवचन स्थल पर तपस्वियो की अद्‌भुत छटा बिखरी हुई थी । आने वालो मे एक धर्मात्मा कहलाने वाली महिला भी उतावले कदमो से चलते हुए वहाँ आई । उसके हाथो मे जो सामान था उसे देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता था कि वह बहिन शायद दस-बीस दिन के प्रवास पर घर से निकल कर यहाँ आई है । स्थानक के एक भाग मे अपने सामान की पिटारी खोलकर वह रख चुकी थी। उस सामान मे चार-पॉच ड्रेस कपडे, तेल, साबुन, मुखशुद्धि की वस्तुएँ तथा अन्य दैनिक आवश्यकताओ की पूर्ति के समस्त साधनो को वह घर से लेकर चली थी ताकि किसी बात की कोई परेशानी अनुभव नहीं हो । स्थानक

मे आते ही कुछ दिनो पूर्व ही रख छोडे शय्या के साधन - दरी, चादर आदि को वह इधर उधर ढूँढने लगी। एक कक्ष से दूसरे कक्ष मे वह बेचैनी से घूमने लगी । शनै शनै उसके रक्त प्रवाह की गति मे तीव्रता आती जा रही थी ।

अन्य श्राविकाएँ चुपचाप अपने स्वाध्याय, सामायिक में लगी हुई थी । उसके चेहरे पर लाली दौडने लगी । इधर उधर ढूँढते हुए मानो उसके होश ही गुम हो रहे थे । पाँवो की गति अब मद पड गई मगर जिह्वा मे तेजी आ गई। मुँह से वह कुछ न कुछ बोले जा रही थी । वहाँ सिर्फ उसी का स्वर सुनाई दे रहा था । उसके तीव्र स्वर की गूँज मेरे तक पहुँच रही थी । मेने बाहर निकल कर पूछा - क्या बात है ?

मेरी बात सुनकर एक बहिन ने कहा - महाराज श्री । इनका बिस्तर नहीं मिल रहा है ।

'कब लेकर आये थे ?'

इन्होने महिने भर पहले ही यहॉ रख छोडा था । आज शाम को उसकी जरूरत पडेगी इसलिए ढूँढ रही हैं ।

अरे । इसमे इतना परेशान होने की क्या आवश्यकता है ? इधर-उधर । गया होगा । अभी मिल जायेगा, यो दूसरो पर दोषारोपण करने से क्या फायदा।

वह मेरे समीप आकर बोली - महाराज । मेने यहीं पर बिस्तर रखे थे। आप यहीं पर रहते हे, कुछ तो आपको भी ध्यान रखना चाहिए । वह बडबडाती हुई अपने सामान को समेटने लगी ।

अरे, कुछ धर्य रखो, तुम्हारा बिस्तर कहीं नहीं जायेगा । हाँ ऊपर-नीचे हो सकता हे । अभी शान्ति से बेठो, मिल जायेगा । जिस उद्देश्य को लेकर आप यहॉ आई हें उसकी पूर्ति हेतु तत्पर हो जाओ । आज पर्व का दिन हे, तनावमुक्त होकर धर्माराधना मे लग जाओ । यह कहकर मे वहाँ से उठकर कक्ष

मे चली आई। उसकी चीख पुकार से मेरे सिर मे वेदना हो गई मगर मैं चुपचाप अपने आसन पर बैठकर विचार करने लगी कि क्या तथाकथित धार्मिको का यही स्वरूप है । अनुकूल परिस्थिति मे सागर के समान गभीर दिखाई देते हैं मगर तनिक सी अनचाही बात होने पर उनकी शान्ति का सुरक्षा कवच फट जाता है। अन्तर्मन के उदधि मे चक्रवात पैदा हो जाता है । अनुस्रोत मे तो कमजोर से कमजोर भी आगे बढने की हिम्मत कर लेता है मगर प्रतिस्रोत मे आगे बढने वाले बिरले ही होते हैं ।

इस बहिन ने धार्मिक अनुष्ठानो मे आधी शताब्दी व्यतीत कर दी होगी मगर आज भी साधना के रहस्यो से यह अपरिचित ही है । इस जगत मे लाखो लोग इसी के समान है । वे सिर्फ दिखावे के लिए धार्मिक होने का ढोग करते हैं । वास्तविकता जब सामने आती है तब ससार को उनकी सत्यता का ज्ञान हो जाता है । काश ! ये भगवान महावीर के सिद्धान्तो को समझकर आत्मसात् करते तो क्रोध की झलक चेहरे पर प्रकट नहीं होती । प्रसन्नता के स्थान पर इसके मन मे तनाव भर गया है। महापुरुष तो निज देह के प्रति भी मोह नहीं रखते मगर यहाँ तो इन्होने दरी एव चादर को जी का जजाल बना लिया है । ऐसे लोग क्या स्वाध्याय, सामायिक एव साधना कर सकेगे । इन्हे देखकर लगता हे कि आत्मस्थ होना इनके वश की बात नहीं है । साधना मे सलग्न मानव को तो चाहिए कि वह ससार व सासारिकता की आसक्ति का त्याग कर दे । आत्मा मे रमण करने से ही सच्चे आनद की अनुभूति होगी । पर्वराज की पावन वेला मे विकारो को दूर करके चेतन को जाग्रत करने की जरूरत हे । जिसने अपने मन को चेतना की ओर अग्रसर कर दिया वही सच्चा धार्मिक है । समय रहते हम सत्य को जानें । तनावो से निकलकर धैर्य धारण करके आत्मलोक मे विचरण करे तभी जीवन मे शान्ति सभव हे ।

❀ ❀ ❀

5 करुणा सागर गुरुदेव

स्थानक मे आज विशेष ही हलचल थी । एक ओर जहाँ पर्वराज पर्युषण की आराधना हो रही थी वहीं प्राज्ञ गुरुदेव श्री पन्नालाल जी महाराज श्री की जयन्ती का पसग था । गुरुदेवश्री की जयन्ती का पावन प्रसग मेरे मन मे आह्लाद पेदा कर रहा था । वे जेन जगत मे तपोनिष्ठ साधक, युग-प्रणेता एव विलक्षण पतिभा के धनी सन्त थे । भौतिक देह से वे दशको पूर्व ऑखो से ओझल होकर भी आज तक भक्तो के हृदय मे विराजमान हैं । आज उनकी जयन्ती है इसलिए उनकी स्मृति हो आई हो ऐसा नहीं है । श्रद्धालु जन तो उन्हे प्रतिदिन स्मरण करके अपने जीवन को सफल बनाते हैं । प्रत्येक परिस्थिति मे उस महान् आत्मा का स्मरण करने वाला स्वय को सौभाग्यशाली समझता है ।

आज प्रत्येक श्रावक-श्राविका के मुख पर गुरुदेव श्री का नाम था । तप-त्याग पूर्वक गुरुदेव के व्यक्तित्व एव कृतित्व को स्मरण करते हुए यह जयन्ती मनाइ गइ । गीत, कविता एव उनके जीवन के सस्मरणो की वहती धारा मे श्रोता डूब से गये । सचमुच ऐसे महान् सन्तो का आविर्भाव इस धरती के पुण्य जागने पर ही होता हे । नानकवश के उस उज्ज्वल नक्षत्र की कीर्ति पताका जन-मन म अहनिश फहरती रही ह आर भविष्य मे भी फहरती रहेगी । वे सच्चे धमगुरु थे । धमगुर के पद को सवत्र महत्त्वपूर्ण स्थान पदान किया गया ह । गुर के

प्रिय पुत्री को छुआ तो वह भी सोने की गुडिया बन गई । आखिर उसे अपनी भूल का अहसास हुआ और उसने देवी की आराधना करके कहा कि मुझे यह वर नहीं चाहिए, मुझे पहले जैसा ही बना दो । उसे अपनी तृष्णा का परिज्ञान हो गया था कि जीवन मे सोना ही सब कुछ नहीं हे ।

एक ऐसी ही दूसरी बात याद आ गई । एक पति-पत्नी निस्पृह भाव से युक्त थे । एक दिन सन्तदर्शन को जा रहे थे । पति आगे था पत्नी दस-बीस कदम पीछे थी । पति को स्वर्ण हार रास्ते मे पडा मिला तो उसने सोचा-यदि उसकी पत्नी ने इसे देख लिया तो उसका मन इसे लेने को ललचा जायेगा। वह नीचे बैठकर उस हार को मिट्टी मे दबाने लगा तभी पत्नी उसके पास पहुँच गई । उस हार को उसने देख लिया था । वह पति से भी पॉच कदम आगे नि स्पृह भाव मे पहॅुच चुकी थी । उसने पति से कहा - स्वामी । आप व्यर्थ श्रम क्यो कर रहे हो, इस मिट्टी पर मिट्टी डालने की क्या जरूरत हे । पति अपनी पत्नी के मुख से यह बात सुनकर बिना प्रत्युत्तर दिये आगे बढ गया । वह सोचने लगा कि सोने के प्रति राग मुझमे ही पैदा हुआ हे । मेंने मन ही मन उसका मोल और महत्त्व जाना है ।

धन्य हे उस बहिन को जिसने पर्वराज की आराधना को सत्य साबित कर दिया । दूसरो की वस्तु पाकर उसके मन मे तनिक भी विकार उत्पन्न नहीं हुआ और तत्क्षण आवाज लगाकर उस अँगूठी को उसकी वास्तविक मालकिन तक पहॅुचा दिया । ऐसे भावो को हृदय मे धारण करने वाले ही सच्चे धार्मिक एव श्रद्धालु हें । पर्वराज पर्युषण सभी के मन को शुद्ध बनाये । शुद्ध मन से ही इस जीवन का कल्याण सम्भव होगा । पर्वराज पर्युषण की पावन वेला मे प्रत्येक मानव अपना अन्त करण निर्द्वन्द्व एव निर्मल बनाये तो उत्तम ह ।

❀ ❀ ❀

प्रिय पुत्री को छुआ तो वह भी सोने की गुडिया बन गई । आखिर उसे अपनी भूल का अहसास हुआ और उसने देवी की आराधना करके कहा कि मुझे यह वर नहीं चाहिए, मुझे पहले जैसा ही बना दो । उसे अपनी तृष्णा का परिज्ञान हो गया था कि जीवन मे सोना ही सब कुछ नहीं है ।

एक ऐसी ही दूसरी बात याद आ गई । एक पति-पत्नी निस्पृह भाव से युक्त थे । एक दिन सन्तदर्शन को जा रहे थे । पति आगे था पत्नी दस-बीस कदम पीछे थी । पति को स्वर्ण हार रास्ते मे पडा मिला तो उसने सोचा-यदि उसकी पत्नी ने इसे देख लिया तो उसका मन इसे लेने को ललचा जायेगा। वह नीचे बैठकर उस हार को मिट्टी मे दबाने लगा तभी पत्नी उसके पास पहुँच गई । उस हार को उसने देख लिया था । वह पति से भी पाँच कदम आगे निःस्पृह भाव मे पहुँच चुकी थी । उसने पति से कहा - स्वामी ! आप व्यर्थ श्रम क्यो कर रहे हो, इस मिट्टी पर मिट्टी डालने की क्या जरूरत हे । पति अपनी पत्नी के मुख से यह बात सुनकर बिना प्रत्युत्तर दिये आगे बढ गया । वह सोचने लगा कि सोने के प्रति राग मुझमे ही पेदा हुआ हे । मने मन ही मन उसका मोल और महत्त्व जाना है ।

धन्य हे उस बहिन को जिसने पर्वराज की आराधना को सत्य साबित कर दिया । दूसरो की वस्तु पाकर उसके मन मे तनिक भी विकार उत्पन्न नहीं हुआ और तत्क्षण आवाज लगाकर उस अँगूठी को उसकी वास्तविक मालकिन तक पहुँचा दिया । ऐसे भावो को हृदय मे धारण करने वाले ही सच्चे धार्मिक एव श्रद्धालु हैं । पर्वराज पर्युषण सभी के मन को शुद्ध बनाये । शुद्ध मन से ही इस जीवन का कल्याण सम्भव होगा । पर्वराज पर्युषण की पावन बेला मे प्रत्येक मानव अपना अन्त करण निर्द्वन्द्व एव निर्मल बनाये तो उत्तम ह ।

❀ ❀ ❀

5 करुणा सागर गुरुदेव

स्थानक मे आज विशेष ही हलचल थी । एक ओर जहाँ पर्वराज पर्युषण की आराधना हो रही थी वहीं प्राज्ञ गुरुदेव श्री पन्नालाल जी महाराज श्री की जयन्ती का पसग था । गुरुदेवश्री की जयन्ती का पावन प्रसग मेरे मन मे आह्लाद पेदा कर रहा था । वे जेन जगत मे तपोनिष्ठ साधक, युग-प्रणेता एव विलक्षण पतिभा के धनी सन्त थे । भौतिक देह से वे दशको पूर्व आँखो से ओझल होकर भी आज तक भक्तो के हृदय मे विराजमान हैं । आज उनकी जयन्ती है इसलिए उनकी स्मृति हो आई हो ऐसा नहीं है । श्रद्धालु जन तो उन्हे प्रतिदिन स्मरण करके अपने जीवन को सफल बनाते हैं । पत्येक परिस्थिति मे उस महान् आत्मा का स्मरण करने वाला स्वय को सौभाग्यशाली समझता है ।

आज प्रत्येक श्रावक-श्राविका के मुख पर गुरुदेव श्री का नाम था । तप-त्याग पूर्वक गुरुदेव के व्यक्तित्व एव कृतित्व को स्मरण करते हुए यह जयन्ती मनाई गई । गीत कविता एव उनके जीवन के सस्मरणो की वहती धारा मे श्रोता डूब से गये । सचमुच ऐसे महान् सन्तो का आविर्भाव इस धरती के पुण्य जागने पर ही होता है । नानकवश के उस उज्ज्वल नक्षत्र की कीर्ति पताका जन-मन मे अहर्निश फहरती रही है और भविष्य मे भी फहरती रहेगी । वे सच्चे धर्मगुरु थे । धर्मगुरु के पद को सर्वत्र महत्त्वपूर्ण स्थान पदान किया गया है । गुरु के

ज्ञान की निर्मल-धवल ज्योत्स्ना तो मन को प्रतिपल आह्लादित करती रहती है । धर्मगुरु ससार के सभी बन्धनो से मुक्त होने का उपाय बता मकते हे । यदि सद्गुरु का अनुग्रह मिल जाये तो भवोदधि का किनारा मिलना कठिन नही है ।

ससारी अपना जन्मदिन भौतिकता की चकाचोध मे मनाते हैं । मित्रो को सहभोज का निमत्रण दिया जाता है । जन्मदिन की खुशी मे बडे-बडे उपहारो का आदान-प्रदान होता है, लेकिन त्यागियो का जन्म दिन त्याग के साथ ही मनाया जाये तो और भी खुशी होती है । आज सब अनन्त आस्था के साथ गुरुचरणो मे त्याग की भेट समर्पित करते हुए अपने मे समाहित बुराइयो को तिलाजलि देने का सकल्प लेने को आतुर थे । महापुरुषो के बताये पथ पर चलने वाले का अवश्य कल्याण होता है । प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से गुरुजनो का आशीर्वाद हर पल श्रद्धालुओ के साथ रहता है ।

गुरुदेव श्री का व्यक्तित्व अनुपम था । एक बार जो उनके दर्शन कर लेता वह सदैव के लिए उस महान् सन्त का पुजारी बन जाता । वे करुणा, दया, प्रेम व परोपकार के सागर थे । आत्मा मे परमात्मस्वरूप के दर्शन हेतु उन्होने सर्वप्रथम श्रद्धालुओ के हृदय मे स्वाध्याय का दीप जलाया । वे कहा करते थे ~, स्वाध्याय से सदैव ज्ञान की प्राप्ति होती है, चित्त मे एकाग्रता आती हे, समाधि शान्ति की स्थापना होती हे । इस हेतु वे सभी को प्रेरणा प्रदान करते रहते । इस असार ससार मे आकर वे जिनवाणी के गायक बनकर स्वाध्याय की वीन वजाकर सदा-सदा के लिए अपनी अमर धुन गुजा गये । उनका दिव्यनाद आज भी कण-कण मे अपनी मधुर रसधार बन करके अहर्निश वह रहा ह ।

स्व कल्याण हेतु उन्होने श्रमण मार्ग म्वीकार किया ही था मगर इम माग पर चलते हुए वे पर कल्याण से कभी विमुख नही हुए । राष्ट्र पर जब जब कोई प्राकृतिक विपत्ति आई, विदेशी हमलावरो ने भारत की म्वतत्रता पर कुठाराघात

करने की चेष्टा की गुरुदेव श्री ने अपने पेरणादायक उद्बोधन से जनता मे नई चेतना फूकी । राष्ट्रधर्म की महिमा बताकर एक राष्ट्रीय सन्त की गौरवमय परम्परा का निर्वाह किया । वे सकीर्णता के घेरे से सदैव मुक्त रहे । उनके पास जैनी तो आते ही थे मगर अन्य धर्मावलम्बी भी दर्शन एव प्रवचन श्रवण कर स्वय को सौभाग्यशाली समझते थे । करुणा सागर गुरुदेव मे आत्मबल का अद्भुत समावेश था । मनुष्य की हो या पशु की, उन्होने हिसा का सदैव पतिरोध ही किया । हिसा चाहे वचन से हो या तलवार से, दोनो ही अकरणीय है । वे दीनो के मसीहा बनकर अवनी पर उतरे थे । दीनो के पति प्रेम भाव देखकर ही लोग आज भी श्रद्धा भाव से कहते है -

पूज्य प्रवर्तक दीन दयाल ।
धन्य धन्य गुरु पन्नालाल ॥

उस महान् सन्त रत्न का स्मरण करने वाला मानव पुण्य का अर्जन करता है । उनकी शिक्षाओ को अगीकार करने वाला दु खो एव दुर्गुणो का विसर्जन करता है । गुरुदेव तो गुणो के अथाह सागर थे, शब्दो की किश्ती मे उन गुणो को उतारना अत्यन्त दुरुह कार्य है । नम्रता, निर्मलता, सरलता की पावन त्रिवेणी के उन्नायक का नाम जितनी बार लिया जाये वह थोडा ही है । गुरुदेव श्री के लिए आज सिर्फ यही कह सकते हैं कि -

वे नही पर कार्य उनके बोलते हैं ।
ले नाम उनका हम सुधा रस घोलते है ॥
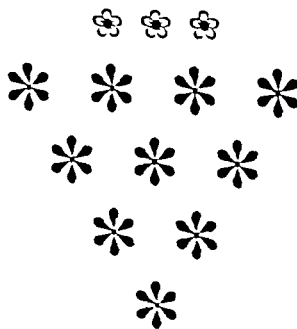
6 मन का मरहम

प्रवचन के पश्चात् गोचरी लाकर आहार-पानी लेते हुए दोपहर की बारह बज चुकी थी । आकाश मे चमकते सूर्य मे अत्यधिक तेज था । सूर्य की प्रखर ऊष्मा मई-जून के मौसम का स्मरण करा रही थी । मैं अलसाई मुद्रा मे बेठी आकाश मे श्वेत बादलो के टुकडो को देख रही थी । श्वेत बादल का टुकडा ऐसे लग रहा था मानो कोई हस अपनी टोली मे बिछुडकर अकेला ही उडा जा रहा हो । गर्मी बहुत तेज होने के कारण छाया मे भी धूप का अहसास हो रहा था । शारीरिक क्षीणता से अपने कार्य के प्रति शिथिलता अनुभव कर रही थी । एक स्थान पर अधिक देर तक बैठना मेरे लिए असह्य हो जाता था, फिर भी मन को मजबूत करके कम ही सही अपने नियमित स्वाध्याय मे विघ्न उत्पन्न हीं करना चाहती थी । शारीरिक अस्वस्थता के पश्चात् भी म चुपचाप 'स्वाध्याय ेर' मे अपनी दृष्टि गडाये, पढ रही थी। उसी समय एक परिचिता ने कक्ष मे प्रवेश किया।

म कुछ पल उसे देखती रही । उसका गोर-वर्ण, सुगठित शरीर, आकर्षक व्यक्तित्व, आनुपातिक देहयष्टि उसके भाग्य का दिग्दर्शन कराने मे पयाप्त थे । उसके शारीरिक सान्दर्य को आभूपणो एव वेशभूषा ने द्विगुणित कर दिया था । वह विधिवत् वन्दना करके सामने बठ गइ । चेहरे पर स्वेद कण झलक रहे थे। रुमाल से चेहरे का स्वेद पोछकर वह बोली - आप कसे हें महाराजश्री ?

मैंने हास्य मिश्रित शिकायत के स्वर मे कहा - अरे । तुम तो ईद का चाँद बन रही हो । महाराज की सुधि आज कैसे आ गई । बोलो आज कितने दिनो मे आई हो । पर्युषण के बाद क्या कहीं बाहर चली गई थी ?

मेरी बात उसके हृदय को छू गई, उसकी आँखो मे अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी । मुझे लगा शायद मैंने कुछ भूल कर दी हो । अरे । क्या बात है? ये आँसू तुम्हे शोभा नहीं देते, कहो क्या बात है ?

'महाराजश्री । मेरा मन बडा अशान्त है । मै आपसे अपने जीवन हेतु शान्ति का मत्र लेने आई हूँ । इन दिनो मै अत्यधिक परेशान हूँ ।'

मैं उसके मुख से यह बात सुनकर के मन ही मन चौक उठी । जिसे मैं हर पकार सुखी, सम्पन्न एव आनन्द मे समझ रही थी वह भी अपने भीतर पीडा की घटाओ को छिपाये बेठी है, इसका मुझे आज आभास हो रहा था । मैं जिसे अब तक अक्षय चैन की चादर मे लिपटी हुई समझ रही थी, आज उसने जब विलखते हुए मन की पीडा को उजागर किया तो मेरी वर्षो की धारणा लुप्त हो गइ । मैंने कहा - में तो आज तक तुम्हे हर तरह से सुखी समझ रही थी मगर तुम्हारे मन मे भी पीडा का दरिया छुपा हुआ है, उसे आज देख रही हूँ ।

आप जो कुछ समझ रहे थे अभी तक तो सब कुछ वैसा ही था मगर कुछ दिनो से मेरे मन मे फूस सी आग जल रही है । न मुझसे रोते हुए वनता र न हसते हुए जीया जाता हे । छोटी सी वात को लेकर मेरे ससुराल वालो न अपने मुख से कुछ ऐसी वात उगल दी कि मेरे पीहर वालो ने मुझसे ही आँखे फेर ली हे । मेरा मन टूट सा गया हे । मेरी माँ जिसने मुझे फूलो की तरह पाल पोष कर वडा किया वह भी मुझमे वात नहीं करती हे । पीहर जाने पर कोई मुझे देखकर पसन्न नहीं होता । दस दिन पूर्व मेरा मुन्ना अस्वस्थ हो गया मगर मेरी माँ भाई किसी ने भी आकर यह भी नहीं पूछा । अव

उसका स्वास्थ्य कैसा है । इस बात को लेकर मेरे परिवार वाले भी मुझ पर व्यग्य करते हैं कि तुम पीहर वालो का बडा दभ भरती थी, उनका प्यार कितना है अब तो तुमने देख ही लिया । तुम्हारे समाचार भेजने पर भी कोई नहीं आया है ।

मै चुपचाप उसकी पीडा का रोना सुनती रही । आँखो से आँसू छलका कर उसे कुछ राहत महसूस हुई थी । अपनी व्यथा कथा सुनाकर वह लौट गई । मैं सोचने लगी - आज घर परिवार, समाज ही नहीं इस सम्पूर्ण विश्व मे सद्व्यवहार मे कमी होती जा रही है । हसी मजाक मे मुह से गलत बात का निकलना कितना जहर घोल देता है । एक कवि ने कहा भी है -

जो घाव लगे तलवारों के, वे मरहम से भर जाते है ।
जिह्वा से जो भी घाव बने, वे कभी नहीं भर पाते हैं ॥

इस ससार मे कब, क्या बात मुँह से कहनी चाहिए इस पर ध्यान देना बहुत जरूरी है । मानव को सदैव सोच समझकर ही बोलना चाहिए । पढने से ज्यादा सोचने की जरूरत है, सोचे हुए को कम शब्दो मे समझपूर्वक बोलने की आवश्यकता है । हित और मित बोलने वाले सभी के प्रिय होते हें । आज हर और जो कलह का वातावरण बन रहा हे उसका कारण यही हे कि मनुष्य को बोलने का ध्यान नहीं रहता । इसीलिए तो व्यग्यकार ने अपनी बात रखते ए कहा है -

हुआ वही जो होना था,
हँस दिये वहाँ जहाँ रोना था ।

हमे अपने आस-पास का वातावरण प्रेम एव माहार्द्रपूर्ण बनाये रखने हेतु सदेव मधुर वाणी से अपनी वात कहना चाहिए, इससे घर परिवार एव ममाज मे आपसी सम्बन्ध भी सदेव मधुर वने रहते ह ।

7 राम-भरत मिलन

पर्वराज पर्युषण की आराधना सानन्द सम्पन्न हुई । सभी श्रावको के चेहरो पर पसन्नता झलक रही थी । रात्रि से ही क्षमायाचना का दौर प्रारम्भ हो चुका था। क्षमा याचना का उद्देश्य लेकर के सैकडो नर-नारी स्थानक मे आ जा रहे थे । वे सभी जाने अनजाने मे हुई अपनी भूलो एव अपराधो के लिए अन्त करण से क्षमा माग रहे थे । हमने भी सभी श्रावक-श्राविकाओ से विगत मे हुई भूलो के लिए क्षमा याचना की ।

क्षमा का यह पर्व ग्राम-नगर सहित सारे राष्ट्र मे मनाया जाता है । घर, परिवार मित्र एव सम्वन्धियो को तार, पत्र एव दूरभाष के माध्यम से भी क्षमापर्व पर क्षमा पदान करने की भावना पकट की जाती रही है । लोग समूह बनाकर नन्त दर्शन हेतु पत्यक्ष उपस्थित होकर पर्व की महत्ता प्रकट कर रहे थे ।

आज मध्यपदेश मे रहने वाले एक भाई भी आये । दर्शन वन्दन के पश्चात् परिचय हुआ । उनका स्वाध्याय एव चिन्तन जानकर मन मे अति प्रसन्नता हुई। वहुत देर तक पर्युषण एव क्षमापर्व पर धार्मिक चर्चा हुई । मैं उनके सभी प्रश्नो का समाधान करती गई । वे वहुत खुश थे । अपनी गाडी का समय होता देखकर उन्होने विदा स्वरूप मागलिक प्रदान करने को कहा । मागलिक श्रवण करने के पश्चात् वोले - महाराजश्री । आपका पता क्या है ?

मेने चातुर्मास का वर्तमान पता उनको बता दिया । वे पुन वन्दन करके वहाँ से निकल गये । वे चले गये किन्तु चिन्तन की पताका उनके जाने के बाद मेरे मन मे लहरा उठी । मे मन ही मन मुस्कराती हुई सोचने लगी - साधु-साध्वी का क्या पता होता है ? मेरे स्मृति पटल पर कुछ पक्तियाँ उभर आई-

पता क्या खाक बतलाएं, मकाँ है बे निशा अपना ।
लगाया जिस जगह बिस्तर, वही समझो मकाँ अपना ॥

सच पूछा जाये तो अपना कोई स्थायी पता नही है । सन्त-सतियो का स्थायी निवास ही नही हे तो भला पता कैसे हो सकता है । वे तो अप्रमत्त विहारी होते है । सयम एव त्याग का जीवन स्वीकार करने के पश्चात् ससार मे कोई ऐसी प्रीति नहीं रह पाती, जहाँ टिककर स्थायी रूप से रहा जाये । हर समय आत्म साधना का लक्ष्य बनाकर चलने वाले साधना के अनुकूल स्थान की तलाश करते रहते है । एक स्थान पर टिक कर रहने से उस स्थान एव सहयोगी श्रावको के प्रति मोह जाग्रत हो सकता है । मोह को ही सभी दु खो का मूल माना गया है । मोह को एक बार तोड दिया है तो पुन जोडने की कहाँ जरूरत ह । साधना के पथिक को रहना इसी ससार में ह । समस्त प्राणियो से उसका मत्री भाव हे । उसका अपना कुछ नहीं होते हुए भी सव कुछ उसका अपना होता हे । यही सोचकर तो किसी साधक ने ही कहा होगा -

ना ये जमी हमारी, ना आसमाँ हमारा ।
रहने को घर नहीं पर, सारा जहाँ हमारा ॥

मे इन पक्तियो को गुनगुनाती हुई चिन्तन के हिण्डोले मे झूल रही थी कि कुछ भाई-वहिन क्षमा याचना हेतु आ गये । उन्होने परम्परा की औपचारिकता का निर्वाह किया । वहाँ उपस्थित सभी भाई-वहिन जीवन मे पहली बार मिले थे । भूल या अपराध होने का प्रश्न ही उपस्थित नही होता, मगर क्षमा भाव दोनो ओर से प्रकट किया गया । वे वस लेकर आये थे । आस पास के क्षेत्रो मे जहाँ भी सन्त-सती ह उनके दर्शन-वन्दन करके क्षमा भाव प्रकट करना उनका उद्देश्य था । वे आये और लौट गये । उनके जाने के वाद एक भाई ने आकर

कहा - महाराजश्री । छोटा मुँह बडी बात, कहना तो नहीं चाहता था मगर क्षमापर्व पर अपने आप को रोक नहीं पाया और यहाँ तक चला आया हूँ । अभी जो भाई-बहिन यहाँ आकर गये हे उनमे दो भाई ऐसे भी हे जो एक वर्ष से आपस मे नहीं बोलते । वे यदि आपस मे अपनी भूल मान लें तो उनका यहॉ आना सार्थक हो जाये ।

'वे तो अब तक जा चुके होगे ।'

'नहीं वे अभी तक बस मे बैठे हुए किसी की पतीक्षा कर रहे हे ।'

'तुम छोटे भाई को बुलाकर ले आओ ।'

वे सज्जन तुरन्त जाकर उस छोटे भाई को बुला लाये । मैने जब उनके समक्ष अपनी बात रखी तो वे अश्रु छलकाते हुए बोले - महाराजश्री । मेरे साथ वडे भाई ने जो अन्याय किया वह आपसे क्या बताऊँ, फिर भी आप सब कुछ भूलने की कहते हैं तो मैं आपकी आज्ञा नहीं टालूँगा ।

मैंने पूर्व सज्जन से अब वडे भाई को बुलाने का सकेत किया । बडे भाइ भी वहाँ आकर अपने अनुज को देख चौंके । छोटे भाई ने अपने अग्रज के पॉव पकडकर कहा - भाई साहव । मुझे क्षमा करे, नादानी मे आपको कुछ का कुछ कह वेठा आप मेरे पिता तुल्य है ।

छोटे भाई की यह भावना देख वडा भाई अपने ऑसू को सभाल नही पाया। अनुज को गले लगाते हुए वोला - मै मन ही मन कितना दु खी था यह तुझे क्या मालूम ? यह हमारे अहम् की लडाई थी जो महाराजश्री के आशीर्वाद से ममाप्त हो गई । आज से जो तेरा हे वह तेरा है और जो मेरा है वह भी तेरा ही ह । अव तक ओर भी भाई-वहिन वहॉ आकर के राम-भरत का मिलन देखकर गद्गद् हो रहे थे । वे कह रहे थे, वास्तविक क्षमापर्व तो यहॉ मनाया जा रहा हे ।

8 समाज में बढ़ती विकृतियाँ

आज दिन भर आने-जाने वालो का ताता-सा लगा रहा । पर्युपण के पश्चात् दस-पन्द्रह दिनों तक यह क्रम चलता ही है । सन्त-सती के दर्शन-प्रवचन के साथ-साथ पर्यटन भी हो जाता है । कुछ श्रद्धालु वर्प भर वादलो मे छुपे चन्द्रमा की तरह रहकर इन दिनो दृष्टिगोचर हो ही जाते ह । जिन्हे देखकर लोग कहते हैं अरे ! आप तो ईद के चाँद ही वन गये । इमी क्रम मे कुछ श्रद्धालु शाम ढलते ढलते पहुँचे थे । भाइयो के लिए ठहरने की व्यवस्था धर्मशाला मे कर रखी थी । वे स्थानक के वाहर से ही वन्दना करके धर्मशाला मे चले गये । वहिने हमारे पास आकर के बैठ गई ।

अव प्रतिक्रमण का समय हो चुका था । प्रतिक्रमण के पश्चात् आपम `धर्मचर्चा होने लगी । इस चर्चा मे साध्वियो के साथ-साथ वाहर मे आई वहिन सभागी वन गई । इनमे एक वहिन समाजसेविका एव विदुपी थी । पारिवारिक जम्मेदारि॰ो से मुक्त होकर आत्म कल्याण के साथ समाज सेवा मे तन मन एव धन से योगदान कर रही थी । जहाँ भी सन्त-सती ह वहाँ पहुँचकर महिलाओ मे नई चेतना जगाने हेतु, वह कृत मकल्प थी । आज उसकी यात्रा का पडाव यहॉ हुआ था ।

हमने एक साथ वठकर अनेक विपयो पर चर्चा की । विचाग का आदान प्रदान करते करते हम सामाजिक विकृतियो पर चिन्तन करने लगे । मने कहा-

आज हर ओर समाज सुधार का ढोल पीटा जा रहा है, समाज सुधार के नाम पर सभाएँ आयोजित की जाती है, भाषण दिये जाते है, प्रस्ताव पास किये जाते है, मगर परिणाम कुछ भी नहीं निकलता है । ज्यो-ज्यो दवा करते जाते हैं, मर्ज बढता ही जाता है । समाज मे ये विकार पैदा क्यो हुए । हमको इसकी जड तक पहुँचना होगा । आज भारतीय समाज मे विकृतियॉ द्रौपदी के चीर की तरह बढती जा रही है जिनका न ओर है और न कोई छोर है । सुधार के स्थान पर जब सामाजिक क्रान्ति की बात होने लगती है तब वे क्रान्तियॉ असफल भी होती देखी गई है । अर्वाचीन की आँखो से प्राचीन को ओझल नहीं किया जा सकता । पत्येक प्राचीन परम्परा को हेय दृष्टि से देखना स्वय की कमजोरी प्रकट करना है । पाचीन परम्पराऍ जिन्हे आज व्यर्थ की रूढियॉ मानकर छोडा जा रहा हे, उनके पीछे भी निगूढ रहस्य छुपे थे । उन रहस्यो को जानने के लिए वर्तमान युग को उनकी गहराइयो तक जाना होगा । इसके लिए सम्पूर्ण समाज से तलस्पर्शी चिन्तन की अपेक्षा है ।

आपके विचार से ऐसी कौनसी परम्परा है जिस पर नये ढग से चिन्तन की जरूरत है - वे मेरी बात पर बोल उठी ।

हमारे समक्ष सेकडो समस्याएँ हे । हम आज क्यो नहीं नारी जीवन की समस्या पर ही विचार करे । नारी भारतीय परिवार का महत्त्वपूर्ण अग है । प्राचीन काल मे यदि कोई महिला विधवा हो जाती थी तो उसकी दुनियॉ वीरान बन जाती थी । एक जीवन साथी के नियति के हाथो लुट जाने पर उसका क्या नहीं खो जाता था । आँखो का काजल, पेरो की महावर, होठो की हँसी, मॉग का सिन्दूर माथे की विदिया, ओढने की चुनरी, पावो की बिछिया आदि सब कुछ उतारकर के मौन वन जाती थी । उसके खुशियो के उपवन मे पीडाओ की काली घटा छा जाती थी । उसके लिए न कोई उत्सव था न त्योहार, परिवार का प्रत्येक सदस्य उसकी पीडा का सहभागी वनकर जीवन को जीता था । उसकी पीडा को व अपनी पीडा समझते। घर मे सादा भोजन वनता, जो वह वहिन खाती

वही परिवार का प्रत्येक सदस्य खाता था । तडक भडक की तो कोई बात ही नही होती । यह क्रम महिनो तक चलता रहता । वह बहिन घर के एक भाग मे चुपचाप बैठकर वैधव्य जीवन को जीना सीख लेती थी । धर्माराधना करते हुए जीवन का शेष काल पूरा करती हुई, परिवार का ध्यान रखती । इसके पीछे क्या रहस्य छिपा था ?

हम साधारण ढग से सोचें तो लगेगा कि उस अबला पर ऐसा अकुश लगा कर उसके जीवन को दबाया जाता है । पर ऐसा नहीं है । गहराई से सोचें तो यह पता चलेगा कि गृहस्थी के सचालन का उत्तरदायित्व पति से अधिक पत्नी पर होता है । युवावस्था मे इन्द्रियो के विषय सक्रिय होते हैं । एक विधवा के लिए विकारो पर सयम रखना आवश्यक होता है । यही सोचकर हमारे पुरखो ने परिवार मे सादा भोजन, सामान्य वेशभूषा, महिनो तक वार त्यौहार पर चुप्पी धारण करके समय व्यतीत करने का प्रावधान रखा ताकि वह विधवा बहिन उस वातावरण मे स्वय को ढाल सके । लम्बे समय तक ऐसा पवित्र जीवन जीकर वह विषय विकारो से मुक्त होकर आत्म नियत्रित बन जाती । मर्यादा को तोडने की बात उसे सपने मे भी नहीं आती थी ।

आज नारी-स्वतत्रता के नाम पर मर्यादाएँ टूट रही ह । बालक अपनी ... के लिए बिलख रहे हे । नये समाज के रचनाकार विधवा-विवाह के पीछे ...डना ओर किसे तोडना चाहते हे, इस पर पुन विचार करने की आवश्यकता ... बुरा हे वह अच्छा कभी नहीं हो सकता है । समाज को वाल-विवाह ...क लगाना चाहिए मगर विधवा-विवाह करने मे पूर्व उमे नारी धर्म एव ...द। का ज्ञान कराके यह सोचने के लिए समय देन. चाहिए कि क्या वह पु...र्विवाह करके स्वय के आर अपने परिवार के साथ न्याय कर पायगी । आज नई व्यवस्था के नाम पर मर्यादा टूट कर मनमानी होने लगी ह, जो मन का रह रहकर कचोटती ह ।

9 क्रीत संस्कार

आज पवचन सभा मे परिचित चेहरो के साथ-साथ कई अपरिचित चेहरे भी दिखाई दे रहे थे । पवचन समाप्ति के पश्चात् उनसे परिचय हुआ वे दिल्ली से सन्त-सती के दर्शनार्थ सपरिवार निकले थे । गोचरी का समय हो रहा था । स्थानीय भाई उन्हे भोजन हेतु अपने साथ ले गये । हमने गोचरी लाकर आहार-पानी ग्रहण किया । तनिक विश्राम करने के पश्चात् स्थानक के प्रवचन कक्ष मे आई । दिल्ली से आया वह परिवार भोजन करके आ चुका था । मुझे आते हुए देखकर शिष्टाचार वश खडा हो गया । मैं आसन पर जाकर बैठ गई । सकेत करने पर वे लोग भी बैठ गये ।

उनकी बातो से लगा कि वह एक धर्मनिष्ठ परिवार है । धर्मश्रद्धा, गुरुभक्ति, शुद्ध आचार-विचार उनको अपने पूर्वजो से विरासत मे मिले थे । वर्षो पूर्व उनके पूर्वज राजस्थान मे ही निवास करते थे मगर आजादी के पश्चात् व्यापार व्यवसाय हेतु दिल्ली जाकर बस गये । वे रहन-सहन, बोल-चाल में राजस्थानी कम, दिल्ली वाले अधिक लग रहे थे ।

दिल्ली भारत की राजधानी है । देश के पांच बडे महानगरो मे उसकी गिनती होती है । नब्बे लाख की आबादी वाला यह शहर आज एक राज्य का रूप ले चुका है । वहाँ की भीडभाड, शोरगुल यातायात के साधनो के साथ कल कारखानो के उडते धुएँ ने दिल्ली को विश्व के पमुख पदूपित महानगरो

की श्रेणी मे खडा कर दिया है । वहाँ झुग्गी झोपडी से लेकर राष्ट्रपति भवन जैसी अट्टालिकाएँ है । सडको पर भीड का सैलाब उमडता है । पूरे राष्ट्र का शासन जिस दिल्ली से चलता हे यह परिवार वहीं से आया था । वहॉ के व्यस्त जीवन से निकलकर यहॉ आने पर उनको वडा सुकून मिल रहा था । मेने पूछा- राजस्थान मे इस ओर पहले भी आते रहे होगे ?

'नहीं महाराज जी, परिवार को लेकर तो पहली बार ही आये हे ।'

'कैसा लग रहा है राजस्थान ?'

बहुत शान्ति है जी । न भीडभाड है, न शोर, लोगो मे प्रेम भी बहुत है। ग्राम हो या शहर लोगो ने बहुत प्रेम दिया हे । वच्चे तो कह रहे हैं कि प्रतिवर्ष चातुर्मास मे पन्द्रह बीस दिन समय निकालकर राजस्थान जरूर आना चाहिए ।

- दिल्ली मे शान्ति नहीं हे ?

- वहाँ कहॉ शान्ति है महाराज जी । मानव तो मशीन बनकर जी रहा है । अर्थोपार्जन मे इसान अपनत्व को भूल चुका हे । पेसा ही वहाँ सब कुछ हे । वच्चो मे सस्कार हीनता बढती जा रही है । परिवार टूट रहे ह । वालको मे सस्कार जाग्रत हो इसीलिए मै इन्हे इधर लेकर आया हूँ । इन्हे इधर का वातावरण, ...िक भावना, प्रदूपण रहित ग्राम-नगरो को देख अत्यधिक प्रसन्नता हुई ह ।

मेने दूर वैठे एक वच्चे की ओर देखा वह मासूम भोला भाला वालक जोडे चुपचाप अपने दादाजी की वात सुन रहा था । मने उसकी ओर देखकर ...।- क्या नाम है तुम्हारा ?

उसने मुस्कराकर पहले अपनी माँ की ओर देखा तो मॉ ने कहा अपना नाम वताओ पुत्तर ।

वह मुस्कराते हुए वोला - नरेश ।

वहुत अच्छा नाम ह तुम्हारा, नरेश का अभिप्राय होता हे राजा । तुम तो अपने घर के राजा हो ।

- माँ मुझे राजा बेटा भी कहती है !

उसकी बात सुनकर सब हँसने लगे । मैंने कहा - क्या तुम सवेरे उठकर अपने माता-पिता, दादा-दादी को पणाम करते हो ।

मेरे यह पूछने पर सकोचवश कुछ क्षण चुप रहकर बोला -मैं तो सुबह उठकर सबको Good Morning कहता हूँ ।

यह तो समान वय के लोगो के साथ किया जाने वाला शिष्टाचार है। वडो के साथ ऐसा करना मेरी दृष्टि मे उचित नहीं है । हमारी भारतीय सस्कृति भी ऐसा करने की स्वीकृति नहीं देती । ये तो क्रीत सस्कार है । किराये की वस्तु अपनी ओर स्थायी कैसे होगी ? स्मरण रखो किराये का मकान चाहे कितना भी अच्छा हो मगर अपना नहीं कहलाता । आज दूरदर्शन के माध्यम से हमारी सस्कृति पर हमला किया जा रहा है । यदि धर्मनिष्ठ समाज सजग नहीं हुआ तो बाद मे पछताना पडेगा । कल से तुम सुबह उठकर सभी को पाव छूकर पणाम करोगे । इससे तुमको आशीर्वाद मिलेगा ।

मेरी बात सुनकर वे सब अति प्रसन्न थे । उन्हे प्रतिदिन सवेरे उठकर ग्यारह बार नवकार महामत्र स्मरण करने की प्रतिज्ञा दिलाई । प्रतिज्ञा ग्रहण कर वे सब पसन्न थे । महिलाएँ मेरी बाते सुनकर वहुत प्रभावित हो रही थीं । एक ने कहा महाराज श्री जी । आप को भी दिल्ली आना चाहिए । वहाँ किसी भी प्रकार की कोई परेशानी नहीं है । एक बार उधर पधारेगे तो हमको भी सेवा का लाभ मिलेगा ।

यह अवसर की बात हे । कभी योग होगा तो दिल्ली की ओर भी कदम बढायेगे आपकी भावना हमने मन मे रख ली है ।

वे प्रसन्न हृदय से मागलिक श्रवणकर विदा हो गये । मैं सोचने लगी कि महानगर की सस्कृति मे जीने वाले लोग आज भी धर्मश्रद्धा का दीप जलाये हुए हैं ।

❀ ❀ ❀

10 किसकी भूल

रात्रि को हल्की बूंदाबांदी हुई थी । आकाश मे बादल छाये हुए थे । सूरज बादलो की ओट मे आ जाने के कारण अपनी रश्मियो को धरती पर उतारने में असमर्थ था । प्रवचन समाप्ति के बाद, मै वहाँ से कक्ष में आकर बैठ गई। एक बहिन जो अभी तक प्रवचन मे थी मेरे पीछे पीछे ही कक्ष मे आ गई । उसने मेरे पाँवो का स्पर्श करके वन्दना की और सामने बैठ गई । उदास मुख, निष्प्रभ शरीर, अस्त व्यस्त वस्त्र, सजल नेत्र उसके व्यथा क्रान्त मन की शिकायत कर रहे थे । एक घण्टे के प्रवचन से मै थकान का अनुभव कर रही थी । यह प्रवचन जनित क्लान्ति मुझे मौन रहने का सकेत कर रही थी किन्तु उसकी उदासी ने मुझको उससे बात करने को बाध्य कर दिया था ।

मुखाकृति तो मन का दर्पण होती है । यह आवश्यक नहीं है कि बोलकर कुछ कहा जाये । उदास आँखे दर्द की व्यथा-कथा सहज ही प्रकट कर देती है । मैने अनुभव किया कि यह बहिन किसी विपत्ति की मारी यहाँ तक आई है, मुझे इसकी बात अवश्य सुननी चाहिए । मैने सहज होते हुए पूछा - बहिन ! क्या बात है, आज कुछ उदास लग रही हो ?

मेरा प्रश्न पूरा होते होते उसकी आँखो से अश्रु का दरिया फूट पड़ा । वह बोली - महाराजश्री अब आपको क्या बताऊँ ? मेरे एक ही तो लड़का है । उसे एक महिना हो गया, घर छोड़कर गये हुए, न मालूम कहाँ किस स्थिति

मे होगा। उसके जाने से तो हमारा घर ही तबाह होता जा रहा है । रातो की नींद, दिन का चैन सब कुछ लुट गया है । मेरी तो दशा पागलो-सी हुई जा रही है ।

अरे । ऐसी क्या बात हो गई जिसके कारण उसको घर त्यागने को विवश होना पडा ।

अब क्या बताऊँ आपको । दो तीन महिनो से उसकी सगति गलत लोगो से थी । उसके पिताजी को यह बात बुरी लगी और उसे एक रात डाटते हुए कह दिया कि ऐसी सन्तान से तो अच्छा था - तेरी माँ बाँझ रह जाती । निकल जा मेरे घर से, वह सवेरा होते ही चुपचाप निकल गया, आज तक पता नहीं है ।

'यह तो बहुत ही बुरा हुआ, उसके पिताजी कहाँ है ?'

वे भी उसे ढूढने के लिए दस दिन से बाहर गये हुए है । अभी तक तो कुछ भी समाचार नहीं है । मेरी तो रोते-रोते आँखे ही कमजोर हो गई । आप ही कुछ मार्ग बताएँ ताकि मेरा बेटा घर लौट आये ।

उस माँ के हृदय की गहराई को नापकर मैंने कहा - बहिन धीरज रखो। ऐसा लगता है - यह तो पूर्वकृत कर्मो का ही उदय है । शुभकर्मो का उदय होने पर वह लौटकर भी आ सकता है । तुम चिन्ता त्यागकर श्रद्धापूर्वक नवकार महामत्र का जाप करो ।

"क्या मेरा बेटा लौट आयेगा ?"

सद्बुद्धि आने पर लौटेगा । आखिर कितने दिन तक परिवार वालो से विलग रहेगा । घर की स्मृति किसे नहीं आती है । छोटी-मोटी बात किस घर मे नहीं होती। आचार्य गुरुदेवश्री भी यहीं विराजमान है उनके दर्शन कर मागलिक श्रवण करो - देवगुरु और धर्म के प्रति आस्था बनाये रखो और नियमित एक म्म एक माला फिराकर जाप करो । यही जीवन की सफलता व शाति का मूलमत्र है ।

मेरी बात सुनकर उसे वडी सात्वना प्राप्त हुई । वह जिस उदासी को ओढकर वहाँ आई थी अब उसे उतारकर स्थानक से वाहर निकल गई । उसके जाने के पश्चात् उसका पुत्र-मोह मुझे रह रहकर झकझोर रहा था । उसके रोम-रोम मे ममता छलक रही थी । एक माँ पुत्रमोह एव उसके वियोग मे इतनी व्याकुल भी हो सकती है, आज उसे देखकर जाना था । जब माँ इतनी व्यथित है, व्याकुल है तो क्या पुत्र भी मातृवियोग मे इसी प्रकार व्याकुल नहीं हो रहा होगा ? यदि वह व्याकुल हो रहा होता तो अव तक घर लोट सकता था । आजकल समाचार पत्रो मे गुमशुदाओ की सूचनाएँ आती रहती हे । बच्चे कुछ भीडभाड मे खो जाते हैं, कुछ घरो से भाग जाते हे, ऐसे वच्चो के लिए विज्ञापन निकलाये जाते है - प्रिय पुत्र । तुम जहाँ भी हो तुरन्त घर लाट आओ । तुमको अब यहाँ कोई कुछ भी नहीं कहेगा । तुम्हारे जाने के बाद, तुम्हारे भाई वहिनो का बुरा हाल है । माँ ने तो खाना-पीना छोड दिया है, उसकी तवीयत भी ठीक नहीं है, जल्दी लोट आओ ।

इन सब विज्ञापनो एव आये दिन होने वाली घटनाओ पर विचार करे तो स्पष्ट होता है कि कहीं न कहीं भूल अवश्य हुई हे । वालक तो नादान होते हैं, माता-पिता उन्हे पूरा समय नहीं दे पाते । लाड प्यार मे वालक अपने विचारो एव भावनाओ पर आघात होते ही विचलित हो जाते ह । घर की चार से मुक्त होने हेतु छटपटाने लगते हे । माता-पिता को अपने वालको म पेदा करने की भावना जगाने की जरूरत ह । एक जगह पढा था कि नहीं होने पर एक दु ख होता ह, होकर के मर जाये तो दो दु ख होते मगर होकर विगड जाये, सस्कारहीन हो जाये तो सा दु ख होते ह । सा दु खो से वचने के लिए माता-पिता जितना समय एव ध्यान अर्थोपार्जन मे लगाते हैं यदि उसका दस प्रतिशत भी अपने बच्चो पर लगायें तो उनका जीवन सुखमय हो सकता हे ।

❀ ❀ ❀

11 धर्म और अर्थ

गोचरी आ चुकी थी, बाहर से आये हुए धर्मप्रेमी श्रावक अभी धर्मचर्चा कर रहे थे । मैं उन्हे जीवन का उद्देश्य बता रही थी तभी एक बहिन ने कहा - महाराज श्री । शरीर स्वस्थ एव नीरोग रहेगा तो धर्मपालन भी होता रहेगा । आप गोचरी कर लीजिए हमारा भी समय हो रहा है । स्थानीय एक भाई अतिथियो को आग्रह के साथ ले गये । छोटे सतीजी मेरी प्रतीक्षा मे खडे थे । मैं उठकर उनके साथ गई इच्छानुकूल थोडा-सा आहार पानी लेकर बाहर आ गई । बाहर एक भाई उत्सुकता के साथ हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे । उन्हे देखकर मैंने कहा - अरे । आप कब आये ?

'दस पन्द्रह मिनिट हुए होगे ।'

दया पालिये, कैसे चल रहा है आपका स्वाध्याय ?

आजकल नियमित तीन घण्टे स्वाध्याय करता हूँ महाराजश्री ।

उनकी बात सुनकर मुझे मन ही मन बडी प्रसन्नता हुइ । जन्म से जैन नहीं होते हुए भी जैन सस्कारो का उन पर विशेष प्रभाव था । जब भी उन्हे समय मिलता दर्शन एव धर्मचर्चा हेतु स्थानक मे आते जाते रहते थे । उन्होने आज भी मुँह पर रुमाल रखते हुए अपनी बात प्रारभ करना चाहा उससे पूर्व ही मैं बोल उठी - श्रीमान् जी । आज तो आप बहुत दिनो के पश्चात् आए है । इन दिनो कार्य की कुछ अधिक व्यस्तता रही या प्रमाद ही कारण रहा ।

'बात कुछ ऐसी है महाराजश्री । आप तो जानते हैं कि अर्थ बिना सब व्यर्थ है । धर्म से यदि अर्थ प्राप्ति मे विघ्न आता है तो किसी की भी श्रद्धा डोल सकती है । मैं देख रहा हूँ कि आजकल धर्म के प्रति लोगो की श्रद्धा घटती जा रही है ।'

'आपकी बात मैं समझ रही हूँ, एक बात तो आपने भी सुनी होगी, कार्ल मार्क्स का कथन है कि अर्थ ही सब अनर्थो की जड है । व्यक्ति की श्रद्धा कमजोर होगी तो वह डोलायमान होगा । आज जो स्थिति बन रही है उसका उत्तरदायी आदमी स्वय हैं । उसमे विश्वास का अभाव है । 'श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्' जहॉ श्रद्धा नहीं है वहॉ ज्ञान की प्राप्ति असभव है । इसके लिए दोषी कौन है ?

'नहीं, मैं आपको दोषी नहीं मान रहा हूँ' वे बोले ।

'दोष किसी एक का नहीं है, यह मे मान रही हूँ, पर यह जो स्थिति बनी है, उसका जिम्मेदार कौन है ? आज के समाज मे जो अर्थ-पिशाच की भावना प्रवेश कर गई उसके पीछे दृष्टिकोण क्या है ? धर्म का अर्थ से क्या सम्वन्ध है । यदि कोई अर्थ की प्राप्ति के लिए धर्म को अपनाता हे तो वह भूल कर रहा हे । आज पश्चिमी राष्ट्रो के जो लोग भारत की ओर उन्मुख हो रहे हैं भारतीय धर्म एव सस्कृति को अपना कर इस देश मे रहने हेतु लालायित है, इसका कारण अर्थ नहीं वल्कि शान्ति हे । धर्म मानव को शान्ति देता है और दे रहा हे ।'

यह धर्म स्थानक हे, यहाँ आने वाले को आत्म शान्ति की अनुभूति मिल सकती हे । मन्दिर, मस्जिद, चर्च, गुरुद्वारा चाहे कोई भी धर्म स्थल हो वहाँ पहुँचकर व्यक्ति आत्मशान्ति की ही कामना करता है । जिस स्थान पर जो मिले वहॉ वही भावना लेकर जाये तो उचित है । रेल्वे स्टेशन पर वस का टिकिट कभी नहीं मिलता, दूध की डेयरी पर मिट्टी का तेल कैसे मिल सकता है ? यदि कोई ऐसी भावना रखकर वहाँ माग करेगा तो यह मूर्खता ही होगी ।

सूर्य अस्ताचल की गोद मे समाने जा रहा था । सतीजी जल पात्र लेकर बोली समय हो रहा है आप जल पी लीजिए । वे भाई जानते थे कि सन्ध्या को पुरुष वर्ग स्थानक मे नहीं ठहरता है, वे वन्दना करके बोले - मै आपकी बात समझ गया हूँ महाराजश्री । फिर भी शका समाधान हेतु कल दिन मे जल्दी आऊँगा ।

मैंने कहा - हर धर्मश्रद्धालु के लिए स्थानक का द्वार खुला है । मै आपकी जेज्ञासा का उचित समाधान करने का प्रयास करूगी । वे चले गये । मैंने प्रासुक जल ग्रहण करने के बाद विचार किया कि आज का भौतिकवादी मानव अपनी कमजोरी को किस पकार प्रकट करता है । इस मानव को अभी तक धर्म एव अर्थ का बोध भी नहीं हुआ । अर्थ क्या काम आता है और धर्म क्या करता है ? धर्म का तो आत्मा के साथ सम्बन्ध है, इसका लोगो को बोध नहीं हो पाया । स्वाध्याय, सामायिक, व्रत उपवास की सीढियो पर चढकर यदि कोई अर्थ की ऊँची मीनार पर चढना चाहे तो मुश्किल है । इनसे तो उसे आत्मशान्ति ही मिल सकेगी जो अर्थ से कभी भी सभव नहीं है । अर्थ से परिस्थितिजन्य शारीरिक सुख खरीदे जा सकते है मगर शान्ति तो त्याग के द्वारा ही प्राप्त होगी । भगवान की भक्ति व धर्म की आराधना से तो विवेक (सही जानना) एव विरति (सही करने) का भाव जाग्रत होता है । जब ये भाव जागेगे तो शोक, भय एव वियोग जन्य पीडा का अभाव पेदा होकर सबके अन्तर मे शान्ति का साम्राज्य स्थापित होगा । इससे यह ज्ञान भी होगा कि धन से सामान मिलता है सुख नहीं, धर्म से शान्ति मिलती हे दु ख नहीं है । जो धन हेतु धर्म की आराधना करते हैं वे धर्म की वास्तविकता से अनभिज्ञ है । उन्हे सद्गुरु की शरण मे जाकर सत्य का बोध करना चाहिए ।

❀ ❀ ❀

12 अपना अपना क्षेत्र

आज बाहर से दर्शनार्थ अनेक भाई-बहिन आये हुए थे । प्रवचन भी कुछ अधिक समय तक चला । बाहर से आये हुए सज्जनो ने अपने विचार रखे। आहार पानी ग्रहण करने तक बारह बजने का समय हो चुका था । भोजन के पश्चात् कुछ समय ध्यान एव मौन साधना की । एक बज चुकी थी । मध्याह्न के समय अनेक बहिने सामायिक, स्वाध्याय एव तत्व चर्चा हेतु स्थानक मे आ गई थी । आज आने वाली बहिनो मे अधिकाश बहिने महिला मण्डल की सदस्याएँ थी । अपनी जिज्ञासा शान्त करने हेतु उनको आज विशेष समय देने की बात पूर्व मे ही कही जा चुकी थी अत सभी समय पर उपस्थित हो गई । वे सविधि वन्दन ओर विधिपूर्वक सामायिक व्रत स्वीकार कर अपना स्थान ग्रहण कर चुकी । मैं भी आसन पर बैठी आगम की टीकाओ पर दृष्टि गडाये मन ही मन पढ रही थी ।

एक बहिन ने अपने मुख पर मुँहपत्ती बाधते हुए पूछा - महाराजश्री ! आप प्रतिदिन प्रवचन सुनाते ह, क्या प्रतिदिन आपको प्रवचन याद करना पडता हे ? मुझे तो वडा आश्चर्य होता है कि इतने श्लोक, कहानियाँ, कविताएँ और गीत आप केसे याद कर लेते ह । म बहुत दिनो से विचार कर रही हूँ, कि आप कभी किसी विषय की पुनरावृत्ति भी नहीं करते हैं । यह सब आप कितने घण्टे मे याद कर लेते है ?

उसकी बात समाप्त होने पर मैं कुछ बोल पाती उससे पहले ही एक अन्य बहिन बोली - अरे । इसमे क्या है, तुमने महाराजश्री से इतना लम्बा प्रश्न किया है, क्या तुम इसे घर से याद करके लाई थी ?

'नहीं तो, यह तो मैंने ऐसे ही पूछ लिया ।'

'बस यही बात है । जैसे हम बाते करने बैठते हैं तो घण्टो बीत जाते हैं। न मालूम कितनी बाते कहाँ कहाँ की अपने आप याद आती जाती है । ठीक उसी पकार महाराजश्री का मन सदैव ज्ञान-ध्यान मे लगा रहता है । इनके मन-मस्तिष्क मे धर्म-दर्शन के भाव हर पल उमडते रहते है अत इनको बोलने मे विल्कुल भी दिक्कत नहीं आती है । सोचो हम बातो की योजना क्या पूर्व मे बनाते हैं ? नहीं बनाते है न, पर समय पर सब बाते ध्यान मे आती जाती है। हमारा ध्यान सासारिक बातो की ओर रहता है उसी प्रकार आपका ध्यान धर्म-साधना की ओर रहता है । यहाँ तो महाराज एक घण्टे तक प्रवचन देते हैं यदि तीन घण्टे तक भी पवचन देना पडे तो भी दे सकते हैं ।

उसकी बात पर विराम लग भी नहीं पाया था कि पास बैठी तीसरी बहिन बोल उठी - अरे । ऐसी बात भी नहीं है, हर समय सबको सब बाते याद नहीं रह पाती। महाराजश्री नियमित स्वाध्याय किसलिए करते हैं । कल क्या कहना है उस बात का बिन्दु मन-मस्तिष्क मे अच्छी तरह बिठा लेते हैं और फिर धारा प्रवाह अपना पवचन करते रहते है ।

बात दोनो की ही ठीक थी । पहली बहिन कह रही थी कि बाते करते समय हमारी योजना पूर्व निर्धारित नहीं होती जब कोई एक बिन्दु चल पडता है तो फिर बात मे बात निकलती जाती है । दूसरी ने कहा - स्वाध्याय करते समय प्रवचन के लिए बिन्दु निर्धारित कर लेते हैं और उस पर अपने विचार प्रवाहित करते हैं । यह सत्य है । जिसका जो क्षेत्र होता है उसे अपने विषय का पारगत होना ही चाहिए 'वकील, डॉक्टर, राजनेता, शिक्षक और वैज्ञानिक की

भाति सन्त-सतियो का भी अपना क्षेत्र है । धर्म एव दर्शन पर उनका अधिकार है और होना ही चाहिए । जो जिस क्षेत्र मे कार्य करता है यदि उसे उसका अपूर्ण ज्ञान है तो वह कभी सफल नहीं हो सकता । साधारण वाहन चालक हो या वायुयान चालक, सभी को अपने वाहन की पूर्ण जानकारी रहती है । अपने वाहन मे तनिक सी गडबड होने पर उनके कान चोकन्ने हो जाते हे । साधु साध्वी भी धर्मयान के सचालक है, जिस पर बैठकर करोडों-अरबो मानव इस लोक से जीवन पर्यन्त यात्रा करते हुए आगे बढते है । एक अच्छा चालक मार्ग की सभी बाधाओ को पार करता हुआ यात्रियो को अपने गन्तव्य तक पहुँचाता है । हमे तो तीर्थंकरो द्वारा निर्दिष्ट पावन धर्म की राह मिली है । युगो से आचार्य और उपाध्याय इस राह को आने वालो के लिए कटक-ककर विहीन बनाये रखने हेतु प्रयासरत रहे हैं । जो ज्ञान हमे आज मिला है उसे धर्म पथिको तक पहुचाना हमारा उत्तरदायित्व है ।

कुछ बहिने जीवन के महत्त्वपूर्ण क्षणो को इधर उधर की बातो मे गुजार देती है, मगर सन्त-सती धर्म सम्मत एव युगसम्मत बात को अपने मन की कसोटी पर कस करके उस विषय पर अच्छी तरह से चिन्तन-मनन करने के पश्चात् ही प्रवचन मे प्रकट करने को उद्यत होते हैं । जो भी मन मे आये वही प्रवचन नहीं बोला जा सकता वहॉ तो श्रोताओ की भावना समझ करके धर्मसभा के ही अपनी बात कहनी पडती है । उत्तम विचार ही जीवन का निर्माण मे सदेव सक्षम होते हैं ।

❀ ❀ ❀

13 तजें लाभ व लोभ

आज रविवार था । रविवार होने के कारण प्रवचन मे नियमित श्रोताओ के साथ-साथ अन्य श्रोताओ की उपस्थिति भी अधिक थी । विद्यालय एव कॉलेज मे अवकाश होने के कारण नन्हे-मुन्नो के साथ कई बालक एव युवको ने भी प्रवचन का लाभ लिया था । मैं देख रही थी कि कुछ बच्चे अभी भी अपने माता-पिता के साथ वहाँ खडे थे । प्रवचन की समाप्ति के पश्चात् मैं कक्ष मे आकर के बैठ गई । मैंने देखा एक बहिन अपनी छोटी सी बच्ची के साथ आई और वन्दना करने के पश्चात् अपनी बच्ची, जो उसके आचल की ओट मे छुपने का प्रयास कर रही थी उससे बोली - गुडिया, चलो महाराजश्री को वन्दन करो।

वह अपना मुँह ऊपर करके अपनी माँ से धीरे-धीरे कुछ कहने लगी। उसके शब्द मुझे स्पष्ट सुनाई नहीं दे रहे थे । मेने उससे कहा - गुडिया । क्या बात है आओ मेरे पास और जो कहना है वह मुझसे कहो । उसने एक पल के लिए मुझे देखा ओर फिर उसी तरह अपनी मा से कुछ कहने लगी ।

मैंने कहा - क्या बात है, यह क्या चाहती है ?

वह बोली - महाराजश्री । दो दिन पहले यह यहाँ आई थी तव किसी ने इसको टॉफी दी थी । यह फिर टॉफी की माग कर रही हे कि पहले मुझे टॉफी दो मैं फिर वन्दना करूँगी ।

मै उसकी बात सुनकर मुस्करा उठी, उसकी माँ ने अपने वेग मे से एक टॉफी निकालकर दी और बोली - चलो गुडिया, अव महाराजश्री को वन्दना करो।

उस बालिका ने मुस्कराते हुए टॉफी ली और खुशी-खुशी वन्दना करने लगी । वन्दना करके माँ और बेटी जा चुकी थी छोटी सी बालिका भी टॉफी पाकर वन्दन हेतु उद्यत हुई हे । यदि देखा जाये तो उसकी वन्दना हमे नहीं वल्कि उस चार आने की टॉफी को ही की जा रही थी । सचमुच आज के इस भौतिक परिवेश मे जो धर्माराधना हो रही हे उसके पीछे अधिकाश प्रतिष्ठा प्राप्ति के लिए, कोई पुत्र एव परिवार की समृद्धि के लिए, कुछ धन-सम्पत्ति के साथ सुख प्राप्ति हेतु धर्म क्रिया मे तत्पर है । प्रत्येक व्यक्ति का एक ही उद्देश्य है कि धर्म-कर्म से हमारे वैभव मे अपार वृद्धि होती रहे । श्रद्धा का फल ता किसी न किसी रूप मे प्राप्त होता ही हे । धर्मक्रिया के पीछे भौतिक सुख-समृद्धि की कामना आज के धार्मिको की मनोवृत्ति हो गई हे । इसकी पूर्ति न हो, तो धार्मिक श्रद्धा के भव्य भवन के धराशायी होने मे देर नहीं लगेगी । जप, तप, साधना करने वाले ऐसे व्यक्ति कम ही दिखाई दे रहे ह, जो कर्म-निर्जरा कर इस लोक व परलोक को सुधारने मे सलग्न हो । मोक्ष मार्ग का आनन्द उठाने हेतु वे धर्म साधना मे रत हो।

ज्ञानी एव गुरुजन तो कहते हें कि विना किसी कामना के धर्म क्रियाएँ ताकि वह श्रद्धा निरन्तर वृद्धिगत होती रहे, उसमे कहीं कोई व्यवधान या `ध उत्पन्न न होने पाये । यह निष्काम श्रद्धा ही सच्ची श्रद्धा ह जो हम ` लक्ष्य तक पहुँचा सकती हें । आज तो सारी स्थितियाँ ही विपरीत दिशा मे जा रही हे । लोभ की भावना ने अपने पाँव पसार लिए ह । एक अवोध वालिका भी कुछ प्राप्त करने के पश्चात् ही वन्दन करने हेतु तयार हुई ह । उसके मन-मस्तिष्क मे यह वात प्रवेश कर चुकी है कि मुझसे वन्दना करवाने के लिए माँ मेरी कामना अवश्य पूरी करेगी । उसने जो चाहा वह पूरा हो गया । टॉफी की इच्छा वताई और मिल गई । वन्दना की धार्मिक क्रिया पूरी

कर पुन अपने घर लौट गई । क्या यह उचित हुआ है ? यह मिले तो ऐसा करूँ, या यह करूँ तो आप यह देना, ऐसी शर्त धर्म के क्षेत्र मे तो कम से कम नहीं होनी चाहिए । धर्म तो आत्म शान्ति का पावन क्षेत्र है वहाँ पर भी लेनदेन होने लगा तो इसकी नींव एक दिन हिल जायेगी । श्रद्धा के पृष्ठ मे कामना का भाव उचित नहीं होता । लोभ के वशीभूत होकर किया गया धर्म-कार्य जीवन को वह आनन्द कभी नहीं दे सकता जो शाश्वत है । कामना करते हुए धर्म की ओर उन्मुख होने वाला व्यक्ति तो कर्म काटने के बजाय पुन कर्म का सचय करने लगता है । लोभ तो स्वय एक कषाय है । जो लोभ रूपी कषाय के बन्धन मे फँस गया वह मुक्ति से दूर हट गया है । कषाय के कारण वह जन्म और मृत्यु के वटवृक्ष का सिचन कर रहा है । लोभ की भावना के पीछे लाभ की आकाक्षा कार्य करती है । जिस स्थान पर लाभ की कामना जाग्रत होने लगती है वहाँ फिर किसी का भला होने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता है । मनुष्य की यह भावना होनी चाहिए कि मैं निज का कल्याण करते हुए जगत का भी हितैषी बनकर उसका भी भला करूँ, तो उसे लोभ की प्रवृत्ति को कभी भी अपने पास नहीं आने देना चाहिए । इस कषाय से दूर रहने वाला ही धर्म के प्रति सच्ची श्रद्धा रखने वाला होता है । वह निष्काम भाव से धर्म साधना करके अपने को सच्चे सुख की ओर अग्रसर कर सकता है ।
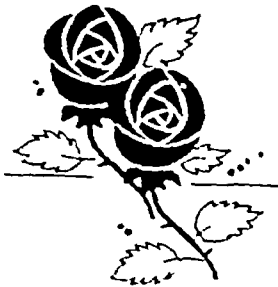
14 यह धरती शूरों-सन्तों की

इन दिनो महाविद्यालयो एव विद्यालयो मे मध्यावधि अवकाश चल रहे थे। दीपावली के आसपास यह अवकाश होता है । अवकाश का लाभ उठाने हेतु कई युवक एव युवतियाँ भी अध्ययन से अवकाश लेकर घर-परिवार के साथ रहकर दीप-पर्व का आनन्द ले रहे थे । कुछ युवक - युवतियाँ प्रतिदिन प्रवचन एव मध्याह्न मे आयोजित धर्म चर्चा मे भी नियमित उपस्थित हो रहे थी ।

एक युवती प्रतिदिन प्रवचन के पश्चात् समय निकालकर मेरे पास आ बैठती। मैं इन दिनो अक्सर प्रवचनो मे ससार की क्षण-भगुरता एव असारता पर अपने विचार प्रकट कर रही थी । भगवान महावीर की वाणी को आधार बनाकर गई बातो का सभी पर अच्छा प्रभाव पड रहा था । मेरे विचारो को सुनकर उस युवती ने कहा - महाराज श्री । आप जो भी कहते हें वह बिल्कुल शास्त्रोक्त है । मे दो-तीन वर्षो से नियमित धर्मशास्त्रो का स्वाध्याय रही हूँ । एक दिन परिवार वालो के समक्ष मैंने अपनी भावना प्रकट तो घर मे कोहराम मच गया । माँ ने तो कह दिया कि आज के बाद ऐसी बात मुँह से निकाली तो ठीक नहीं होगा । मेरी अवमानना करके चली गई तो मुझे जीवित नहीं देख सकोगी । म अपने प्राण दे दूँगी ।

आपके आशीर्वाद से हमारे घर का वातावरण बहुत ही धार्मिक ह । घर का प्रत्येक सदस्य धार्मिक कार्यों मे बडे उत्साह से भाग लेता ह । प्रतिवष माँ-

भाभी तो तेले अठाई की तपस्या भी करते हैं, मगर मैंने अपने वैराग्य के मनोभाव प्रकट किये तो बात ही उल्टी हो गई । माँ कहती है कि गृहस्थी मे रहकर भी धर्म का पालन किया जा सकता है । मुझे विवश किया जा रहा है, यह कैसी उलझन है ।

मैं उसकी बात सुनकर मौन हो गई । उस चुप्पी को तोडते हुए वह पुन बोली- महाराजश्री । आप ही बताइये मुझे क्या करना चाहिए ?

यह तुम्हारा अपना सोच है । तुम अब नन्ही बालिका तो हो नहीं जो तुम्हे कुछ समझाया जाये । घर-परिवार से विद्रोह करके जो काम किया जायेगा तो उसमे कई तरह के विघ्न उपस्थित हो सकते हैं । माता-पिता को विश्वास मे लेकर ही कोई कदम उठाना चाहिए । इसी मे तुम्हारी और उनकी भलाई है।

कुछ देर बैठकर वह अपने घर की ओर लौट गई । उसके जाने के पश्चात् मैं सोचने लगी अरे । यह दुनियाँ और दुनियॉ वाले सचमुच बडे विचित्र हैं । परिवार का कोई एक सदस्य यदि धर्म के मार्ग मे बढने की भावना रखता है, राग से वेराग्य की ओर पाँव उठाने की बात करता है, तो परिजन उसके इस नेक काम का नाम सुनकर के मरने की धमकी देते हैं । क्या यह कोई ऐसा काम हे, जिसके करने से कुल मे कलक लग रहा है । धर्म के पथ पर कोई आगे निकल गया तो कुल वदनाम हो जायेगा। ऐसे शुभ काम करने वालो के माता-पिता को मरने की कहॉ जरूरत हे । जब किसी परिवार के लडके-लडकियाँ अनैतिक आचरण करते हैं तव तो नहीं सुना कि किसी मॉ ने मरने की धमकी दी हो, किसी पिता ने पुत्र के दुराचरण को देखकर स्वय को फॉसी के तख्ते चढा लिया हो या अग्नि स्नान कर लिया हो ?

आज इस प्रकार की घटनाएँ आये दिन सुनने को मिलती हे । माता-पिता को अपनी पथ भ्रमित सन्तानो के आचरण पर तो कोई विशेष दु ख नहीं होता लेकिन कुछ योग्य युवक-युवती जीवन के सत्य को समझ कर वीतराग

पथ पर चलने को तैयार होते हैं तब उनके सीनो पर साँप लोटने लगते हैं । उन्हे तो यह सोचना चाहिए कि जो महान् कार्य हम नहीं कर सके वही आज हमारी सुसस्कारित सतान करने को तत्पर हो रही हे ऐसे शुभ कार्य मे उनकी क्या हानि हो रही है ? साधना करने वालो को तो आध्यात्मिक लाभ होगा ही मगर सहयोग करने वालो को भी धर्म दलाली का लाभ अवश्य मिलेगा । इस प्रकार के कार्यों मे रोडा अटकाने वालो को क्या कहा जाये ? अनन्त ज्ञानियो के ज्ञान को हृदय मे उतारने वालो को ऐसा नहीं सोचना चाहिए । लेकिन लगता है, उनके मिथ्यात्व का इतना उदय है कि उन्हे अच्छाई मे भी बुराई ही दृष्टिगत होती है । जैसे सावन के अधे को सब हरा ही हरा नजर आता है उसी प्रकार मिथ्यात्वी जीव को त्याग व वैराग्य की बात पसन्द नहीं आती है ।

कुछ भाई-बहिन कहते हे महाराजश्री ! यह बहुत कठिन रास्ता है, हमारी सतान यो मर जाये तो सहन है मगर उन्हे वीतराग के रास्ते पर तो नहीं चलने देगे । आज अगर सभी माता-पिता ऐसा ही सोच लें तो फिर सन्त-सती कहाँ से आयेगे ? वे स्थानक मे तो होते नहीं, आकाश से टपकते नहीं, झाडियो के लगते नहीं, बाजार मे बिकते नहीं फिर इस धर्म ससार का क्या होगा ? परम्परा क्या होगा । सन्त-सती की नास्ति तो होने वाली नहीं है, हाँ सख्या मे कमी हो सकती है। यह धरती तो शूरो एव सन्तो की धरती है यह अभी नहीं हुई हे । वीतराग प्रभु की मशाल को उठाने वाले हर युग म पदा हे और आगे भी होते रहेगे ।

❀ ❀ ❀

15 बोझिल शिक्षा प्रणाली

अजमेर का वर्षावास व्यतीत करने के पश्चात् उपनगरो मे विचरण कर रहे थे । आचार्यप्रवर लोहागल रोड स्थित बरमेचा भवन मे विराजमान थे, हम साध्वीवृन्द भी निकट ही एक भवन-आकाश गगा मे ठहरे हुए थे । श्रावको का आवागमन चातुर्मास की तरह ही चल रहा था । हम गोचरी ग्रहण करके आचार्यश्री की सेवा मे पहुँचकर ज्ञान चर्चा करते हुए समय को सार्थक कर रहे थ ।

एक बालक ने आकर सर्वप्रथम आचार्यप्रवर को नमन किया और तत्पश्चात् सभी साधु-साध्वियो को सभक्ति, सविनय वन्दना करके बैठ गया । उसके आने मे ज्ञानचर्चा का क्रम भग हो गया । आचार्यदेव ने उससे परिचय के क्रम मे ही पूछा - किस कक्षा मे पढते हो ?

'सातवीं कक्षा मे ।'

'सातवीं मे कोन-कोन से विषय चलते हैं ?'

'हिन्दी, अग्रेजी, सस्कृत, भूगोल, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, गणित, समाजोपयोगी उत्पादक कार्य एव समाज सेवा स्वास्थ्य शिक्षा आदि ।'

'इस अवस्था मे आर इतने विषय ?'

'आजकल तो कक्षा तीन से ही ये विषय शुरु हो जाते हैं ।' मैंने कहा।

'पहले तो ऐसा नहीं होता था ।' गुरुदेव बोले ।

'पहले इतने विषय तो नवीं कक्षा मे प्रारभ होते थे गुरुदेव । मगर अब तो शिक्षा का ढाचा ही बदल गया है । कक्षा दस तक तो ये अनिवार्य विषय ही पढने पडते है, ऐच्छिक विषयो का प्रारभ तो अब कक्षा ग्यारह से होता है ।

'आखिर ज्ञान का विम्फोट जो हो रहा हैं पास बेठे साध्वी जी ने कहा ।'

मैं कई दिनो से देख रहा हूँ छोटे-छोटे बच्चो की पीठ पर बस्तो का बोझ वढ गया है । पहली कक्षा के बच्चे की पीठ पर पाँच किलो से भी ज्यादा पुस्तके-कॉपियो का भार होता है । इसे देखकर लगता है कि आज की शिक्षा ने बोझ को बढाया है ज्ञान को घटाया है । यह तो चूहे की पीठ पर गणेशजी के विराजने जैसी वात हो गई है ।

आचार्यश्री की वात मेरे मन मे गहराई तक उतर गई सचमुच आज पुम्तको का वोझ बढा है मगर ज्ञान घटा हें । वोझ के बजाय यदि ज्ञान बढ जाता तो युग का स्वरूप ही ब्दल जाता । शिक्षाविद्, राजनेता, वेज्ञानिक, दार्शनिक मवके सब अपने विचारो का वोझ नई पीढी पर डाल रहे हैं । आज का वालक शिक्षा के लिए एक औजार वन गया है । जिसका वे जब चाहे जमा चाहे कर रहे हैं। जीवन का व्यावहारिक ज्ञान छूट गया है । वह घर, परिवार एव समाज की परम्परा से दूर जाकर सात समुद्र पार की सभ्यता एव सम्कृति का परिचय प्राप्त कर रहा ह । अपनी सभ्यता एव सस्कृति से उसका माक्षात्कार भी नहीं हो पा रहा है । उपग्रह युग मे वालक राकेट निर्माण की प्रक्रिया को समझ रहा ह मगर जीवन निर्माण का उसे ध्यान ही नही ह । अध्यक्षीय एव ससदीय प्रणाली को पढने वाले वालक सयुक्त परिवार की व्यवस्था म अलग हटकर स्वतत्र एव उन्मुक्त जीवन जीने की आकाक्षा करने लगे हैं ।

पुस्तको के भारी भरकम बोझ को पीठ से उतारकर आँखो के रास्ते मन तक पहुँचाकर सोचता है कि यह, धर्म यह सस्कृति बहुत पिछडी है । आगे बढना है तो पश्चिमी सस्कृति को अपनाना होगा । इस पुस्तकीय बोझ ने बालक के मन मस्तिष्क को दबा दिया है । वह जो पढता है उसे ही सत्य मान लेता है । अधानुकरण की यह पवृत्ति व्यक्ति और समाज दोनो के लिए ही घातक है । हमने वास्तविक ज्ञान के कपाट तो अभी तक भी नहीं खोले हैं । बालक को किस अवस्था मे क्या ज्ञान देना चाहिए इस बात पर चिन्तन की आवश्यकता है । पश्चिम की सभ्यता भौतिक विज्ञान से युक्त है जो मानव को बाहरी चकाचौंध का दर्शन तो करा सकती है मगर अन्तर मे आध्यात्मिक आनद की अनुभूति नहीं दे सकती । आज का बालक विद्यालयो मे जाकर पढता अवश्य है पर सच्चे ज्ञान का उसमे अभाव है । सच्चे ज्ञान एव शिक्षा के लिए तो कहा भी गया है -

वसे गुरुकुले णिच्चं, जोगवं उवहाणवं ।
पियं करे पियं वाई, से सिक्खं लद्धुमरिहई ॥

अर्थात् जो सदा गुरुकुल मे वास करता है, जो समाधियुक्त होता है, जो उपधान तप करता है, जो प्रिय करता है, जो प्रिय बोलता है वह शिक्षा प्राप्त कर सकता है । आज यह सब कहा है । विद्यालय-महाविद्यालय, राजनीति के अखाडे बन गये हैं । अनुशासन के अभाव ने ज्ञानार्थी को सत्य, सयम और शील से दूर कर दिया है । उसे कौन समझाये कि पश्चिम की चकाचौंध मृगमरीचिका है । वहाँ के निवासी घबराकर विश्वगुरु भारत की ओर देख रहे हैं कि फिर कोई बुद्ध महावीर, विवेकानन्द, अरविन्द का अभ्युदय हो और हमे शान्ति के पथ पर अग्रसर कर सके। ज्ञान के लिए बाहर नहीं भीतर उतरने की आवश्यकता है । यह जप तप एव ध्यान का ज्ञान ही मानव को सच्चा आनन्द दे सकता है । हमे इस ज्ञान के पथ पर आगे बढने की आवश्यकता ह ।

16 कीतलसर की सुवास

पाश्चात्य सस्कृति का प्रभाव भारतीय दृष्टिकोण को हर जगह प्रभावित करता जा रहा है । नववर्ष का पदार्पण पहले चैत्र माह की प्रतिप्रदा से माना जाता था मगर बीते वर्षो से जनवरी की प्रथम सुबह से ही माना जाने लगा है । इन दिनो हमारा विहार नागौर जिले मे हो रहा था । आज नये वर्ष की पहली सुबह थी । ग्रीष्मकाल मे धोरो की धरती जसे तपती हे वेसे ही दिसम्बर की रातो मे वह अत्यधिक ठण्डी हो जाती है । आज हमारा लक्ष्य कीतलसर की ओर था । कुछ किलोमीटर का विहार करके हम कीतलमर पहुँच गये । कीतलसर की पावन धरा को सस्पर्श करके तन मन पुलकित हो उठा । यह प्रवर्तक, दीनदयाल, गुरुदेव श्री पन्नालालजी महाराज की जन्म भूमि ह । प्रवास के समय मे ही यह विचार वार-वार उठता था कि उस पुण्य के भी दर्शन हो जहाँ एक दिव्य सन्त ने जन्म लिया । जन मन क आकर्पण केन्द्र इस कीतलसर मे पहुँचकर अन्यधिक आत्मतोप की अनुभूति हो रही थी ।

यहॉ पहुॅचते ही हदय गदगद हो गया । मिट्टी को हाथो म छूकर उस महामानव के गुणो का स्मरण किया जिनकी सद्गुण सुवास आज भी कण कण मे व्याप्त हे । सूर्योदय के पश्चात् भी शीतल मद बयार चल रही थी । हमारे

आने की सूचना ग्रामवासियो को मिल चुकी थी कई भाई-बहिन रास्ते मे ही हमे मिल गये । देखते देखते एक काफिला बन गया । गुरुदेव श्री के जयनादो से गगन गूजने लगा । हमारे आगमन से सबमे खुशी का सचार हो रहा था ।

गुरुभक्तो ने अपने प्रियगुरु की स्मृति को सदा-सदा के लिए अमर बनाने हेतु वहाँ भव्य चिकित्सालय का निर्माण कराकर वहाँ के रमणीय वातावरण को ओर अधिक रमणीय बना दिया था । गुरुदेव की जन्म भूमि को देख हृदय बासो उछल रहा था । चिकित्सालय का हर कक्ष गुरुदेव की कहानी कहता हुआ लग रहा था। पूज्य गुरुदेव पुरुषार्थ की जलती हुई मशाल थे । जो उनकी शरण मे पहुँचा वह अधेरे से निकलकर उजाले में आ गया। गुरुदेव की हार्दिक अभीप्सा थी कि मानव समाज पुरुषार्थ के वाहन पर सवार होकर आगे बढता हुआ नये सृजन की कामना करते हुए जीवन को नया मोड दे ।

दु खी एव दलितो के लिए वे जिए और अपना निर्मल सयमी जीवन का पालन करके चले गये । जैन धर्म के इतिहास मे उनका नाम आज भी स्वर्णाक्षरो मे अकित है । चिकित्सालय की दीवारो का हर पत्थर उनकी यशोगाथा का बखान कर रहा था । सुदूर ग्रामो मे आज भी चिकित्सा का अभाव है । अपने सीमित साधनो के कारण बेचारे ग्रामीण रोगी अनेक पीडाओ को सहन करते हुए अपनी जीवन लीला समाप्त कर देते हैं । अनपढ, अज्ञानी ग्रामीणो की सेवा करना भी महान पुण्य कार्य हे । अज्ञान के अधकार से निकलकर उन्हे नीरोग रखा जाय इसके लिए समाज को सदेव तत्पर रहना चाहिए । गुरुदेव की भावना का साकार प्रतिबिम्ब यहाँ पर दिखाई दे रहा था ।

आज नववर्ष का प्रारभ हे । नववर्ष सभी के लिए शुभ एव मगलमय हो यही हम सबकी भावना हे । सबके लिए शुभ सोचना ही मगलकारी है । प्रयत्न या पुरषाथ के बिना कोई भी कार्य पूर्ण नहीं हो सकता । निज कल्याण

की चाह रखने वाले को पर कल्याण हेतु सोचना आवश्यक है । महापुरुष सदैव ससार के कल्याण का मार्ग सुझाते हैं उसी मे अपना कल्याण भी देखते हैं । दूसरो के सुख एव कल्याण के साथ ही उनका शुभ जुडा है । इस ससार मे धन कमाने के लिए लोग रातो का सुख चैन भूल जाते है मगर कमाये हुए धन का शुभ कार्यों मे कहाँ उपयोग करे इसकी चिन्ता कितने लोगो को हैं ?

गुरुदेव श्री तो आत्म समृद्ध महापुरुष थे । उन्होने जीवन का सत्य जान लिया था । उन्हे इस बात की जानकारी थी कि जो भीतर से दरिद्र होता है वह बाह्य वस्तुओ का सग्रह करता है । वे धन पद प्रतिष्ठा मान सम्मान से कोसो दूर रहकर चले । उन जैसे सतोषी एव अनासक्त महापुरुष तो युगो के पश्चात् ही इस धरती पर आते हैं । वे जानते हैं कि -

जम्म मरणेण समं, संप्पज्जइ जुव्वणं जरा सहिय ।
लच्छी विणास सहिया, इय सव्वं भंगुरं मणुह ॥

अर्थात् जन्म के साथ मृत्यु, यौवन के साथ बुढापा, लक्ष्मी के साथ विनाश सतत लगा हुआ है । इस प्रकार प्रत्येक वस्तु नश्वर हे । यही जानकर महापुरुष वही कार्य करते हे जो शुभ है । कीतलसर के उस भव्य दीप ने युग का अधकार मिटाने के लिए अहर्निश स्वय को तपाग्नि मे तपाया । शूलो पर चलकर जमाने फूलो का मार्ग बताया । आत्म ज्ञान की सपदा प्राप्त कर जीवन को समृद्ध । आत्मा को सद्वृत्तियो मे स्थित करके स्वय को दुष्प्रवृत्तियो से परे हटाने महान् गुरु को धन्य हें । धन्य हे कीतलसर की इस मिट्टी को जिसने उस महामना को अपनी गोद मे पाल-पोस कर वडा किया । मैं आज भी नयन मूद कर गुरुदेव का ध्यान करती हूँ तो मुझे हर पल इस भूमि के कण-कण मे उसी दिव्य स्वरूप के दर्शन होते ह ।

17

धर्म पथ की बाधा

उस दिन एक छोटे से ग्राम मे प्रवेश हुआ । दूर-दूर तक बालू रेत दिखाई दे रही थी । ग्राम के बाहर प्राथमिक विद्यालय बना हुआ था । रविवार होने के कारण विद्यालय बन्द था । एक बडा कक्ष हमारे लिए खोल दिया गया । विद्यालय से कुछ ही दूर पर रेल मार्ग था । दूर खेतो मे खेजड़ो के वृक्ष खडे थे । सरस्वती के पावन मदिर मे पहुचकर अपने कधो पर रखा सामान उतारा और प्रभु प्रार्थना करने हेतु सभी को निर्देश दिया । प्रार्थना पूर्ण करके मगल पाठ सुनाया । मगल पाठ सुनकर श्रद्धालु अपने-अपने स्थानो की ओर लौट गये ।

विद्यालय मे अब सिर्फ हम ही रह गये थे । विद्यालय की चारदीवारी मे तीन ओर कक्षा कक्ष बने थे, जिन पर ताले लटक रहे थे । विद्यालय का सुनसान वातावरण रह रहकर अजीब सी अनुभूति पैदा कर रहा था । ज्यो ज्यो सूरज ऊपर चढता जाता त्यो-त्यो आस-पास सन्नाटा पसरता जा रहा था । दोपहर के पश्चात् पुन आगन्तुको की चहल पहल प्रारभ हो गई । श्रद्धालु श्रावको के आवागमन से वातावरण सजीव हो उठा । मैं आसन पर बैठी हुई अपने सामने बैठे श्रावको से धर्मचर्चा मे लगी थी । उसी समय एक सज्जन आये और वन्दन करके बठ गये । मैंने उनसे पूछ लिया - आप अभी कहाँ से आ रहे हैं ?

'मैं पास ही के ग्राम से आ रहा हूँ ।'

'सामायिक करते हैं ?'

'हाँ महाराज श्री । सामायिक तो मैं प्रतिदिन करता हूँ ।'

उनकी बात पर मुझे एकाएक विश्वास नहीं हुआ और पुन प्रश्न किया- क्या प्रतिदिन करते हैं ?

'सामायिक तो प्रतिदिन करता हूँ महाराजश्री । मगर विधि से नहीं कर पाता ।'

'विधि से तात्पर्य ।'

'मुँहपत्ति नहीं बाँधता हूँ ।'

ऐसा क्यो ? यह तो हमारा प्रतीक है, बिना मुँहपत्ति के सामायिक कैसी?

महाराजश्री जब से आपकी प्रेरणा हुई है तब से ही धार्मिक क्षेत्र मे गतिशील हूँ । प्रतिदिन माला फेरना, ग्राम मे साधु-साध्वी पधारे तो प्रवचन लाभ लेना, स्वाध्याय करना मेरे प्रतिदिन के कार्यक्रम का अग हे । मेरे इन क्रिया कलापो से मेरी माताश्री नाराज होती है और कहती हे कि अभी यह सब करने की तुम्हारी उम्र नहीं है । मैं माताजी को भी नाराज नहीं करना चाहता ।

यह भी कोई बात हुई, धर्म-साधना की भी क्या कोई उम्र या समय होता है । जरा सोचिए यदि कोई बालक अल्पायु मे ही श्रम करके धनापार्जन करने लगे तो क्या मॉ बाप कहेगे कि पुत्र अभी तुम्हारी उम्र नहीं हे । अभी तो तुम आराम करो । कमाई करके लाने वाले से यह प्रश्न नहीं पूछा जाता है धर्म साधना मे ऐसी बात क्यो आती हे ? समय के साथ-साथ उम्र घट है अवस्था बढ रही हे । कोन जाने कल केसी परिस्थिति बने ? जो काम आज कर सकते हैं कल उसके लिए समय नहीं निकाल पायें । धर्म साधना को एक निश्चित अवस्था तक के लिए त्याग कर बैठ जाना तो मानव की मबसे बडी मूर्खता है ।

जीवन के अच्छे कार्यों मे तो सदव अडचने आती ही ह । सच्चाइ क पथ पर चलने वाला अवरोध देखकर घबराता नहीं ह । अच्छाई की हर आग दुदुभी बजाई जाती है उसका शोर होता हे मगर बुराई सदैव चुप रहती ह । नमिराजर्षि

का दृष्टान्त तो सुना ही होगा, उन्होने जब दीक्षा ली तो मिथिला के घर-घर मे कोलाहल फूट पडा, उसीमिथिला मे काल शोकरिक कसाई प्रतिदिन पाँच सौ भैंसो का वध करता था मगर कहीं कोई शोर नहीं होता था । तुम अच्छा करने का पयत्न करोगे तो कोई न कोई बाधा आयेगी ही । यह ससार तो सुख-दुःख, हर्ष-शोक, आशा-निराशा का सगम स्थल है । यहाँ पर हर कदम पर सघर्ष है, विरोध है, सकट है । जो मानव इन सब बाधाओ को पार करके आगे बढता है उसे ही लक्ष्य की पाप्ति होती है। उसकी मुश्किलें आसान होकर सफलता उसके कदमो को चूमती है ।

वे बोले - महाराजश्री । आपके प्रेरणादायक विचारो ने मेरी आँखे खोल दी है । आपका आशीर्वाद रहा तो आज से ही विधिपूर्वक सामायिक करने का पयास करूँगा । तभी दीवार पर लगी घडी ने चार बजने की घण्टाध्वनि की वे उसे देखकर चौंकते हुए बोले - अरे । चार बज गये । पता ही नहीं चला दो घण्टे कैसे बीत गये। वे अपने स्थान से उठ खडे हुए और मागलिक लेकर वन्दना करते हुए चले गये। उनके पीछे पीछे अन्य श्रद्धालु भी अब उठ गये थे । अन्य साध्वीगण दूर बरामदे मे बैठी स्वाध्याय मे सलग्न थी । मैं अकेली बैठी चिन्तन की वीथिकाओ मे खो गई । अरे यह कैसी माँ है जो अपने सुत को धर्म कार्य से रोकती है वह अज्ञानी है उसे पता नहीं है कि - **'सामाइएणं सावज्जजोगविरइ जणयइ'** अर्थात् सामायिक की साधना से पापकारी प्रवृत्तियो का निरोध हो जाता है । मानव को चाहिए कि सामायिक के माध्यम से अन्तर्मन की ओर सजगता से पाँव वढाये, ससार तो वाधक बनेगा ही, महावीर, मुहम्मद, गाधी, दयानद जैसे सैंकडो महापुरुषो का जीवन-पथ शूलो से भरा हुआ था, वे मुस्कराकर आगे बढते गये और अपने लक्ष्य को प्राप्त कर पाये । प्रत्येक मानव महापुरुषो के जीवन से प्रेरणा ले तो मुश्किलें आसान हो जाती है ।

18 समाज का भाव पक्ष : नारी

सूरज सध्या की चादर ओढकर क्षितिज की गोद मे सो चुका था । स्थानक के हाल मे माताएँ-बहिने सामायिक हेतु आ रही थी । एक बालिका ने मेरे समीप आकर वन्दना की और वहीं बैठ गई । पारस्परिक वार्तालाप के दौरान मने पूछा - इन दिनो क्या कर रही हो ?

'आजकल महाराजश्री । मै बी एड कर रही हूँ ।'

'अच्छा अध्यापिका बनने का विचार है ।'

'विचार तो यही है अगर सरकारी नौकरी मिल गई तो कर लूगी अन्यथा इतनी पढाई करने का महत्त्व ही क्या हे ?'

स्त्री का शिक्षित होना बहुत आवश्यक हे, क्योकि बालक की प्रथम वही होती है, मगर नौकरी करना तो मुझे उचित नहीं लगता हे । पति आमदनी पर्याप्त है तो पत्नी के लिए नौकरी की क्या जरूरत ह ?

'महाराजश्री । यह आर्थिक युग हे । पति-पत्नी दोनो ही कमाने लगे तो घर परिवार की स्थिति ही अलग हो जाती हे ।'

इसका तात्पर्य यह है कि तुम नौकरी करने वाले पुरुष मे ही विवाह करोगी ।'

मेरी बात पर वह शरमा गई और कुछ क्षण ठहर कर बोली - यह तो माता-पिता की इच्छा पर है ।

यह कहकर के वह उठ गई । मैं जीवन-पथ मे मिले उन लोगो के जीवन पर विचारने लगी जो पति-पत्नी सरकारी सेवा मे रहकर अर्थोपार्जन कर रहे थे । आजादी के पश्चात् स्त्री शिक्षा मे उल्लेखनीय वृद्धि हुई है । अभी तक केवल शहरो मे ही लडकियाँ पढ लिखकर नौकरी कर रही थी मगर आजकल तो ग्रामो मे भी नौकरी प्राप्त करने की दौड लगी हुई है । मध्यमवर्ग मे यदि लडकी एस टी सी , बी एड का प्रशिक्षण पाप्त किए हुए है तो सम्बन्ध भी जल्दी हो जाता है । ससुराल पक्ष वाले दहेज की माग भी नहीं करते क्योकि पढी लिखी बहू हे तो प्रतिमाह पाँच-छ हजार रुपये कमा कर लायेगी, दहेज की कहाँ जरूरत है ? उच्च वर्ग, पबुद्ध व्यापारी एव उद्योगपतियो को तो इसकी आवश्यकता भी नहीं होती है । निम्न वर्ग आज भी जहाँ का तहाँ है । मध्यम वर्ग मे आया यह परिवर्तन नई-नई समस्याओ को जन्म दे रहा है । पति-पत्नी दोनो ही नौकरी पेशा होने पर उनकी जिन्दगी तनावग्रस्त हो जाती है । इस तनाव का शिकार अधिकतर नारी को ही होना पडता है । दोनो को समय पर कार्यालय जाना होता है, इस स्थिति मे सतान के साथ पूरा न्याय नहीं हो पाता । सम्मिलित परिवार मे बन ठन कर निकल जाने वाली बहू - घर का, सतान का दायित्व सास एव अन्य पर छोडकर साझ तक घर लौटने वाली वह बहु सबकी ईर्ष्या का केन्द्र बन जाती है ।

पति-पत्नी यदि एकल परिवार के हैं तो स्थिति ओर भी तनावग्रस्त हो जाती है । घरेलू कार्यो मे पति को पत्नी के साथ पूर्ण भागीदारी का निर्वाह करना पडता ह । बच्चो को आठ-दस घण्टे आयाओ के भरोसे छोडकर जाना होता ह । इस स्थिति मे माता-पिता के पूर्ण प्यार से वचित सतान किन परिस्थितियो मे परवरिश पाती हे यह आधुनिक समाज हेतु गहन चिन्तन का विषय हो गया है । अल्प आय वर्ग की आमदनी का एक हिस्सा यदि नोकरो पर खर्च कर दिया जाये तो ऐसी नोकरी करने से फिर क्या लाभ है । जीवन मे कुछ लोग ने ऐसे भी मिले जिन्होने बताया - महाराज श्री । मेरी पत्नी चाहती तो नौकरी

कर सकती थी मगर मेरे समझाने पर समझ गई। आमदनी के अनुसार ही हमने अपनी आवश्यकताएँ रखी सब कुछ ठीक चल रहा है । आपके आशीर्वाद से बच्चे भी योग्य निकल गये । घर मे अमन चैन है ।

आज के तनाव भरे वातावरण मे प्रत्येक मानव शान्ति चाहता है । जिसे घर मे ही शान्ति मिल जाती हे वह बाहर की ओर नहीं दौडता । समानता के आधार की भावना ने सामजस्य को चौराहे पर लाकर खडा कर दिया है । पढी लिखी, सम्पन्न, नौकरी पेशा महिलाएँ स्वय को अपने पति से एक कदम आगे देखने लगी हे । सविधान द्वारा नारियो को पुरुषो के समान आगे लाने हेतु विशेष अधिकार दिये जाने की चर्चा हो रही हे । भारतीय समाज मे नारी का जहाँ शोषण हुआ वहीं उसके अधिकार भी कम नहीं रहे हे । पाश्चात्य विचारधारा के कारण आज परिवार टूट रहे हे । अह की टकराहट से पति-पत्नी मे तलाक हो रहे है । यह स्थिति भारतीय समाज के लिए उचित नहीं हो सकती । जब नारी का लक्ष्य मात्र अर्थोपार्जन बन जाता हे तब समाज विखण्डित होने लगता ह । नारी तो भारतीय समाज का भावपक्ष हे । भाव ही कलापक्ष को नव रूप प्रदान करता है । नारी को चाहिए कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र - यथा धार्मिक, सामाजिक, पारिवारिक एव राष्ट्रीय क्षेत्र मे माँ, बहिन, पत्नी, पुत्री की पावन भूमिका का निर्वाह करते हुए अपनी प्राणवान प्रतिभा का परिचय दे । अपने बच्चो को बना कर विश्व शान्ति म अपना योगदान प्रदान करे । नारी दहरी रखे उस दीपक की भाति जलकर प्रकाश करे, जिसके कारण घर आर बाहर दोनो ओर उजाला फल सके ।

19 माँ और ममता

प्रवचन समाप्त हो चुका था । गोचरी के लिए स्थानक से बाहर पाव रखा ही था कि मेरी दृष्टि एक बालक पर पडी । दिसम्बर की ठड अपने पूर्ण योवन पर थी । वह बालक अपने मैले कुचेले बदन पर जीर्ण शीर्ण वस्त्र धारण किये हुए था । सर्दी मिटाने के लिए वह सूर्य की ओर मुँह किये बैठा था । उसके समीप पहुँचते-पहुँचते मेरे कदम ठिठक गये । मैंने उससे पूछा- अरे । क्या नाम है तुम्हारा ?

पप्पू - कापते हुए वह बोला ।

'किसके लडके हो ?'

वह कुछ भी नहीं बोला, इधर उधर देखकर मेरा मुँह ताकने लगा । उसी समय एक सज्जन वहाँ आ गये और मुझसे बोले - क्या बात हुई महाराज श्री ।

बात तो कुछ भी नहीं हे और देखा जाये तो बहुत बडी है । मैं इस बालक से पूछ रही थी कि तुम किसके लडके हो ?

यह तो अनाथ है महाराजश्री । इसके पिता का दो वर्ष पूर्व देहान्त हो गया था । कुछ समय के पश्चात् इसकी माँ ने दूसरा विवाह कर लिया । गाडिया लुहार ही तो ठहरे, यह बालक यहीं रह गया ।

'इसकी देखभाल कौन करता है ?'

'सामने सेठ साहब के यहाँ से सुबह शाम खाना मिल जाता है । घर का जो कुछ काम इससे होता है कर लेता है ।'

'तुम्हारे पास अन्य कपडे नहीं है क्या ?'

'हैं, वे भी ऐसे ही है ।'

तभी सामने के घर से निकल कर सेठजी भी आ गये उनसे सारी बात हुई तो बोले - इसे अभी कुछ दिन पहले ही नये कपडे सिलवा कर दिये मगर कहता है कि वे चुभते है । इनकी तो नगे बदन रहने की आदत हो गई, अब क्या करे।

वह हमारी बात सुनकर प्रसन्न था । सेठजी ने उससे कहा - पप्पूडिया घर जा, रोटी बन गई है, तू जा खा लेना ।

वह बालक चुपचाप वहाँ से चल दिया । मैं आगे बढ गई । गोचरी लेकर स्थानक मे आ गई, मगर उस बालक का चेहरा मेरी आँखो मे आकर ठहर गया । पिता का साया तो क्रूर काल ने छीन लिया मगर उस निष्ठुर माँ की ममता किसने छीन ली । माँ तो भगवान का दूसरा रूप होती हे, वे कोनसी परिस्थितियाँ रही होगी कि यह बालक आज अनाथ की भाति इस ग्राम मे पडा है । माँ शब्द कितना महान् होता है पर वह माँ तो जानवरो मे भी गई बीती गई । सामान्य रूप से जानवर भी अपने बच्चो के लिए प्राण न्योछावर करने तैयार रहते है यहाँ तो सारी स्थिति ही बदली हुई हे । वृहद् धर्मपुराण मे व्यासजी ने मातृस्तोत्र द्वारा माँ की गरिमा एव महिमा को उभारते हुए कहा है-

पितुरप्यधिका माता, गर्भधारण पोपणात् ।
अतोऽहि त्रिपु लोकेपु नास्तिमातृसमोगुरुः ॥

अर्थात् एक पिता जो कार्य वर्षो की लम्बी अवधि मे भी नहीं कर पाता उसे सस्कार सम्पन्न माता अल्प समय मे ही कर सकती है । गर्भकाल से लेकर युवा होने तक माता के सस्कार ही बच्चे को मिलते है अत तीन लोक मे माता

के समान बडा कोई गुरु नहीं है । माता तो बालक की प्रथम शिक्षिका होती है । माँ शब्द मे ही अतुलनीय आनद है । मातृत्व तो वह स्रोत है जहाँ हर क्षण पेम, धैर्य, त्याग, सौन्दर्य एव माधुर्य की बूदे छलकती रहती है । अमीरी हो या गरीबी, सुख हो या दु.ख, धूप हो या छाया, मा के प्रेम की धारा अनवरत पकट होती रहती है । यही सोचकर एक विद्वान ने कहा था कि भगवान हर जगह नहीं पहुँच सकता अत उसने माँ का निर्माण किया । माँ भगवान का प्रतिनिधित्व करने वाली धरती पर दैविक शक्ति है।

माँ मे भगवान का रूप देखते हुए ही तो एक कवि ने लिखा -

उसको नहीं देखा जग ने कभी, पर उसकी जरूरत क्या होगी ?

ऐ माँ तेरी सूरत से अलग, भगवान की सूरत क्या होगी ?

सचमुच माँ भगवान का ही रूप है । उस बालक की माँ का हृदय पाषाण कैसे बन गया । इस अबोध को दर-दर का भिखारी बनाने का कठोर निर्णय लेते समय उसकी छाती क्यो नहीं फट गई । वह इसे त्याग कर कहीं दूर भले ही चली गई मगर उसका हृदय तो आज भी रोता होगा । अरे वे बालक तो अभागे समझे जाते हैं जिनके जन्म लेते ही माँ का साया उठ जाता है पर इसका साया तो कोई इससे छीन कर ले गया । क्या ममता पर इन्द्रिय-विषयो की विजय हुई या माता-पुत्र के पूर्वजन्म गत वेर ने दोनो को अलग-अलग कर दिया । बालक के अशुभ कर्मो ने उसे अनाथ बनाकर इस ग्राम की झोली मे पटक दिया। खिलने से पहले ही इस सुमन को तोडकर सूखने हेतु यहाँ डाल दिया ।

इस विशाल ससार मे न जाने कितने फूल ऐसे होगे जो ममता की छाँव देखे बिना ही पथ के भिखारी वन गये । प्राकृतिक प्रकोप व युद्ध मे तो हजारो बालक अनाथ होते सुने गये है मगर कोई माँ जानबूझकर अपने कलेजे के टुकडे को त्यागकर पाषाण हृदय वन आगे वढ जायेगी, इससे वडी मानवता के लिए शर्म की क्या बात हो सकती ह ? पाषाण हृदय नारी को मा वनने का हक न मिले तो ही अच्छा हे। यही मेरे अन्तर्मन की भगवान से प्रार्थना हे ।

20 संस्कृति पर प्रहार

हम विहार करते हुए आज देवलिया कला पहुँच गये थे । श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाओ मे अपार उत्साह भरा हुआ था । हमारे आगमन के समाचार सुनकर के कई स्त्री-पुरुष ग्राम से बहुत दूर चलकर आ गये थे । स्थानक मे ग्रामवासियो की अद्भुत भीड थी । देवलिया को गुरुदेव आचार्य श्री सोहनलाल जी महाराज की जन्म भूमि होने का गौरव प्राप्त है । गुरुदेव का इस ग्राम के निवासियो पर वडा प्रभाव रहा है । देवलिया वालो की विनती को स्वीकार करके हम धर्म प्रभावना हेतु वहाँ पहुँचे थे । मध्याह्न का समय था । एक सज्जन हाथो मे कागजो का वण्डल लिए वहाँ आये । एक कागज उन्होने हमारे सामने रखकर कहा - व्यसन मुक्ति के लिए रोटरी क्लब विजयनगर-गुलाबपुरा ने ये पर्चे निकाले है। . ˜ पर लिखे वाक्य पर मेरी दृष्टि गई । लिखा था - खेनी ओर पान ममाला खाने वाले कभी वृढे नहीं होते हे । वाक्य पढकर में मन ही मन मुस्कराई आर वह पर्चा पास वेठे एक वृद्ध सज्जन की ओर वढा दिया । उन्होंने उसे पढकर कहा - अव हमारा वुढापा तो आ गया ह । हमे नही खाना पान मसाला ।

उन्हे शायद वाक्य का रहस्य समझ मे नही आया था इसीलिए वे अपनी वात वोल गये ।

मने कहा - ठीक ही तो लिखा ह । इन व्यसनो मे ग्रस्त युवक असमय ही वीमारियो को आमत्रित कर स्वय को मात क मुँह मे धकल दग तो वुढापा

कहाँ से आयेगा ? गुटखा और पान मसाला तो कैंसर जैसी भयानक बीमारियो को बढ़ावा देते हैं।

बात तो बिल्कुल ठीक है मगर उत्पादक कम्पनियो के भ्रामक विज्ञापन से आकर्षित होकर यह नई पीढी न जाने कहाँ जायेगी ? तभी दो-तीन विद्यार्थी, जो कॉलेज की शिक्षा प्राप्त कर रहे थे, वहाँ आ गये । वन्दना करके वे सामने ही बैठ गये । मेरा ध्यान उनके मुख की ओर गया । दातो के रग से पता चल गया था कि वे गुटखा के शौकीन होगे। मैंने पूछ लिया - गुटखा खाते हो ?

वह अपने साथी का मुँह देखकर बोला - कभी-कभी खा लेता हूँ ।

'तुम भी खाते हो ।' दूसरे से पूछा ।

'मैं खरीदकर कभी नहीं खाता महाराजश्री । मित्र लोग नहीं मानते हैं तो कुछ दाने ले लेता हूँ ।'

'व्यसन की आदत इसी प्रकार पडती है । आज तुम्हारे मित्र खिला रहे है कल तुम्हे स्वय खरीद कर खाना पडेगा । क्यो भाई । कितने मे आता है यह गुटखा ?'

'वह कुछ बोलता उससे पहले ही दूसरा बोला - महाराजश्री । यह रजनीगधा आर तीन सो बीस तुलसी काम मे लेता है जो पाँच रुपये मे आती है ।'

'दिन मे पॉच-सात गुटखे तो खा ही लेते होगे ?'

'क्या करूँ महाराजश्री । आदत जो पड गई हैं । छोडना चाहता हूँ मगर यह छूटती नहीं है ।'

'देखो आज तुम हमारे पास आये हो तो हमारी बात भी माननी चाहिए । आज से तुम एक गुटखा सवेरे और एक शाम को बस इससे अधिक नहीं खाओगे ।'

'आप कहते हे तो प्रयास करूँगा कि धीरे-धीरे इसे खाना ही छोड दूं ।'

'भाई अब तुम भी इस पथ के राही बन रहे हो, मुफ्त मे जहर मिलता है तो क्या कोई पी लेगा ? मैंने दूसरे से कहा ।'

'नहीं तो ।'

'यह धीमा जहर ही है । तुम्हे इसका आज ही परित्याग कर देना है । तुम्हे आज प्रतिज्ञा करनी है । अब इसे त्याग दो इसी मे तुम्हारा भला है ।'

मेरी बात को उन्होने मुस्कराकर स्वीकार कर ली और मगल पाठ सुनकर चले गये । मै विचार करने लगी यह नई पीढी कब जाग्रत होगी । तम्बाखू से बनी वस्तुओ पर सरकार ने छपवा रखा है कि 'तम्बाखू का सेवन स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है'' फिर भी वे पढे लिखे आँखे बन्द करके खाये जा रहे हैं। लोक हितकारी सरकार कर के लोभ मे आकर करोडो भारतीयो के जीवन के साथ खिलवाड कर रही है । धन एव स्वास्थ्य पर कितना दुष्प्रभाव पड रहा है । एक जमाने मे बार-बार जूठा मुँह करना बुरा माना जाता था, मगर इस गुटखे के प्रचलन ने तो भारतीय सभ्यता एव सस्कृति को ही गिरवी रख दिया है । उत्पादक कम्पनियाँ अखाद्य पदार्थो का मिश्रण करके देश की युवा पीढी को पगु बनाने पर तुली है । लोग बीडी- सिगरेट से बचे तो इस जाल में उलझ गये। इस वैज्ञानिक युग मे मानव भौतिकता के भवर मे फसकर स्वय के विनाश पर उतारू हो गया है । जिसके मन में पीडा है, दर्द है वे व्यसन मुक्त समाज का निर्माण करने हेतु अपना प्रचार कर रहे हैं । पान मसाला एव तम्बाकू से होने वाली बीमारियो का शोधपरक चिट्ठा बनाकर बता रहे हैं । धन्य हैं उन लोगो और उन सस्थाओ को जिन्हे यह विश्वास है कि हमें अपने प्रयास धीमे नहीं करने है, अवश्य सफलता मिलेगी । हमारी बात सुन-पढकर सौ में से दस व्यक्ति भी अपने मे सुधार कर पाते है तो हमारा प्रयास सफलता की ओर गतिशील है । हमे विश्वास है कि हम एक व्यसन मुक्त समाज की रचना करने मे सफल होंगे ।

❀ ❀ ❀

21 नई पीढ़ी का भविष्य

जून की भीषण गर्मी मे सुबह शाम विहार करते हुए फूलिया कला पहुँच गये थे । श्रद्धालु भाई-बहिनो के अत्यधिक आग्रह को स्वीकारते हुए कुछ दिन वहीं रहने का मानस बन चुका था । नानक वश मे नवदीक्षित श्री सन्तोष मुनिजी की यह जन्म और कर्मभूमि भी है । हमारे आगमन से सभी के मन मे उमग का सागर लहरा रहा था । ग्रीष्मावकाश के कारण छात्र-छात्राओ की भीड भी स्थानक मे हर पल बनी हुई थी । ऐसे सुअवसर का लाभ उठाने का विचार कर श्रद्धालुओ ने पच दिवसीय धार्मिक शिविर लगाने का विचार रखा। शुभस्य शीघ्रम् का भाव फलीभूत हो गया। पढने वाले यदि तैयार हों तो पढाने वालो की कोई कमी नहीं है । धार्मिक शिक्षण शिविर की घोषणा हो गई और नियत दिवस पर अनेक बालक-बालिकाएँ धर्म स्थानक मे पहुँच गये । अध्ययन अध्यापन का कार्य योजनानुसार प्रारभ हुआ । इन पाँच दिनो मे बालको ने क्या सीखा है इसकी परीक्षा का समय पच्चीस जून निश्चित हो गया ।

मध्याह्न के समय अपने नियत स्थान पर परीक्षार्थी आकर के बैठ चुके थे । मुझे एक भाई ने आकर बताया महाराजश्री । बालक-बालिकाएँ आ चुके हैं अब आपकी प्रतीक्षा है । एक दृष्टि दीवार पर टगी घडी पर डालकर मैं उठ गई और कक्ष मे निकलकर भवन की पहली मजिल पर आ गई । मुझे देखकर सभी बालक-बालिकाएँ एक साथ उठकर खडे हो गये । उनका अभिवादन स्वीकार कर बैठने का सकेत करते हुए मैंने अपना आसन ग्रहण कर लिया । मेरे आसन

ग्रहण करने के पश्चात् समवेत स्वर मे उन्होने गुरुवन्दना का पाठ बोलकर विधिवत् झुकते हुए वन्दन किया। मैंने भी सभी को शुभकामना पदान करते हुए मगल पाठ सुनाया । प्रश्न पत्र वितरित कर दिये गये ।

सभी बालक-बालिकाएँ प्रसन्न मन से प्रश्न पत्र लेकर हल करने लगे। निरीक्षण हेतु एक अध्यापिका कक्ष के मध्य खडी होकर सबको देख रहीं थी। मैं एक पुस्तक के अध्ययन मे लग गई । कुछ क्षणो तक तो कक्ष मे सन्नाटा रहा, मगर अब वह शनै शनै शोर मे बदलने लगा था । मेरी निगाहे कुछ ही दूर बैठे एक नन्हे बालक पर जाकर ठहर गई । वह चुपचाप कलम को अपने कपोलो पर लगाये प्रश्न का हल स्मरण कर रहा था । दृष्टि जब दूर गई तो वहाँ स्थिति अलग ही प्रकार की थी, किशोर वय के बालक खुसर-पुसर करके एक दूसरे से प्रश्न का उत्तर जानने की कोशिश कर रहे थे । किशोरियाँ भी पीछे नही थी । वे भी निगाहे चुराकर प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने की कोशिश म लगी थी । यह स्थिति देखकर मैंने आसन त्याग दिया और कक्ष के मध्य मे खडी होकर सोचने लगी । क्या यही है परीक्षा पद्धति? ये विद्यालय एव कॉलेज मे शिक्षा पाने वाले छात्र-छात्राएँ नकल, पूछताछ, ताकझाक आदि अवध ढग से उत्तर लिखकर परीक्षा मे पास होने का प्रयास करते ह । यह तो धर्मस्थान ह, अनुचित साधनो को अपनाने से तो अच्छा है परीक्षा ही न दी जाय। मैंने उनको टोक दिया । कुछ पलो के लिए फिर सन्नाटा छा गया । यह सन्नाटा ाक था । मेरे मुँह फेरने पर पुन पूर्व-सी स्थिति आ गई । मने निरीक्षिका जागरूक रहकर परीक्षा कार्य सम्पन्न करने को कहा । वे उस स्थान पर पहुँच ई जहाँ खुसर पुसर का स्वर अधिक था । उन्हे अपन पास खड देखकर एक बालिका ने कहा - आप हमारे पास खडे न रहे, आपक देखने पर हमारी कलम ठहर जाती ह ।

में उस बालिका की बात सुनकर पुन विचार कर रही थी कि नई पीढी को हो क्या गया ह ? बिना परिश्रम किये आज का विद्यार्थी सफलता के सोपान चढना चाहता ह । आने वाली पीढी का भविष्य क्या होगा ? हमारा राष्ट्र

करके कब तक आगे बढेगा ? यह अपनी मौलिकता का परिचय कब देगा ? नइ पीढी म सस्कारा का अभाव क्यो हे ? दिन पतिदिन देश की दशा क्या बिगड रही है ? मेरा मन भारी हो गया था । अनमने भावो का बोझ लिए मै परीक्षा कक्ष को छोडकर पुन ऊपर चली आई । परीक्षा का समय भी समाप्त हो गया, उत्तर पुस्तिकाएँ सग्रह कर ली गई थी । निरीक्षिका उत्तर पुस्तिकाएँ लेकर मेरे पास आ गई और बोली - ये पुस्तिकाए है महाराजश्री ।

'बाँधकर रख दो - मैंन कहा ।'

वह उत्तर पुस्तिकाओ को बाधकर कक्ष मे दीवार के सहारे रखकर बाहर निकल गई । मेरा ध्यान पश्चिमाँचल की ओर जाते सूर्य पर टिक गया था । उसका तेज धीरे-धीरे कम पड चुका था । सूर्य की लालिमा से पश्चिम का भाग लाल दिखाई दे रहा था । उसी समय पक्षियो का एक विशाल झुण्ड आकाश मार्ग मे पक्तिबद्ध उडता हुआ दिखाई दिया । उन्हे देख मन प्रफुल्लित हो उठा - किसने सिखाया उन्हे पक्तिबद्ध उडना ? सस्कार ही इन्हे ऐमे मिले होगे वे बच्चे जो आज परीक्षा दे रहे थे, वे ही नहीं उन जैसे करोडो बच्चे, उन्हे किसने सिखाया परीक्षा मे अनुचित साधन अपनाकर पास होना ? गुरु का ज्ञान तो सबके लिए एक समान होता है । एक बालक योग्यता, प्रवीणता सूची मे नाम लिखाता है, एक अनुत्तीर्ण हो जाता है । एक अपनी होशियारी का बखान करता हुआ इतराता है कि मैं कैसे पास हुआ हूँ । ऐसे विद्यार्थी का भविष्य क्या होगा, उसे स्वय को ही पता नहीं होता हे । इन्हे देखकर के मन कह उठता ह कि -

उत्तर ही नहीं है मेरे सवालों में ।
रोशनी कम धुआँ ज्यादा है मशालो में ॥

शिविर के समापन-समारोह के पसग पर मैंने उन शिविरार्थियो को नेतिक एव प्रामाणिक बनने का सदेश दिया । सभी ने करबद्ध क्षमा-याचना की एव भविष्य मे भूल नहीं करने का सकल्प स्वीकार किया । उनको देखकर में प्रमुदित हो उठी ।

22 सच्चे बागवान

चातुर्मास प्रवास चल रहा था । ग्राम मे धर्म-ध्यान का अद्‌भुत ठाट लगा हुआ था । विद्यालयो मे सवेरे का समय होने के कारण दोपहर के पश्चात् अनेक वालक-वालिकाएँ स्थानक मे आ जाते थे । आगन्तुक बालको मे धर्म के प्रति लगाव देखकर प्रसन्नता होती थी । सभी से अच्छा परिचय भी हो गया था । स्थानक के समीप रहने वाले जेन परिवारो की श्रद्धा एव भक्ति देखकर मन प्रमुदित था । श्रावक-श्राविकाएँ नियमित प्रार्थना, प्रवचन, प्रश्नोत्तर सभा मे आकर अपनी उपस्थिति दिखा रहे थे ।

एक दिन मध्याह्न मे धर्मचर्चा चल रही थी, नई पीढी का धर्म के प्रति झुकाव न देखकर सभी के मन मे कसक थी । एक श्रावक जी से मैंने सहज ही पूछ लिया - आपके कितने वच्चे ह ?

"एक वच्ची और दो बच्चे हें महाराजश्री । बच्ची ओर एक बच्चा ता उधर सतीजी के पास वैठकर कुछ सीख रहे हैं । वडा वच्चा दसवीं मे पढता हे पर उसकी धर्म मे कम रूचि ह, वह स्थानक मे नहीं आता ह ।

मुझे आश्चर्य हुआ । म कुछ क्षण ठहर कर वोली - यह क्या कह रहे ह आप ? आपका पूरा परिवार धर्म एव गुरु के प्रति सदव श्रद्धालु रहा ह। आप कह रहे हैं कि वह नहीं आता ह । आप उसे एक वार लेकर तो आय आखिर क्या कारण हे मे भी तो जान सकू । अभी कहाँ है वह ?

'इस समय तो घर पर ही होगा ।'

'आप उसे स्थानक मे आने की प्रेरणा करे ।'

वे सज्जन तत्काल उठकर के बाहर निकल गये । कुछ क्षणो बाद जब वे लौटकर आये तो उनके साथ वह लडका भी था । उसने आकर शिष्टाचार का निर्वाह करते हुए वन्दना की और चुपचाप बैठ गया । वातावरण की चुप्पी को तोडते हुए मैंने पूछा - क्या नाम है तुम्हारा ?

'अमरचन्द'

'तुम्हे यहाँ कभी देखा नहीं ।'

'मैं यहा पर बहुत कम ही आता हूँ ।'

'अरे, तुम तो जैन परिवार के सदस्य हो, परिवार वालो ने क्या तुम्हे सस्कार नहीं दिये हैं ।'

'सस्कार तो मुझे मिले हैं मगर धर्म की बाते मुझे फालतू लगती है ।'

'धर्म जीवन की शान्ति के लिए परमावश्यक हैं । महापुरुषो का जीवन यू ही महान् नहीं बना, उन्होने धर्म को जीवन मे उतारा है । तुम्हे भी अब नियमित रुप से स्थानक में आना चाहिए ।'

उसने एक दृष्टि अपने पिता पर डाली और बोला - ठीक है, आऊँगा मगर मेरी भी आपसे एक शर्त है कि मुझसे धर्म की बात नहीं करेगे । ऐसा कहकर वह चुपचाप उठा और वाहर निकल गया ।

मैं वालक को वाहर जाता हुआ देखती रही । उसके पिताजी भी वन्दना करके चल दिये । वालक का चेहरा वार वार मेरी आँखो मे वन रहा था । मैं सोच रही थी कैसा लडका है, हमसे कह रहा है कि मुझसे धर्म की वात नहीं करो । कमाल है, हम धर्मगुरु के पद पर प्रतिष्ठित साधु-साध्वी यदि धर्म की वात नहीं करेगे तो क्या पाप कार्यो की प्रेरणा करेगे । कहा से आये इनमे ये सस्कार ? अपने हम उम्र मित्रो से जिस प्रकार कहता है कहकर चला गया ।

इसका जिम्मेदार कौन है? बालक मे ऐसे सस्कार कहा से आये ? यह किन लागा की सगति म पडकर जीवन को अभिशप्त बनाय जा रहा ह, इसका ज्ञान परिजनो को होना जरूरी है ।

इस बालक की यही दशा रही तो आने वाले समय मे इसका जीवन अशान्त बन जायेगा । इस जैसे न जाने कितने बालक होगे जो शनै शनै धर्म से हटते जा रहे है । सभी इसकी तरह हो गये तो धर्म एव धर्मगुरुओ की महत्ता कैसे सुरक्षित रह पायेगी । ऊपरी मन से ही सही इसने नियमित यहॉ आने की बात स्वीकारी है । बुरे स्थान पर जाने से बुराई आती हे, कहा भी गया हे - **'काजल की कोठरी मे कैसो भी सयानो जाय, एक लीक काजल की लागी है जी लागी है ।'** यह तो धर्म स्थान है यहा तो हर ओर अच्छाई हे, यदि नियमित आयेगा तो सस्कार अच्छे ही बनेगे । यह बालक तो अभी कच्ची कलम हे । माली भी कमजोर पौधे की जमीन बदलकर, खाद पानी देकर निराई-गुडाई करके, उसे फल देने योग्य बना देता है । इस बालक के मन मे बुराई का अकुर फूट गया है । सच्चे बागवान की तरह सत्सस्कारो का बीजारोपण कर इसका जड से विकास करना ही हमारा दायित्व है ।

यह बालक अभी नादान है, मानव का स्वभाव होता है कि वह अज्ञान की अवस्था मे पाप करता है । ज्ञान के जाग्रत होने पर वह पाप कर्म से अलग रहने की सोचता है । इसे ज्ञान की दिशा मे अग्रसर होने की प्रेरणा मिले यह लिए भी शुभ होगा और मेरे कर्त्तव्य का निर्वाह भी हो सकेगा । इसके जैसे न जाने कितने अज्ञानी बालक इस ससार मे सच्चे मार्गदर्शन के बिना पथ भ्रमित हो रहे होगे । इन पथ भ्रमितो को धैर्य से सुमार्ग पर लाना होगा ।

प्रत्येक सन्त-सती इस ससार मे पथ भ्रमित अज्ञानी व्यक्तियो को पुण्य के पथ का पथिक बनाने हेतु प्रतिपल सजग रहे तो धर्म का सुराज्य स्थापित होने मे विलम्ब नहीं होगा । कहा भी है -

संत न होते जगत में तो जल जाता संसार ।

❀ ❀ ❀

23 अतीत के सुनहले पल

सूरज के ढलने के साथ ही श्राविकाओ का स्थानक मे आगमन होने लगा। आने वाली श्राविकाएँ सामायिक मे बैठ चुकी थी । हमने भी प्रतिक्रमण पारभ कर दिया । पतिकमण पूरा होने के पश्चात् सभी सतियाँ गुरुणी जी के समक्ष बठ कर धर्मचर्चा करने लगी । रात ढलती जा रही थी । श्राविकाएँ अपनी सामायिक पूरी कर वन्दन करके अपने घरो मे लोट रही थी । साढे नौ बजते-बजते स्थानक लगभग सूना हो चुका था । दो बहिने रात्रि में यहीं रहती थी, समय देखकर उन्होने अपनी दरी फैला दी । अग्रजा एव अनुजा साध्वी बहिनें भी अपनी शय्या को यतना सहित फेलाकर निद्रा को आमत्रण दे रही थी । दीवार घडी ने दस बजने की घण्टा ध्वनि की तो मैंने भी अपने पाव फैला दिये ।

चारो ओर सघन अधकार पसरा हुआ था । मैं प्रतिदिन रात्रि के दस बजने के साथ ही सोने की अभ्यस्त रही हूँ । आज मेरी आँखो मे नींद की दस्तक नहीं हो पाई । अतीत की स्मृतियाँ मन को झकझोर कर जगा रही थी । मैं चाहती थी कि नींद आ जाये मगर उसे अभी नहीं आना था अत वह नहीं आई । उसकी जगह स्मृतियो के खजाने से निकल-निकल कर बीते समय व सुखद पल स्मृति पटल पर छा गये । समय कितना तीव्र गति से दोडा जा रहा है । जीवन पथ पर कितने लोग मिलते हैं और विछुड जाते हैं । सज्जनो

का सयोग सदैव अन्तर को आनद प्रदान करता है तो दुर्जनो का वियोग मन को शान्ति देता है । जो कल तक हमारे सामने थ आज उनकी कवल स्मृति ही है । जन्मदाता पिताजी एव जीवनदाता गुरुवर का सुखद सयोग अब वियोग मे बदल गया । इन चर्म चक्षुओ से देखते-देखते वे अगोचर हो गये ।

वे दिन हवाओ मे गुम हो गये । घण्टो तक जिनके सान्निध्य मे रहे, वे जीवन के सत्य को समझाकर, पथ प्रदर्शन करने वाले गुरुवर इस असार ससार को त्याग कर पचभूत मे समा गये वहीं बचपन मे अगुली पकडकर आगन में चलना सिखाने वाले पिताश्री का भी वियोग हो गया । अब तो उनकी बताई बाते ही याद रह गई है । एक दिन पिताजी के साथ-साथ गुरुवर के दर्शन किये थे । उनका तेजस्वी ललाट, सौम्य मुख-मण्डल, गभीर चिन्तन प्रधान वाणी को सुनकर मन मे वैराग्य की लहर उठ गई । मन मे एक ही बात आकर बैठ गई कि इस अमूल्य मानव भव को साधना के क्षेत्र मे अग्रसर करना हे । पहली बार पिताजी के समक्ष मन के भाव प्रकट किये तब वे तो भौंचक्के ही रह गये थे । उन्हे विश्वास ही नहीं हो रहा था कि यह बात में कह रही हूँ । मेरी दृढता के आगे आखिर मे उनको झुकना ही पडा। गुरुदेव श्री के उपकार को तो भूला ही नहीं जा सकता जो बार-बार कहते थे - 'साधना का मार्ग बहुत कठिन है, अच्छी तरह सोच विचार कर कदम आगे बढाना । यह पथ तो नगी के ऊपर पाँव रखकर दौडने के समान है ।'

मैं मुस्कराकर कह देती - 'मेरा निर्णय अटल है गुरुदेव । अब इसमे परिवर्तन नहीं आ सकता । यदि मुझे आग के दरिया मे होकर भी गुजरना पडे तो भी मैं पीछे पॉव नही हटाऊँगी । मै बढ चली वीतराग प्रभु के पावन पथ पर दिन, महिनें, वर्ष बीत गये । यात्रा अनवरत चल रही हे । आज न पिताजी है न गुरुदेव, वे होते तो मेरा मूल्याकन करते कि मेरी गति कैसी हे । म स्वय ही अपना मूल्याकन करती हूँ तब लगता है - अभी लक्ष्य बहुत दूर है । मुझे अपनी यात्रा को न तो विराम देना है ओर न ही एक स्थान पर बेठकर विश्राम

करना है । चलना जिन्दगी और रुकने का नाम मौत है । ज्ञान, ध्यान, आराधना, तप के क्षेत्र मे अहर्निश बढना ही साधना की सफलता का सूत्र है ।

बीते वर्षो मे गुरुवर से मिलना तो किसी विशेष प्रसग पर ही हो पाता था मगर पास मे बैठने पर लगता था कि एक वर्ष का अन्तराल कुछ भी नहीं था । गुरुदेव का स्नेह अनुपम रहा है । यदि मैं महावीर के पथ की अनुगामिनी नहीं बनती तो क्या मुझे भी इस जाती हुई शताब्दी के कोलाहल का हलाहल पीना पडता । जीवन मे अशान्ति के वज्र की चोट सहनी पडती । बाहर सब ओर अशान्ति है । मैं भीतर की ओर उन्मुख हो गई जहा सिर्फ शान्ति का साम्राज्य है ।

लोग जब यथार्थ के किनारो से टकराते है तब किसी किसी की ही मूर्च्छा टूटती है । मूर्च्छा टूटने पर वे जान पाते हैं कि यह परिवार जमीन, धन सम्पत्ति तो मात्र एक सपना है । सपने किसी के अपने नहीं होते है । यह ससार सपनो को ही सत्य समझ कर उसके मकडजाल मे उलझता जा रहा है । मैंने जागते हुए सपना देखा और वह पूरा हुआ । आज भी मैं जागते हुए बीते समय का स्मरण करके उसकी स्मृति को पुन ताजा कर रही हूँ । लोग कह रहे थे गुरुदेव हमारा साथ छोडकर चले गये मगर मेरा मन कहता है कि वे तो आज भी हर स्थान ओर हर समय हमारे पास है । जब भी मन मे कोई गुत्थी उलझ जाती है, गुरुदेव का स्मरण होते ही सब कुछ ठीक हो जाता है । जो अपने हितैषी है वे देह रूप से भले ही चले जाये मगर सच्चे मन से स्मरण करने पर वे आँखो मे तस्वीर के समान उभर आते हैं । उनका भव्य रूप मेरे मन मे आज भी समाहित हैं यह सोचते-सोचते कब निद्रा ने मुझे अपनी गोद मे बैठा लिया पता ही नहीं चला । सवेरे चार बजे जब जागरण का समय हुआ तब बीती रात की बाते सोच-सोच के मेरा मन मुस्करा रहा था ।

❀ ❀ ❀

24 अंतर का अंधकार

दिसम्बर की दुपहरी मे भिनाय से विहार करके हम निरतर आगे बढते जा रहे थे । लक्ष्य था टाटोटी पहुँचने का, सहज गति से चलते हुए समय पर वहाँ पहुँच गये । आकाश के पश्चिमी क्षितिज पर छितराये बादलो ने स्वय को सूरज के सान्निध्य से कुकुमवर्णी बना लिया था । उसे देखकर लग रहा था मानो सध्या सुन्दरी ने अपनी माग भर ली हो । प्रकृति के उस मनोरम रूप को निहारते हुए हमने ग्राम मे प्रवेश किया । स्थानक तक पहुॅचते-पहुॅचते अनेक धर्मप्रेमी सुश्रावक भी आ गये। सूर्य क्षितिज की गोद मे जा रहा था । निशा ने दबे पाँव आकर धरती को काली चादर ओढा दी ।

उपयुक्त स्थान को देखकर अन्य सतियो ने रात्रि विश्राम हेतु शयनासन दिये थे । महिलाएँ भी हमे आया जानकर वहाँ आती जाती रही । सर्दी अपना असर जल्दी ही दिखाना शुरु कर दिया । दीवार घडी ने रात्रि के नौं बजने का सकेत दिया । मै द्वार से कुछ दूर बैठी आकाश कीओर ताक रही थी । आकाश की गोद मे अनगिनत तारे छिटके हुए थे । इतने तारो के होते हुए भी चारो ओर अधकार था । मुझे अपना फैलाया हुआ हाथ भी स्पष्ट दिखाई नहीं देता था ।

मन मे विचार आया - कुछ घटो पूर्व दिन था अब रात है । रात प्रकृति के प्रत्येक प्राणी को विश्राम प्रदान करने आती है । इसके कारण तन को ही

नहीं वल्कि मन को भी विश्राति मिलती है । साधना के क्षेत्र मे लगे साधक तो रात्रि मे पभु आराधना करके अन्तर मे उजाला भर लेते है । कोलाहल के हलाहल से बचने को साधक की भावना निशा को निमत्रण देती है ताकि वह ध्यान स्वाध्याय, चिन्तन, मनन एव जप से जीवन मे नया तेज प्राप्त कर सके।

मैं नेत्र बन्द कर ध्यान मे रत हो गई । दो घण्टे पश्चात् नेत्र खोल कर आकाश की ओर देखा सब कुछ पहले-सा ही था । घडी ने ग्यारह बजने के टकारे लगाये। शारीरिक बाधा निवारणार्थ रजोहरण के सहारे आगे बढी । दिखाई कुछ भी नहीं दे रहा था । पूर्व का ध्यान एव अनुमान के सहारे बाहर जाकर लाट आई । कपाट के हिलने का स्वर सुनकर साध्वी बहिन उठ बैठी और बोली- वाहर कितना अधकार है ।

'अतर के अधकार से सघन नहीं हैं ।'

'मैं कुछ समझी नहीं ।'

यह अधकार तो कुछ घण्टो का है, फिर सूरज निकलेगा और अधकार भाग जायेगा । भीतर जो अज्ञान का अधकार है उसके कारण आत्मा भटकती रहती है।

'जिसे वोध हो जाता है वह इस तमस को हटाने का प्रयास करता है ।'

सफलता के बिना सारे प्रयास निरर्थक चले जाते हैं । अधकार मे मानव को भय सताता है इसलिए वह कृत्रिम उजाला करके अधकार को हटाने का पयत्न करता हे मगर भीतर का अधकार भगाने के लिए वह कुछ नहीं करता। आखिर क्यो ?

'हम तो सदैव इसी मे लगे हैं कि भीतर उजाला हो, भीतर उजाला हुए बिना वाहर का उजाला सिर्फ भम हे । इस भ्रम को दूर करने मे ही जीवन का कल्याण है । जो ज्ञान रश्मियाँ शास्त्रो एव साधको के पास हे उन्हे विकीर्ण करना है । विपय-कपायो के विपेले जीव-जन्तु अज्ञान के, अधकार मे जाग्रत हो जाते

है, यदि ये काट खा गये तो न जाने कितने भवो तक भटकना पडेगा । राग द्वेष के कटकाकीर्ण मार्ग पर गिर पडे तो अशान्ति के असह्य शूल जीवन को छेद देगे । मोह-ममता की दीवार से सिर टकरा गया तो कितनी वेदना की अनुभूति होगी, कभी सोचा है तुमने ।

'हम और क्या करे आप ही बताइये ।'

'ज्ञानियो ने जिस मार्ग का अनुसरण किया उसी पर आगे बढो । सोना जिसके पास है वह दिन मे भी भय खाता है कि कोई छीन न ले । रात्रि मे उसके कारण नींद हराम हो जाती है । ज्ञानी यही सोचकर कहता हैं कि सोने के टुकडे करके देख और कह कि सो ना या फिर विपरीत कर - उल्टा करके पढ, ना सो मानव जीवन मिला है इसे सोने मे मत व्यतीत कर । सदैव जाग्रत बन । ज्ञान का दीप जलाकर देखेगा तो पायेगा कि कहीं भी अधकार नहीं है। बाहर का अधकार तो सामान्य जन दीप जलाकर भगा सकता है मगर अन्तर का अधकार तो सच्चा साधक ज्ञान, भक्ति एव विवेक की रश्मियो को मन मे उतारकर ही दूर करने मे सक्षम है । 'कोशिश तो अहर्निश कर ही रहे हे ।'

कोशिश करने वालों को हार नहीं मिलती है ।
स्नेह-दीप के होने पर ही जीवन बाती जलती है ॥

❀ ❀ ❀

25 नया समाज
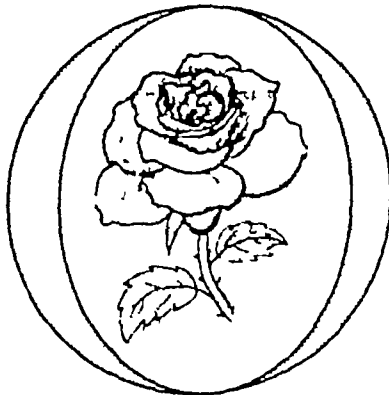
सरवाड, अजमेर एव केकडी के मध्य बसा छोटा सा कस्बा है । ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती नवाज के बडे पुत्र की दरगाह होने के कारण मुस्लिम धर्म के अनुयायियो के लिए यह श्रद्धा का केन्द्र भी है । अन्य धर्मावलम्बियो के साथ जैन धर्म के अनुयायी भी वहाँ काफी सख्या मे है । अजमेर चातुर्मास के पूर्व वहाँ जाना हुआ । व्याख्यान के पश्चात् कुछ साध्वियाँ गोचरी हेतु नगर मे गई हुई थी । मैं एक पुस्तक को लेकर पढ रही थी तभी एक लडकी ने आकर वन्दना की । कुछ क्षण उसकी ओर देखकर मैंने कहा - अरे ! तुम कब आई?

'आज ही आई हूँ । घर पर पिताजी ने बताया कि आप सरवाड मे है, दर्शन की उत्कठा थी, चली आई ।'

'यह क्या दशा बना ली है ? इस अवस्था मे ही घने काले केशो पर श्वेत रग चढ गया । चेहरे पर झुर्रियाँ ?'

'बहुत दिनो के बाद आप देख रही है, सात वर्ष बाद आपके दर्शन का सौभाग्य मिला है ।'

'घर परिवार मे तो आनन्द है । धर्म साधना कैसी चल रही है ?

कैसी साधना कैसा घर कैसा परिवार ? अब पिता एव भाइयो के सहारे जीवन के शेष दिन गुजार रही हूँ । निराशा के भाव से वह बोली ।

'क्या बात हो गई । पतिदेव तो धार्मिक रूचि वाले ह ।'

अब क्या कहूँ महाराजश्री । यह कहते-कहते उसकी आँखो मे अश्रुघन उमड आये।

'धीरज रखो, क्या बात है ?'

'धीरज ही तो रख रही हूँ यदि उसे ही छोड देती तो आज आपके सामने नही होती महाराज सा ।'

'आखिर बात क्या हो गई ?'

'मेरे कर्मों मे दु ख लिखा था बस उन्हे ही भोग रही हूँ । मेरे पिताजी ने अपनी आर्थिक स्थिति से अधिक मेरे विवाह पर खर्च किया सामने वाले का सम्मान रखने के लिए कर्ज की कवल सिर पर डाल ली लेकिन ससुराल वालो का फूटा घट तो वे नहीं भर सकते थे ।'

'तो क्या दहेज की बलिवेदी पर तुम भी चढा दी गई ।'

'हाँ यही बात थी । कुछ समय तक तो मेरे आँसू देखकर पिताजी विवश होकर माग की पूर्ति करते रहे । ससुराल वालो का मुख तो सुरसा की तरह फैलता ही गया । निराश होकर पिताजी ने हाथ डाल दिये में अबला क्या करती? पति और सास की मार तन पर झेलती हुई टूट गई, मन ने विद्रोह कर दिया और एक सुबह बस मे बैठकर पिता के घर पहुँच गई । मे उनके हृदय का टुकडा थी । मुझे देखकर वे भी अपने आसू नहीं रोक पाये । पीहर वालो का सहारा नहीं मिलता तो अब तक इस जीवन का ही अन्त हो गया होता ।

उसके होठ बात कहते हुए स्पन्दित हो रहे थे । आँखो मे उमडे अश्रु उसके गहन दु खो की कहानी कह रहे थे ।

'परिवार और समाज ने कुछ नहीं किया ?'

परिवार क्या करता ? समाज की दशा तो किसी से छिपी हुई नहीं ह। समाज अव हे कहाँ ? सबको अपनी-अपनी पडी हे । कुछ ने ससुराल वालो को समझाने का प्रयास भी किया मगर पत्थरो पर क्या पभाव पडता ह । शादी

के बाद ससुराल को ही अपना घर समझा । प्रत्येक अच्छी बुरी बात को होठो को सीकर सह लिया । पर सहने की भी सीमा होती है । ससुराल वालो की बाते सुन-सुनकर मैं काप उठी और चुपचाप प्राण बचाकर पिता के पास चली आई । समाज मोन है । कभी-कभी किसी को कहकर दु ख हल्का कर लेती हूँ ।

वह अपने आँचल से आँसू पोछती रही । बात सुनकर धैर्य बँधाने मे वह चुप हो गई । अब तक गोचरी आ गई थी । मेरा आहार करने का मन नहीं रहा । छोटी साध्वीजी ने आकर निवेदन किया लेकिन उस लडकी की बात सुनकर मन भर आया । बारी वालो का बुलावा आया तो उनके अति आग्रह पर वह वन्दना करके उके साथ चली गई ।

वह उठकर चली गई मगर उसकी मर्मभेदी सिसकियो ने मुझे भीतर तक उद्वेलित कर दिया । समाज की यह क्या स्थिति होती जा रही है । जिस समाज को जीवन्त करने हेतु महापुरुषो ने अपना जीवन दाव पर लगा दिया क्या वही समाज अब टूट जायेगा । क्या फिर अराजकता के दौर मे भारतीय समाज चला जायेगा । जिस समाज मे चेतना नहीं है रूढियो के शिकजे मे कसा वह समाज कब तक जीवित रहेगा । जो अपने ही लोगो के आँसू नहीं पोछ सकता, अपने सदस्य की व्यथा नहीं मिटा सकता वह मृत्यु कीओर उन्मुख होता समाज है । जो अपने कर्त्तव्यो को भूल जाता है वह अधिकारो का अधिकार खो देता है, जिस समाज मे व्यक्ति असुरक्षा के घेरे मे सिसकियाँ लेते हुए जीता है उसका अस्तित्व कैसे स्थायी हो सकता है । न जाने कितनी बेटियाँ आडम्बरो की आँच मे झुलस रही होगी । समाज को तोडने वाली ये पथाएँ कब बन्द होंगी । कब नव समाज की रचना होगी जहाँ सच्चे प्रेम के समक्ष धन की स्थिति तुच्छ होगी ।

❁ ❁ ❁

26 हमें क्या अधिकार है ?

कल शाम से ही स्वास्थ्य कुछ अनुकूल नहीं था । मौसम का बदलाव एव विहार की थकान के कारण ज्वर की स्थिति बन गई थी । अगले दिन विहार करना था । मन मे उहापोह की स्थिति हो रही थी । मैंने निर्णय कर लिया था कि विहार तो करना ही है । सवेरे जब उठी तो तन-मन दोनो ही तरोताजा थे। मन को असीम शान्ति मिली, भोर होते ही विहार कर दिया । विहार यात्रा अधिक लम्बी नहीं थी, मगर शारीरिक कमजोरी ने वहाँ पहुँचते ही पुन ज्वर को निमत्रण दे दिया । सर्दी जुकाम के कारण सिर भी भारी था । गोचरी मे आये हुए आहार को ग्रहण करने की बिल्कुल इच्छा नहीं थी ।

दो तीन दिन तो यह सोच करके ही निकाल दिये थे कि सर्दी लगने से ज्वर आ गया है ठीक हो जायेगा मगर वह तो बिन बुलाये मेहमान की भाँति आकर जम गया । अब तो खाँसी भी होने लगी थी । साध्वियो को जितनी चिन्ता थी उससे कहीं अधिक नगर के श्रावक-श्राविकाओ को हो रही थी । कुछ लोग बार-बार डॉक्टर, वैद्य को दिखाने की बात कह रहे थे । म मना करती रही- क्या है ज्वर ही तो है, आया है चला जायेगा । मने दो दिन से कुछ भी नहीं खाया । आहार लेने की इच्छा भी नहीं हो रही थी ।

कई श्रावक आकर पूछते - अव आप कैसे हे महाराजश्री ?

अरे भाई 'शरीरं व्याधि मंदिरम्' कहा भी गया है कि 'धरती पर ही परत है शीत, घाम, अरु मेह' इसलिए रोग भी इस शरीर को ही सहन करने पडते हैं ।

'महाराज श्री । शत्रु और रोग को तो उठते ही दबा देना चाहिए वरना ये बलशाली हो जाते हैं । एक श्रावक ने कहा ।

'अरे दबा क्या रहे हैं बेचारे ज्वर की दुर्गति कर रहे हैं । स्वय भी भूखे रह रहे हैं और ज्वर को भी भूखा रख रहे हैं, पास बैठे सतीजी ने मुस्कराते हुए कहा ।

'इसमे क्या हुआ तेला भी तो करते हैं ।'

'पर बेचारे ज्वर पर तो दया कीजिए बिना दवा के यह रोग जाने वाला नहीं है ।'

अब तक यहाँ पर कई श्रावक-श्राविकाएँ आ चुकी थी । एक भाई चुपचाप उठा और उपचारार्थ डॉक्टर को ले आया । मरता क्या न करता मजबूरन डॉक्टर की शरण लेनी पडी । यो आत्मा का शरण परमात्मा होता है लेकिन रोगग्रस्त तन को स्वस्थ बनाने हेतु डॉक्टर की शरण लेनी ही पड़ती हैं ।

महिला डॉक्टर ने निदान करके श्वेत पत्र को दवाइयो के नामो से नीला कर दिया । दवाएँ लिखकर उन्होने एक श्रावकजी को दे दी । मैं अधिक कुछ बोलने की स्थिति मे नहीं थी ।

- डॉक्टर साहब खाँसी के लिए ये गोलियाँ ठीक रहेगी ?

- एक सीरप और लिख देती हूँ खाँसी चले तो ले ले, यह पर्ची मुझे दीजिए ।

डॉक्टर ने पर्ची ली तभी मैंने देखा - एक मच्छर भिनभिनाता हुआ डॉक्टर साहब के सामने आ गया । उन्होने पर्ची ओर पेन को रखकर जोर से ताली पीटी मच्छर हथेली के बीच आ गया । यह दृश्य देख मैं भौचक्की रह गई, प्रश्नांकित दृष्टि डालते हुए पूछ लिया - यह क्या किया आपने ?

'कुछ नहीं तग कर रहा था' हथेली देखते हुए वे बोली ।

'नहीं, यह आपने ठीक नहीं किया है भविष्य मे आप ऐसी भूल कभी न करे । उन्हे भी अपनी भूल का अहसास हो गया था । वे भविष्य मे ऐसा न करने का सकल्प लेकर वन्दन करके चली गई । म पुन लेट गई । श्रावक श्राविकाएँ कक्ष के बाहर बैठे थे । मुझे रह रहकर विचार आ रहा था । मैं सोचने लगी प्रभु वीर कहते हैं कि **'सव्वे जीवावि इच्छंति जीविउं न मरिज्जिउ'** हाँ सभी जीव जीना चाहते है, कोई मरना नहीं चाहता फिर क्यो लोग विकलेन्द्रिय एव पचेन्द्रिय जीवो का शिकार कर रहे हैं । मच्छर भी चतुरेन्द्रिय प्राणी हे । उसे आठ बल प्राणो का धन मिला है । किसी का धन चुराने वालो को पुलिस सजा देती है तो किसी जीव का प्राण धन चुराने वाले मुस्करा क्यो रहे हैं । यदि हम किसी को जीवन नहीं दे सकते हैं तो किसी का जीवन लेने का हमे क्या अधिकार है ।

विश्व की क्या स्थिति बनती जा रही है । लोग अपनी सुरक्षा के लिए दूसरो के प्राणो का हनन कर रहे हैं । बेजुबान जीवो को विशाल पैमाने पर मारा जा रहा है । युद्ध और आतकवाद ने कितने निर्दोषो को मरघट की गोद मे सुला दिया । आज का मानव न अतीत से सीख ले पा रहा हे ओर न भविष्य को सुन्दर बनाने का उपक्रम कर रहा है । वर्तमान मे किये शुभ-अशुभ कर्म उदय मे आयेगे तो उन्हे भोगते समय कितनी पीडा होगी ।

अपने स्वार्थ एव सुरक्षा के लिए जानबूझ कर किसी को मारना क्या उचित ? प्रत्येक प्राणी को इस विषय पर मनन करने की आवश्यकता है । वह डॉक्टर मुझे जीवन देने आई थी, मगर मेरे सामने ही उसने एक जीव के प्राण ले लिए। वह ओर उस जैसे कितने लोग है जो दूसरे जीवो के प्राण लेकर भी अपनी मूढतापूर्ण बहादुरी पर मद-मद मुस्कराते हे । जव मानव किसी को प्राण नहीं दे सकता हे तव उसे किसी के प्राण लेने का क्या अधिकार ह ?

❀ ❀ ❀

27 माला का समय

इस बार वर्षावास थावला था । धर्मप्रेमी श्रावको का आवागमन निरतर चल रहा था । मेवाड क्षेत्र से भी कई श्रद्धालु वहाँ पहुँचे थे । कई लोगो ने विनम्र आग्रह भी किया था कि आप इस मेरवाडा का मोह त्याग कर मेवाड की ओर भी पधारो। बार-बार के आग्रह ने मन मे एक उत्कठा जगा दी थी । समय और परिस्थिति अनुकूल रही तो इस बार आपके क्षेत्र की स्पर्शना हो सकती है- यह वाक्य अनायास ही निकल गया था । मेरी बात सुनकर सामने खडे बहिन भाई प्रसन्न हो गये ।

- 'महाराज श्री । हमे आपकी प्रतीक्षा रहेगी ।'

पास खडे छोटे साध्वीजी ने कहा - वर्षावास के पश्चात् धर्म क्षेत्रो की स्पर्शना तो करनी ही है, अब आप तो उदयपुर के रहने वाले हैं । वहाँ तक पहुँचना ।

महाराज श्री । आप भीलवाडा तक तो कई वार पधारते ही हे इस बार झीलो की नगरी आपके स्वागत को उत्सुक है ।

समय को जो स्वीकार होगा वह स्वयमेव होता जायेगा, आपकी भावना हमने जान ली है ।

वर्षावास के पश्चात् ब्यावर आ गये थे । मेवाड के कई क्षेत्रो से श्रद्धालुओ का आना जाना ब्यावर प्रवास मे भी लगा रहा । आखिर उनकी श्रद्धा की विजय [illegible] कवियो की काव्य पक्तिया भी तन मन मे नई शक्ति जगा देती थी।

बहता पानी निर्मला, कभी न गंदला होय ।
साधु तो रमता भला, दाग न लागे कोय ॥

लक्ष्य और उद्देश्य यही था कि उदयपुर तक पहुँचकरके वीर वाणी का प्रसाद वितरण करना है । कदम बढ गये थे । छोटे बडे क्षेत्रो मे होते हुए यात्रा आगे बढ रही थी । श्रावक-श्राविकाओ मे अति उत्साह था । अनेक भाई-बहिन ग्राम से साथ-साथ निकल पडते । जब तक दूसरे ग्राम के श्रद्धालु नहीं मिल जाते उनकी यात्रा भी चलती रहती ।

थकान मिटाने को किसी वृक्ष की छाँव देखकर ठहरते तो वहाँ भी धर्म चर्चा होने लगती । साथ चलने वालो को नियम-प्रतिज्ञा पालन की प्रेरणा प्रदान कर खुशी होती। एक सज्जन अपने ग्राम मे हमारे आगमन का समाचार जानकर दर्शनार्थ आये थे । रास्ते मे धर्म चर्चा की बात करते हुए बोले - महाराजश्री! क्या बताये, बडा परिवार है । ग्रामो मे तो व्यापार रहा नहीं इसलिए शहर मे धधा शुरु किया है । प्रभु कृपा से काम अच्छा जम गया है अब परिवार को वहीं ले जाने का विचार है।

क्या ग्राम को सदैव के लिए छोड जायेगे ?'

'नहीं ऐसी बात तो नहीं है । खेती-बाडी है, सार सभाल हेतु आना-, तो लगा ही रहेगा ।'

'एक बार नगरीय सस्कृति में जो रह लेता है उसे फिर ग्रामीण सस्कृति सूनी-सूनी लगती है । भीड में कधे से कधा टकराकर चलने वालो को ग्रामो की गलियाँ वीरान लगने लगती है । अरे राष्ट्रकवि मैथिलीशरण जी ने तो कहा है - **"अहा ग्राम जीवन भी क्या है, क्यो न इसे सबका मन चाहे ?"** आप ऐसे शान्त, प्रिय जीवन का त्याग कर रहे हैं ।

क्या करे महाराजश्री ! विवशता है ।

चलो कोई बात नहीं कहीं भी रहो मगर धर्मध्यान से विमुख मत होना। पभु नाम की माला तो फेरते ही होगे ?

'नियमित तो नहीं फेर पाता, इतना काम है कि कुछ मत पूछो ।'

'अरे । आश्चर्य है परमात्मा के नाम स्मरण का भी आपके पास समय नहीं, यह बात तो हमारे गले नहीं उतर रही है ।'

'महाराज श्री । माला तो बुढापे मे फेरी जाती है । अभी से हम लेकर बैठ जायेगे तो क्या अच्छा लगेगा ? माला तो मेरे हाथो मे शोभा नहीं देती है। अभी मेरी उम्र ही क्या है ? यह उम्र क्या माला फेरने की है ?'

मैं चुपचाप उनकी बात सुनती रही, जब वे चुप हो गये तब मैंने कहा- भैया जी । माला फेरने की उम्र क्या होती है ? जरा हम भी तो जाने, हमे तो अब तक पता ही नहीं था माला फेरने की उम्र भी आती है ।

वे सज्जन हमारा मुह ताकने लगे । प्रश्न का जवाब उनसे देते नहीं बना। मैंने उनसे पूछा - क्या हुआ ?

वे सकपका गये थे पुन सहज होकर बोले - क्षमा करे महाराज श्री। अब नियमित माला फेरने का प्रयास करूँगा ।

अब तक दूसरे ग्राम के श्रद्धालु आ गये थे । यात्रा पुन शुरु हो गई। उस सज्जन की बात से मन उद्विग्न हो गया । भौतिकता की चकाचौंध में आज का मानव आध्यात्मिकता से परे हट रहा है । सत्ता एव सम्पत्ति की दौड मे धर्म एव अध्यात्म की उपेक्षा कर रहा है । यह क्यो हो रहा है ? भौतिकता मानव को लक्ष्य से भटकाती है जबकि आध्यात्मिकता उसे आगे बढाती है । माला फेरने से सभव है कि मन एकाग्र हो जाय, उसकी बिखरी शक्तियाँ घनीभूत होकर उसे शाश्वत सुख की प्राप्ति का अभिलाषी बना दे ।

28 तन और धन का धुआँ

मेवाड प्रवास काल मे आगे बढते हुए एक ग्राम में जाना हुआ । सायकालीन आहार लेने के पश्चात् अन्य कार्यो से निवृत्त हो रहे थे । ग्राम का वातावरण बहुत ही सुरम्य था । सुदूर अरावली की पर्वत शृखलाओ मे ओझल होता सूर्य अद्भुत लग रहा था । किसान स्त्री-पुरुष खेतो से घरो की ओर लौट रहे थे। भेड बकरियो के झुण्ड भी ग्राम की ओर लौट रहे थे । गाय-भैंसो के साथ कुछ बछडे भी उछल कूद करते चल रहे थे । दुधारू गाये रभाती हुई चली आ रही थी । बैलो के गले मे बधी घुघरूओ की पट्टी अनोखा ही सरगम छेड रही थी। किसान स्त्रियाँ घास का गट्ठर सिर पर उठाये एक के पीछे एक चली आ रही थी ।

मैं आसन बिछाकर स्वाध्याय हेतु पुस्तक के पृष्ठ पलटने मे व्यस्त थी देखा कि पशुओ के पॉवो से उडती हुई धूल के साथ-साथ चारो ओर धुआँ फैल गया है । इतना धुआँ अचानक कैसे आ गया । द्वार और खिडकियो द्वारा वह हमारे पास भी पहुँच चुका था । सारे कक्ष में धुआँ भर जाने के कारण जी घबराने लगा । सोचा - ग्राम है, सभी घरो मे लकडी जलाई जाती है । लकडियाँ एव उपलो के कारण ही धुआँ उठ रहा होगा । धुए के कारण मुझे खासी होने लगी थी ।

अन्य साध्वीजी ने धुए के कारण मेरी स्थिति देखकर कहा - महाराजश्री जी। आपकी आज्ञा हो तो द्वार एव खिडकिया बन्द कर दूँ ।

इस धुएँ ने कितना परेशान कर दिया । उधर वे लोग भी हैं जो चौपाल पर बेठे हुए बीडी सिगरेट एव चिलम के माध्यम से धुआँ पेदा कर रहे है । कुछ धुएँ को अपने हलक मे उतार रहे हैं और कुछ को हवा मे फूक रहे हैं । तम्बाकू का यह धुआँ कलेजे को कितना जलाता होगा । आँखो को कितना पीडित करता होगा । हम तो कुछ मिनटो मे ही धुए से घबरा उठे मगर ये ना समझ न जाने कितने वर्षों से इसे गले में उतारकर धन का धुआँ उडाकर अमूल्य जीवन के साथ खिलवाड कर रहे हैं । पहले तो धन को फूकते है ओर तत्पश्चात् कलेजे को फूकते हैं ।

शाम घिर आई थी । चौपाल पर जलती हुई बीडियो की आग दूर से दिखलाई दे रही थी मगर उन्हे कोन सिखाये कि तम्बाकू से हानि ही हानि है। यह धन के साथ तन एव मन को भी नष्ट कर देती है । तम्बाकू स्वय ही नहीं जलती बल्कि दिल, दिमाग और फेफडो को भी जला देती है । इसकी आग से वस्त्र ही नहीं बल्कि घर, खेत एव खलिहान भी जल जाते हे । सस्कृत भाषा के एक श्लोक की उक्ति मेरे मानस पटल पर उभर आई -

तमाल पत्र भक्षितं येन स संगच्छेन्नरकार्णवे ।

अर्थात् तम्बाकू पीने वाला घोर नरक की यातना पाता हे । अब मुझे अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करना हे । यदि दस मे से दो व्यक्तियो ने भी इस व्यसन से स्वय को मुक्त कर लिया तो हमारा यहाँ आना सार्थक हो जायेगा । कल प्रवचन मे मुझे कहना ही पडेगा कि इस व्यसन से

हाथ जलै हिवड़ो जलै, घर में लागे लाय ।
जीव मरै इण सु अठै, दया भाव मन लाय ॥

क्यो इस व्यसन के दास बन रहे हो । अब तो अपने विवेक को जगाकर इसका त्याग करो ।

❀ ❀ ❀

29 दही तो फिर जम जायेगा

वर्षावास के पश्चात् सदैव एक ही भावना रहती है कि अधिक से अधिक ग्राम-नगरो में पहुँचकर धर्म जागरण किया जाये । सयम मार्ग पर कदम रखने के पश्चात् पाद विहार से हजारो मील की यात्रा कर चुकी हूँ । पैदल चलने का भी अपना अलग आनद हैं । इसके द्वारा एक ओर तो अहिसा-महाव्रत की सुरक्षा होती हे वहीं यह जन सम्पर्क का सबसे अच्छा एव सुगम तरीका भी है।

हाँ, कभी-कभी कुछ शारीरिक परेशानियो का सामना अवश्य करना पडता ह । मगर प्रकृति को निकटता से देखने के आनद के समक्ष वह परेशानी गौण होती हे । हरे भरे लहलहाते खेत, जगलो मे उन्मुक्त विचरण करते खग-मृग, ताल किनारे बेठे पक्षियो का मधुर कलरव, पेडों पर उछलते कूदते शाखामृगो की अठखेलियाँ, चरैवेति-चरेवेति का निनाद करने वाली नदियाँ, काली नागिन सी धरती के वक्ष पर लेटी दूर तक दृष्टिगोचर होती कोलतार की सडक, हल एव ट्रेक्टर चलाते किसान, सडको के किनारे वृक्षारोपण करते मजदूर, खेत की मेड पर अलगोझे बजाता श्रमजीवी, फसल को पानी पिलाने हेतु फावडा उठाये खेत के मध्य खडी कृषक महिलाएँ, ये सभी दृश्य मनोहारी होते हें ।

विहार यात्रा चल रही थी हमने कल की रात कोटडी मे व्यतीत की थी। आगे रात्रि विश्राम कहाँ किया जाये यह प्रश्न खडा हो गया । एक निश्चित सीमा से अधिक पेदल विहार शरीर को धक्का देता हे । कुछ श्रावको से विचार

विमर्श हुआ। एक सज्जन ने 'गोरा गाव खेडे' का नाम बताया मगर वहाॅ जेनियो के घर नहीं है। आहार की समस्या आ सकती हे ।

इसकी चिन्ता आप न करे । खेडा हो या महानगर, हमारे लिए क्या फर्क पडता है ? आहार न मिले कोई बात नहीं । उत्तम एव निरापद स्थान देखकर रात्रि विश्राम कर लेगे । सवेरे कोटड़ी से विहार कर हम उस खेडे मे आ गये। ग्राम छोटा ही था । अधिकाश घर मिट्टी के बने एव खपरैलो से ढके थे । कुछ घरो की बाहरी दीवारो पर चूना भी लगा हुआ था । कुछ समय ग्राम के बाहर ही विश्राम हेतु एक वृक्ष के नीचे ठहर गये । अब तक कुछ बच्चे एव महिलाएँ भी वहाॅ आ गई थी । हमे पहुॅचाने को कुछ श्रावक भी वहाॅ तक साथ आये थे । हमसे अधिक परेशानी उनको हो रही थी । हम निश्चित थे । एक सज्जन ने आकर कहा - महाराजश्री ! मुझे तो आपके ठहरने लायक कोई स्थान इस ग्राम मे दिखाई नहीं दिया ।

तभी एक महिला ने कहा - क्यो नहीं, मदिर मे ठहर जाइये । कुछ वर्षों पहले आप जेसे ही महाराजश्री पधारे थे, वे मदिर मे ही ठहरे !

मन्दिर हे, फिर क्या परेशानी चलिए वहीं चलते ह । यह कहकर म उठ गई । अन्य साध्वियाॅ भी मेरे पीछे-पीछे यतनापूर्वक चल पडी । मदिर ग्राम के मध्य ही बना था । कहने को तो मन्दिर चूने पत्थर का बना पक्का था मगर उसकी हालत जीर्ण शीर्ण थी । लगता था कई दशको से उसकी मरम्मत नही हुई । दीवारो पर मकडी के जाले लगे हुए थे । हमने मन्दिर के बरामदे मे अपने आसन बिछा दिये। अब तक कई स्त्री-पुरुष वहाँ आ चुके थे ।

एक महिला ने आगे बढकर हमारे चरण छुए ओर बोली हमारे धन्य भाग जो आप यहाॅ पधारे ! वर्षों बाद कोई पुण्यवान चरण इधर आये ह ।

तभी एक दूसरी महिला ने चरण छूकर कहा - महाराजश्री ! आप सब हमारे घर पधारकर प्रसाद ग्रहण करे ! यदि कच्चा सामान चाहे तो आटा, दाल, घी, गुड भिजवा दूॅ ।

– 'नहीं बहिन ऐसी कोई बात नहीं है । थोडा बहुत आहार लेना है, यदि हमारे अनुकूल मिला तो थोडा-थोडा चार घरो से ले लेगे ।'

'चार पाँच घरो से क्यो, आहार तो मेरे घर पर ही करना पडेगा ।'

'हम किसी एक घर से सारा आहार ग्रहण नहीं करते । जैसे गाय घूमती हुई थोडा-थोडा चरती है उसी प्रकार आपके लिए जो भोजन बनता है उसी मे से एक आधी रोटी ले लेगे । वह भी सूर्यास्त से एक घण्टे पूर्व, उसके बाद नहीं ।'

'क्यो, फिर क्यो नहीं ?'

'हम रात को आहार पानी ग्रहण नहीं करते हैं ।'

'आप चिन्ता न करे हम तो जल्दी ही बना लेते हैं । जब आपकी इच्छा हो तब पधार जाये, आप कहे तो मैं अपने बेटे को बुलाने को भेज दूँगी ।'

ग्राम मे महाराज पधारे हैं, यह सुनकर सभी को प्रसन्नता थी । कई लोग दर्शन करके जा चुके थे । कुछ बालक गोचरी हेतु बुलाने आ गये । ग्रामीण महिलाओ की प्रसन्नता का कोई ठिकाना नहीं था । धोवन पानी के साथ वहाँ मेवाड का प्रसिद्ध भोजन मक्की के सोकरे, दूध, चटनी, दाल, दही लेने का सब आगह कर रहे थे। जाट परिवार की उस महिला का आग्रह तो अद्भुत ही था। हमने दही के लिए पात्र बढाकर कहा- बस थोडा ही डालना ।

वाह महाराज, आप भी क्या बात करते है, दही तो कल फिर जम जायेगा मगर आप तो चले जायेगे । यह कहकर उसने पात्र मे सारा दही उडेल दिया।

उसकी श्रद्धा एव भक्ति मानस पटल पर सदा सर्वदा के लिए अकित हो गई मेरे मन मे शालिभद्र का पूर्वभव सगम ग्वाले का चित्र उभर आया । उसने भी तो पच महाव्रतधारी महामुनि को खीर का दान उदारता से दिया था। वह दान करते समय स्वय को भूल गया । दान के प्रभाव से वह अपार ऋद्धि का स्वामी बना । ओह । धन्य है यह उदार हृदय महिला ।

30 त्रिवेणी की तरंगे

सवेरे से ही आज ठडी मगर मद-मद हवा चल रही थी । कल रात को ही यह निर्णय कर लिया गया था कि सवेरा होते ही बिगोद से विहार कर देना हे । श्रावक-श्राविकाओ की भावना यह थी कि अभी कुछ दिन ओर बिगोद मे धर्मलाभ प्रदान करते मगर विभिन्न ग्रामो से बराबर विनती आ रही थी । बिगोद से चलकर जोजवा ग्राम पहुँचना था । जोजवा की ओर कदम उठ चुके थे ।

अभी हम केवल अढाई किलोमीटर चले होगे कि सामने बनास नदी दिखाई देने लगी । बल खाती नदी मे अब भी जल की धारा प्रवाहित हो रही थी । पूर्वी तट पर जल की गहराई अधिक थी । पुलिया से नदी का दृश्य अति मनोरम लग रहा था । आकाश की नीलिमा जल मे उतर गई थी । दूर से देखने पर सूरज निर्मल जल मे तेरता दिखाई दे रहा था । राजस्थान की मरुभूमि मे उसका पूर्वी भाग पानी की दृष्टि से समृद्ध हे । दूर दूर तक पानी ही पानी, बहुत देर तक एकटक जलधारा को देखते रहे फिर कदम आगे बढाये ।

सूरज कुछ ऊपर चढ आया था । नदी के तट पर लगे पट्ट को पढा। नीले पट्ट पर श्वेत अक्षरो मे लिखा था त्रिवेणी सगम । बनास नदी यहॉ त्रिवेणी कहलाती ह । बनास, वेडच ओर मेनाली नामक तीन नदियो का यह मिलन स्थल है । अलग-अलग दिशाओ से आकर तीन नदिया इस स्थान पर मिलती ह । पुलिया के दक्षिणी भाग मे पूर्वी तट पर कुछ मन्दिर बने हुए हे वहीं एक

मन्दिर नदी की धार के पास स्थित दिखाई दिया । साथ चल रहे श्रावको ने बताया कि धारा मे शिव मन्दिर है।

'यहाँ इतनी भीड कैसे इकट्ठी हो रही है ?'

'आज शिवरात्रि है, त्रिवेणी तट पर मेला लगता है । आस-पास के ग्राम-नगरो से हजारो स्त्री-पुरुष यहाँ आकर त्रिवेणी मे स्नान करते हैं, वे बोले ।

अब तक हम नदी के पूर्वी तट पर पहुँच चुके थे । पानी की ओर पुनः दृष्टिपात किया । निर्मल जल में जल जन्तुओ के साथ कई मछलियाँ तैर रही थी। छोटी बडी अनेक मछलियाँ पानी मे तैरती हुई बडी सुन्दर लग रही थी । इस स्थान पर मछली पकडना वर्जित होने के कारण जलीय जन्तु निश्चिन्त होकर शीतल जल का आनद ले रहे थे । उन्हे देखकर लगता था मानो ये भी त्रिवेणी के पावन तट पर डुबकियाँ लगा कर स्वय को पवित्र बनाने का सहज प्रयत्न कर रहे हैं ।

पूर्वी तट पर आकर सघन वृक्ष के तले कुछ पल विश्राम करने का मानस बनाकर हम एक ओर बैठ गये । नदी की भाति ही अन्तर्मन मे विचारो की उर्मियाँ उठने लगी । सचमुच तीन नदियो का सगम पवित्रता का प्रतीक है । त्रियोग की एकता भी पवित्रता की निशानी है । ज्ञान, दर्शन, चारित्र मोक्ष मार्ग पर चढने की तीन उत्तम सीढियाँ हैं तो मन, वाणी एव कर्म की गति जिस पुरुष मे एक हो जाती है वह पुरुष से पुरुषोत्तम की श्रेणी मे पहुँच जाता है । नीतिकारो ने कहा भी है -

मनस्येक वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम् ।
मनस्यन्यत् वचस्यन्यत् कर्मण्यन्यत् दुरात्मनाम् ।

वास्तव मे महात्मा वनने के लिए त्रियोग की एकरूपता आवश्यक है । जिनके मन, वाणी और कर्म भिन्न-भिन्न हैं वे दुरात्मा होते हैं ।

'महाराजश्री । आप किन विचारो मे खो गये' समीप खडे छोटे साध्वीजी ने प्रश्न किया ।

प्रश्न सुनकर मेरा ध्यान भग हो गया । मैंने मुस्कराते हुए कहा - त्रि शब्द की महिमा मे मैं उलझ गई थी ।

'आप ओर उलझ गये - यह में नही मान सकती ।'

'इस त्रिवेणी के सगम का दृश्य देखकर आप भी तो कुछ न कुछ सोच ही रहे होगे ।'

'लगता है आपने मेरे मन के वातायन मे झाककर देख लिया हे । मैं तो उस किनारे से ही त्रि शब्द पर विचार कर रही हूँ । तीन की यह सख्या बडी अद्‌भुत है । देखिये, त्रि शब्द का प्रयोग भाषाशास्त्रियो ने कितना सटीक किया हे । भूत, भविष्य ओर वर्तमान को त्रिकाल कहा जाता है । अमृत तुल्य ओषध हरड, बहेडा एव आवला के मिश्रण को त्रिफला कहते है । धर्म, अर्थ एव काम त्रिगण कहलाते हैं । सत, रज एव तम का समूह त्रिगुण माने जाते हें । स्वर्ग, पृथ्वी ओर पाताल त्रिजगत् की श्रेणी मे आते है । आध्यात्मिक, आधिभोतिक तथा आधिदेविक ये त्रिताप होते हे । वात, पित्त एव कफ आयुर्वेद के अनुसार शरीर के त्रिदोष हे । कर्म, ज्ञान ओर उपासना इन तीन मार्गों का समूह त्रिपथ वोला जाता हे । तीन वेदो का ज्ञाता त्रिवेदी, तीन भुजा के क्षेत्र को त्रिभुज, प्रात मध्याह्न एव सायकाल को त्रिसन्ध्या कहते हे । त्रिरत्न के बारे मे तो आपको कुछ वताने की आवश्यकता ही नहीं हे।

'लगता हे त्रिशब्द पर पूरा शब्दकोष ही स्मरण कर रखा हे ।'

यह सुनकर सभी मुस्करा उठे । म उठ खडी हुई ओर बोली । अब कदम आगे वढाओ जोजवा हमें बुला रहा हे ।

हम आगे से आगे वढ रहे थे, त्रिवेणी का पावन सगम पीछे छूट गया था ।

❀ ❀ ❀

31 आग्रह या हठाग्रह

मेवाड क्षेत्र मे विचरण हो रहा था । खेतो पर पलाश एव खजूर के वृक्ष लगे थे । मेवाड की धरती राजस्थान के पश्चिमी भाग से अधिक सरसब्ज हैं । ग्रामो मे छोटे ताल एव पोखर भरे हैं । भेड, बकरियाँ एव गायो के झुण्ड एक साथ जब उन सरोवरो मे पानी पीते है तब वहाँ का दृश्य बहुत ही रमणीक लगता हे । जलीय पक्षी पानी से उड-उडकर पशुओ की सवारी का आनद लेने लगते हें । उन्हे देखकर ऐसे लगता है मानो वे पशु उस ताल का जल पीकर के यहाँ के पक्षियो को अपनी पीठ पर बिठा करके जल पीने का कर अदा कर रहे हो ।

ग्राम के मध्य मे ही स्थानक बना ह । मुख्य मार्ग पर ग्राम नहीं होने के कारण सन्त-सती को चला करके ही वहाँ जाना पडता हे । रात्रि विश्राम का मानस बनाकर ही हम वहाँ पहुँचे । गामजनो को हमारे पहुँचने का समाचार पूर्व मे ही लग गया था । गाम छोटा ह मगर सभी जातियो के घर वहाँ पर उपलब्ध ह । जन समाज के घरो की सख्या चार-पाँच ही रह गई । पूछने पर पता चला कि सब लोग सूरत या उदयपुर मे व्यापार हेतु रहते हें । मानस एक रात के विश्राम का ही था परन्तु वहाँ के श्रावक-श्राविकाओ की स्नेहिल मनुहार ने हमे एक दिन और ठहरने का विवश कर दिया । महिलाएँ तो चाहती थी कि महाराजश्री [illegible] दिन तो यहीं विराज कर धर्म प्रभावना करे ।

एक क्षेत्र को अधिक धर्मलाभ प्रदान करने पर समयाभाव के कारण दूसरे क्षेत्रो को कभी-कभी वचित भी रह जाना पडता है । यही सोचकर हमने तीसरे दिन सवेरे ही विहार का निर्णय कर लिया था ।

सूरज की प्रथम किरण के धरती पर उतरते ही हम स्थानक से निकल पडे । स्थानक के बाहर चार-पाँच श्रावक खडे थे । उनमे से एक महिला ने कहा - महाराजश्री अल्पाहार तो यहीं पर ग्रहण करना होगा ।

मैं अपने पास खडी अन्य साध्वियो की ओर देखने लग गई ।

'अल्पाहार लिये बिना तो हम आपको एक कदम भी आगे बढने नहीं देगे ।' वह बोली ।

उनका अत्याग्रह मैं टाल नहीं पाई ओर कहा - ठीक है, आप तो हमे यह बतायें कि आपका घर किधर हे, चलो, हमको जितनी अनुकूलता होगी उतना आहार आपके घर से लेने के भाव रखते हैं । वह प्रमुदित भाव से हमारे साथ चलने लगा। प्रातराश की गवेषणा मे हम अपनी सुविधानुसार जा रही थी कि रास्ते मे एक वहिन ने करवद्ध वन्दना करके कहा - महाराजश्री । मेरे घर भी चलिए ।

'तुम्हारा घर पीछे रह गया हे । कधो पर वजन है, बार बार इधर उधर आने जाने से परेशानी होती हे । आपकी भावना हम जानती हे । अभी आप इतना आग्रह नहीं करे ।'

मेरी वात सुनकर वह उछल पडी मानो ततेये ने काट खाया हो । ठीक है, पधारिये आप, सुख शान्ति रखना, मैं तो यह चली । उसने क्रोध मे भरकर कहा ।

उसके क्रोध मे भी श्रद्धा का भाव था । उसके कहने के अन्दाज एव स्वर को सुनकर पास खडे श्रावको को भी हँसी आ गई । मेरे पाँव वहीं स्थिर हो गये । वह महिला अपने घर की ओर चली जा रही थी । मने अन्य साध्वियों से कहा - अव उनके घर तो चलना ही होगा ।

वे आगे-आगे चल रही थी ओर हम उसके पीछे-पीछे । उसने रास्ते मे एक बार भी मुडकर नहीं देखा । घर के द्वार पर जाकर ही वह पीछे देखने को उद्यत हुई । हमे अपनी ओर आते देखकर उसकी प्रसन्नता का कोई पारावर नहीं था । वह वहीं से चिल्लाई - प्रेम से कहती तो आप नहीं आते न ।

हमे तुम्हारा प्रेम ही तो खींच लाया है । मैंने कहा ।

मैं वहाॅ से पातराश लेकर अपने पथ पर बढ गई । मेरे कदम आगे बढ रहे थे मगर चिन्तन इस घटना पर अटक गया था । साधु जीवन स्वतत्र जीवन ह वहाॅ सिर्फ मन का, प्रभु आज्ञा का बन्धन है । आज उसके समक्ष मे मजबूर हो गई । मुझे अपने आप पर तरस आने लगा । उसकी धमकी चाहे वह श्रद्धा से भरी थी, मगर उसमे आवेश का पुट था में वहाॅ पर झुक गई, आज मेरी नहीं उस महिला की मनमानी चली ।

उसका आग्रह धर्मभावना से युक्त था मगर विवेक का अभाव था । यह उचित नहीं हे कि एक का हठ दूसरे की विवशता वन जाये । श्रद्धालुओ को चाहिए कि वे अपने कर्त्तव्य का पालन करे मगर निर्णय की बात सामने वाले पर छोड दे । अनुकूलता एव आवश्यकता होगी तो आग्रह को सम्मान अवश्य मिलेगा । वह महिला एव अन्य श्रावक ग्राम के बाहर तक आ गये थे मने उस वहिन से कहा - देखो परिस्थितिवश कोई न आ सके तो उसे अपना अपमान न समझे । विवेक को जीवन से अलग न करे यही मानव के लिए श्रेयस्कर ह ।

मेरी वात सुनकर उस भद्र महिला ने चरण छूकर कहा - महाराजश्री। भावावेश मे मने ऐसा कह दिया मगर भविष्य मे इस भूल की पुनरावृत्ति कभी नही होगी । मेरे निवेदन मे विनमता होगी पर हठाग्रह नहीं होगा ।

उसका यह निणय सुनकर हमे प्रसन्नता थी । वे सब प्रसन्न मन से मागलिक सुनकर अपने घरो की ओर लाट रह थे । हम भी अपनी राह पर आगे बढ चले।

32 बढ़ते विकार : घटते विचार

माडलगढ से विहार करते हुए हम लाडपुरा पहुँच गये । यहाँ त्रिराहा हे । कोटा, चित्तौड एव भीलवाडा जाने के लिए यहीं से गुजरना पडता हे । आस पास लाल पत्थर की खाने होने से ट्रको का आवागमन बसो से भी अधिक होता हे । यहीं पर श्रावको ने बताया कि इधर पास मे ही पर्यटन स्थल मेनाल हे जहॉ प्राचीन मन्दिरो के अवशेष देखने योग्य हे । मेनाल का प्रसिद्ध झरना भी वहीं पर हे ।

'अभी झरना वह रहा हे क्या ?'

'नहीं, वरसात में बहता हे ।'

'आर क्या ह यहॉ पर ।'

'जोगणिया माताजी का स्थान भी इधर ही हे ।'

यह नाम जाना पहचाना था । योगिनी से जोगणी शव्द वना हे । तद्भव शव्द ह । वर्षों से नाम सुनती आ रही थी । पहले वहॉ पशु बलि की प्रथा थी अव वहॉ पूर्ण प्रतिवन्ध ह । यह सुअवसर सहज मे ही मिल रहा हे । प्रकृति के मध्य वने मन्दिर को अवश्य देखना चाहिए । मने अन्य साध्वियो की स्वीकृति चाही तो वे सव तयार हो गई ।

हम उस ओर चल पडे । मुख्य सडक से उतर करके आगे बढ गये। सडक के दोनो ओर कटीले झाड अधिक ह । एक वनी मे मे होकर गुजरना

पडा । पुराने साधक कैसे-कैसे दुर्गम स्थानो पर आराधना स्थल बनाते थे । सैकडो वर्षों पूर्व जब आवागमन के साधन नहीं थे तब ये साधना स्थल बनाये गये । ये स्थल सासारिक लोगो की पहुँच के बाहर ही थे । पहाडी नाले होने के कारण उनके आसपास जगली जानवरो का निवास भी रहता होगा ।

वृक्षो पर गिलहरियाँ व पक्षी अठखेलियाँ कर रहे थे । एक सज्जन ने कहा- महाराजश्री ! उधर मेनाल के आस-पास तो कभी-कभी बाघ भी दिखाई दे जते हैं ।

'इधर तो नहीं है ।'

'नहीं, इधर लोगो का आवागमन अधिक होने के कारण नहीं आते हैं ।'

कुछ और लोग भी साइकिल, स्कूटर व जीपो के माध्यम से उधर आ जा रहे थे । हम बिना रुके उस स्थल पर पहुँच गये । माता का मन्दिर काफी पुराना था । एक ओर गहरा गर्त ह जहाँ वर्षा ऋतु मे झरना गिरता हे । चारो ओर ऊँची पहाडियाँ हे । मन्दिर के आस-पास अनेक धर्मशालाएँ वनी हुई होने से श्रद्धालुओ का आने जाने का दौर चलता ही रहता ह । मन्दिर के एक तरफ बरामदे में अनेक वेदपाठी ब्राह्मण मत्र ध्वनि से वातावरण को गुजा रहे थे । मन्त्रो का आरोह-अवरोह अद्‌भुत था । हमे वहाँ देखकर के कई श्रद्धालु हमारे पास आ गये । हमने मदिर के पास ही बने स्थानक मे पहुँचकर विश्राम हेतु आसन बिछा लिये । कुछ देर विश्राम के पश्चात् आहार की गवेषणा हेतु स्थानक से बाहर निकले । मदिर के पास बैठे वेदपाठी पण्डित अब हमको स्पष्ट दिखाई दे रहे थे । कुछ पण्डित नेत्र बन्द किये तन्मयता से मन्त्रोच्चारण मे मग्न थे तो कुछ पुस्तको के पृष्ठ पलट रहे थे । कुछ पण्डित तो मन्त्रोच्चारण को बीच में ही रोककर बात करने लगते एव हँसते मुस्कराते फिर मन्त्रोच्चारण शुरु कर देते ।

मुझे बडा आश्चर्य हो रहा था । यह क्या हो रहा हे । कुछ पण्डित मत्र का अधूरा उच्चारण करके आगे बढ जाते ह । यह भी एक तरह से धार्मिक शिथिलता ही हे । यह शिथिलता आज कहॉ नहीं हे । आज प्रत्येक धर्म शिथिलता का शिकार हो रहा हे । कुछ उत्कृष्टता से धर्मक्रिया मे लगे होगे मगर शिथिलता के उन्मादी यह कहते हुए मिल जायेंगे कि आज युग बदल गया हे । यह स्वर्ग-नरक सब कल्पना मात्र है । वर्तमान को दु खी बनाकर भविष्य के सुख की कामना करना मूर्खता हे। भोतिकता का प्रभाव ज्ञानियो एव साधुओं मे भी दिखाई दे रहा हे । अनेक साधु मात्र वेश से ही साधु हे उनकी कामना श्रावको से भी गई वीती हे । उन्हे देखकर शास्त्र गाथा का स्मरण हो आता हे।

संति एगेहि भिक्खूहिं गारत्था सजमुत्तरा ।
गारत्थेहिं य सव्वेहिं साहवो संजमुत्तरा ॥

किसी शिथिलाचारी साधक से कोई श्रावक उत्कृष्ट हो सकता ह । सभी श्रावको से साधु उत्तम आचार पालक होते हैं - हो सकते ह । धार्मिक क्षेत्र मे समय के साथ परिवर्तन नवयुग की माग है मगर आत्मा के साथ धोखा कहॉ तक उचित हे । धर्म के साथ खिलवाड करना अविवेकपूर्ण कार्य हे । शिथिलाचार के कारण धर्म धर्म न रहकर पाखण्ड बन जाता हे । जल मे तेरना हे तो पानी मे उतरना ही होगा । धर्म का वास्तविक स्वरूप जानने के लिए आत्मानद मे विचरण करना ही होगा। यह विज्ञान जन्य विकास सपनीले सुख भले ही दे दे, अन्ततोगत्वा ये दु ख के ही कारण बनेगे । कर्म को कर्तव्य मानकर श्रद्धा एव विवेक से करे तभी उसम सफलता की सभावना रहती ह । श्रद्धा विहीन क्रिया काण्ड से साध्य सिद्धि कसे हो सकती ह ? हम जो भी कार्य करे उसम पूर्ण मन लगाकर श्रद्धा से करे तव ही उसकी सार्थकता ह । श्रद्धायुक्त किये गय कार्य ही मनोकामना पृण कर मकते ह ।

❀ ❀ ❀

33 धन का बौनापन

वीतराग प्रभु के पथ पर पाव धरने के पश्चात् पहली बार राजस्थान से विहार करते हुए मध्यपदेश मे पहुँचे थे । मेवाड से सटा हुआ क्षेत्र होने से बोली मे कोई विशेष भेद दृष्टिगोचर नहीं होता हे । एक लम्बी यात्रा करते हुए इस भू-भाग पर आने से हमे आत्म सन्तोष भी था । उवड खावड रास्तो, पहाडी नदी नालो को पार करते हुए सिगोली आ गये थे । सिगोली के धर्मप्रेमी भाई-वहिन माडलगढ के पश्चात् रास्ते मे जहाँ भी हमारा पडाव होता धर्मलाभ हेतु आते रहे । उनकी यह भावना थी कि इस बार होली चातुर्मास सिगाली मे व्यतीत किया जाये । स्वीकृति पा करके श्री सघ मे नई लहर आ गई थी ।

सिगोली के निवासियो ने हमारा भावभीना स्वागत अभिनन्दन किया । पथम पवचन में ही मने अपने मन के उद्‌गार पकट कर दिये थे कि नट की भाति कला दिखान वालो की धर्मससार को आवश्यकता नहीं हे । ऊसर भूमि म वीज का ही नाश हो जाता ह । समय आर श्रम उन्हीं का सार्थक हे जो सत्य को जीवन मे उतारते हें । धमशास्त्रो मे महापुरुषो ने कहा भी ह – **'गिहवासे वि सुव्वए'** अर्थात् धर्मशिक्षा सम्पन्न गृहस्थ गृहवास मे भी सुव्रती होता ह ।

वहाँ निवास करने वाले श्रावको मे धर्म के प्रति अद्‌भुत उत्साह था । ...। दसा उपवास के प्रत्याख्यान हो रहे थे । उस दिन दोपहर का समय था।

आस पास के क्षेत्रो से भी धर्मप्रेमी आये हुए थे । एक भाई ने पूछ लिया - महाराज श्री ! आप पहली बार यहाँ पधारे हैं, यह क्षेत्र आपको कैसा लगा ?

मैं कुछ क्षण विचारो मे खो गई ।

'आपने हमारे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया महाराजश्री ।'

'जहाँ धर्म जाग्रति हो, आपस मे स्नेह का व्यवहार हो वह क्षेत्र सदैव अच्छा ही होता है । सयमियो के लिए तो जगल मे भी मगल होता है ।'

'आप बात को घुमा फिराकर कह रहे हैं ।'

'नहीं ऐसी कोई बात नहीं है । इस क्षेत्र मे अच्छी धर्म भावना है मगर नवयुवको मे चेतना का अभाव है । नवयुवको की यह उदासीनता दूर होना आवश्यक है ।

'आजकल के नवयुवको को तो जमाने की हवा लग गई है ।'

'इसके जिम्मेदार आप लोग ही है । प्रवचन मे बुजुर्ग लोगो की सख्या अधिक होती है । आप लोग इधर आ जाते हो ओर नवयुवको को दुकान जाने का आदेश दे देते हो । धर्म साधना का लाभ आप उठाते है ओर उन्हे व्यापार धधे मे उलझा देते हैं । आपको उन्हे भी मोका देना चाहिए । समय निकलने के वाद जब उन्हे आप धर्मक्षेत्र मे उतरने की प्रेरणा देगे तब बहुत देर हो चुकी . । तब उनसे अपेक्षा करना बेकार सिद्ध होगा । आज आवश्यकता इस बात की ह कि वच्चो मे धर्म सस्कार जाग्रत करे । आप प्रवचन मे आते ह तो उन्हे भी प्रात कालीन प्रार्थना मे सम्मिलित होने की प्रेरणा द ।

इस वात को सुनकर के स्थानक मे सन्नाटा छा गया । सब कुछ गले मे उतारते गये । मेरी वात पूरी होने पर एक भाइ ने कहा - आप सत्य कह रहे ह। सव ओर यही हो रहा ह । आज हमारा ध्यान धन कमाने मे ज्यादा धम कमाने मे कम ह ।

धर्म मार्ग पर चलते हुए धन का भी उपार्जन कीजिए मगर आने वाली पीढी सस्कारवान बने इस पर भी ध्यान देना जरूरी है । क्योकि ससार का सर्वस्व खरीदने मे सक्षम धन जीवन के सस्कार एव शान्ति खरीदने मे बौना ही सिद्ध होता है । आज का आदमी अविनश्वर आत्मा को नजर-अन्दाज कर नश्वर पदार्थों से त्राण पाने की कोशिश कर रहा है । आज के मानव को यह कौन समझाये कि अनियत्रित कामनाएँ आदमी को विपदाओ की भट्टी मे झोक देती है । हम नवयुवको मे नये पाणो का सचार करे । उन्हे धर्म की ओर उन्मुख करे ओर समझाये कि सवेरे जल्दी उठकर प्रभु का स्मरण करे क्योकि प्रात काल की रमणीय वेला प्राणवायु की बहार व नवजीवन का उपहार लेकर आती है वह व्यक्ति सचमुच महामूढ है जो इसका लाभ उठाने से वचित रह जाता है ।

अत आप अपने बच्चो को नित्य जल्दी उठने की प्रेरणा प्रदान कर पभु प्रार्थना हेतु स्थानक मे साथ लेकर के आयें सामूहिक पार्थना मे अद्भुत शक्ति होती हे ।

मेरी बात उनके हृदय मे गहरी उतर गई थी । दूसरे दिन ही अनेक युवक पाथना के समय स्थानक मे दृष्टिगोचर हुए कुछ तो प्रवचन के समय भी उपस्थित थे । मुझे ऐसा लगा कि मेरी बात का असर सिगोली के श्रावको पर हो रहा ह । मुझे आत्म सन्तोष था कि जो मेने कहा वह यहाँ पूरा हो रहा हे । मे विचारने लगी कि ये युवक तो उस पुस्तक के छपने जा रहे पृष्ठ हे, जिन पर क्या छापना ह यह उसके अभिभावक सहित समाज को भी देखना हे । आने वाले कल का भार तो इन युवको के कधो को ही उठाना होगा । अत इन्हे सुसस्कृत ओर सशक्त बनाना आवश्यक ह ।

❀ ❀ ❀

34 होली जले कषायों की

पलाश के वृक्षो पर कुसुमल रग के फूलो की बहार उतर आई थी । रात्रि मे शीत का प्रभाव था परन्तु दिन ग्रीष्म के आगमन का सन्देश दे रहे थे। खेतो मे गेहूँ की बालियाँ लहलहा उठी थी । फागुन एक ओर प्रकृति मे मस्ती का सचार करता ह वहीं जन मन मे भी आनन्द का उपहार दे रहा था । होली का त्याहार आने वाला हे खेतो की मेडो पर रसिया की गूज डफ की थापो के साथ सुनाई देने लगी थी ।

होली चातुर्मास सिगोली मे था । मेवाड मालवा एव हाडोती का सगम स्थल ह सिगोली । छोटे से छोटा ग्राम हो या नगर होली के स्थान पर कटे हुए बबूल को लाकर खडा कर दिया जाता हे । ग्रामो मे एक माह पूव ही होली ` रोपने की परम्परा ह मगर आजकल शहरो मे भीडभाड के कारण होली की स्थापना एक दो दिन पूर्व ही होने लगी हे ।

मैंने होली को देखा तो विचार आया कि भारतीय परम्परा मे त्याहारो का आगमन नई स्फूर्ति एव चेतना प्रदान करने का बिन्दु ह । प्रत्येक पर्व एव त्याहार मानव को प्रेरणा देता ह । यह होली ह जो बबूल को काटकर प्रत्यारोपित की गई ह । बबूल काटो से भरा वृक्ष ह । पूर्णिमा की चाँदनी रात मे इसे जलाया जायेगा। यहाँ शूलो का क्या काम । सच्चा इसान वही होता ह जो शूल हटाकर

फूल विछाये। हमारे पुरखे वहुत ज्ञानी थे, विचार और विवेक का उनमे अद्‌भुत समन्वय था तभी तो उन्होने शूलो को ही नहीं बल्कि शूलो के पूरे वृक्ष को जलाने का सकल्प कर लिया था । शूल सदैव चुभन देते हैं । चाहे वनो मे पैदा होने वाले हो या मनो मे उपजने वाले । इन शूलो को जला दिया जाना ही श्रेयस्कर है ।

वृक्ष के शूल अग्नि को भेट कर जलाये जा सकते हे मगर मन के शूलो को, तन के शूलो को नष्ट करने के लिए तपाग्नि की जरूरत है । तप के प्रभाव से तन-मन के शूल जलाये जा सकते हैं । यह होली आज रात मे अग्नि को समर्पित कर दी जायेगी। अर्द्ध जली अवस्था मे इसे ले जाकर ताल-पोखर में ठण्डी करने की परम्परा हे । आग मे से होकर जो निकलता है वही शीतलता का आनद उठा सकता हे ।

में विचारो मे खोई हुई स्थानक मे आ गई । चिन्तन का चक्रवात और वढ गया था । यह होली दहन का दिन भेदभाव को जलाकर सद्‌भाव को जगाने का दिन हे । कुसस्कार एव दुर्गुणो की आहुति देकर सुसस्कार एव सद्‌गुणो को जाग्रत करने का शुभ अवसर हे ।

होली दहन की खुशी मे कल रगो की होली खेली जायेगी । रग विरगे रगो की फुहारो से लोगो का तन भीगेंगे तव उनसे मन को सुखद अनुभूति होगी । किसी जमाने मे लोग पलाश के फूलो को भिगो करके रग तैयार करते थे । गुलाल उडाकर अपना स्नेह पदर्शित करते थे । अव वसा कहाँ होता ह । पाकृतिक रगो का स्थान कृत्रिम रगो ने ले लिया ह कुकुम-हल्दी के दिन लद चुके ह । आज तो स्थिति विचित्र हो गई हे । होली प्रेम भाव को वढाने का पर्व ह मगर क्या ऐसा हो रहा ह ? उत्तर देने वाला कोइ नहीं ह । होली पर तो आज कल पुराने वर को निकालने की योजना वनती हे । रगो के स्थान पर तारकोल वानिश, [illegible] का कीचड उछाला जाता ह ।

यहाँ ऐसी होली कब तक खेली जाती रहेगी । होली तो दुर्गुणो को जलाने का पर्व हे । सद्भावो के रग में सबको रगने का पर्व है फिर यह विपरीत क्यो हो रहा हे ?

म आसन पर आँकर बैठ गई । कुछ भाई सामायिक लिए आसन पर वैठे थे । मने एक से पूछ लिया - क्या तुम भी रग खेलते हो ?

नही महाराजश्री । अब होली कम, हुडदग ज्यादा होता है गुलाल कम धूल ज्यादा उडती है । मुझे तो डर लगता है ।

ऐसा क्यो हो रहा हे कभी पाच समझदार व्यक्तियो को बेठकर चिन्तन करना चाहिए । होली का अभिप्राय एक दूसरे को समझने एव समझाने की चेष्टा का त्यौहार है । होली का अभिप्राय हे हो-ली यानि जो हो चुकी है उसे भूलकर नये सिरे से जीवन को जीया जाये । इस जीवन का कोई भरोसा नहीं है, जो आज हे वह कल नहीं रहेगा फिर क्यों राग-द्वेष का भाव जगाये हुए हैं । इनको जलाना होगा। बुराइयो को जलाकर नष्ट करने का यह लोक पर्व हे । साधारण से दीखने वाले हाड मास के पुतले इस मानव मे अद्भुत शक्ति का समावेश हे । तप की कठिन साधना के द्वारा वह अपने कर्म अरियो को जलाकर भस्मीभूत करने मे सक्षम हे । आध्यात्मिक ज्ञानामृत का पान करके जीवन में प्यार का सुरग स सकता ह । होली के इस पावन पर्व पर हमे भारत की महान् ओर प्राचीन ्यता, सस्कृति एव शालीनता का स्मरण करके हीन भावो को जलाकर आत्मशक्ति को जाग्रत करने की आवश्यकता हे ।

❀ ❀ ❀

35 आत्मा की ज्योत्स्ना
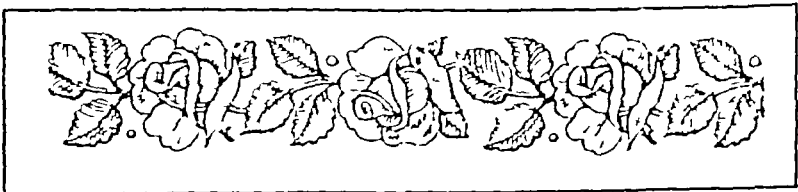
सोलह कलाओ से युक्त पूर्णिमा का चन्द्रमा सन्ध्या की गोद से निकलकर व्योम मे चहल कदमी करता उर्ध्वगामी होने लगा था । स्थानक के कक्ष मे वन्दन कर प्रतिक्रमण करते हुए दिवस सम्बन्धी अतिचारो की आलोचना की । आलोचना के उपरान्त लघुशका निवृति हेतु कक्ष से बाहर कदम धरा तो दृष्टि व्योम की ओर उठ गई । प्राची मे पूर्ण चन्द्र अपनी चन्द्रिका बिखेर रहा था । पूर्ण ज्योत्स्ना युक्त चन्द्रमा के तेजस्वी स्वरूप के समक्ष तारकगणो की चमक मद हो गई थी। सारा भू-मण्डल दूधिया चॉदनी मे नहा रहा था । बाहरी वातावरण शान्त एव आनन्द दायक पतीत हो रहा था । सडको पर कतारबद्ध बल्व जल रहे थे मगर चन्द्रमा के समक्ष उनकी ज्योति भी फीकी लग रही थी । मेरी ऑखे चन्द्रमा पर टिक गइ, उसके मनोरम रूप को देखकर मेरे कदम धरती से चिपक गये थे। दूर ढोल एव मृदग के स्वर गूज रहे थे मगर मेरा ध्यान आकाश की निर्मल चॉदनी की ओर था । लघुशका से निवृत्त होकर मै कक्ष के बाहर बने छज्जे के नीचे आकर खडी हो गइ । तारापति के सान्दर्य को निहारती हुई म कुछ क्षणो के लिए स्वय को ही भूल-सी गइ ।

बादलो के कुछ टुकडे हवाओ मे तर रहे थे । मुझे वहा खडा देखकर छोटे साध्वीजी भी वहीं आ गये । मेरे समीप आकर उन्होने कहा - आप यहाँ खडे है कुछ ठड ह अन्दर पधारिये ।

'ठड हे ओर कुछ नहीं हे क्या ?' मने प्रश्न किया ।

'ओर क्या हे ?'

'ओर भी बहुत कुछ ह देखो वह चन्द्रमा हे, धरती पर बिखरी उसकी ज्योत्स्ना है, तारागण है । सब कुछ कितना सुन्दर हे । प्रकृति ने प्राणियो के लिए कितना सोन्दर्य लुटाया है । हम इन्हे छोडकर कक्ष के अधकार मे बेठ जायॅ, क्या यह उचित है ?'

'आप ठीक कह रहे ह । प्रकृति के ये मनोरम उपकरण अन्दर से दिखाई नहीं देते । आज पूर्णिमा की रात्रि है । होली तो जल चुकी होगी ।'

'हॉ, होली तो सूर्य के डूबते ही जला दी गई होगी ?'

'हॉ होली दहन तो जब हम प्रतिक्रमण में बैठे हुए थे तभी हो गया होगा। लोग वता रहे थे कि होली दहन का मुहूर्त सात बजे का हे । अब तो आठ वज चुकी ह ।'

देखो चन्द्रमा कितना सुन्दर लग रहा ह । तप करके सोना जेसे कचन वन जाता हे, उसी प्रकार आज चन्द्रमा भी लगता हे होली की ज्वाला में तप करके निकला ह ।

मेरा ध्यान प्रकृति की छिटकी चॉदनी पर था तभी देखती हूँ कि चाँदनी ` किसी आततायी ने निगल लिया हे । मेरा ध्यान भग हो गया था । चन्द्रमा दृष्टि गई तो देखा वादल का एक टुकडा चन्द्रमा के सामने आ गया ह ।

'लो देखो वादल के एक टुकडे ने ज्योत्स्ना को छीन लिया ह । जो चन्द्रमा जड चेतन मे चॉदनी का अमृत रस सींच रहा था वह अचानक ठहर गया ह ।'

'म देख रही हूँ लेकिन सोचो क्या वकरी का वच्चा कभी शेर क दॉत गिनने की हिम्मत कर सकता ह ?'

'यह तो उसके लिए असभव ह ।'

'तो इस बादल के लिए भी कैसे सभव है कि वह पूर्णिमा की चाँदनी को छीन ले । यह तो चन्द्रमा और बादलो के बीच आँख मिचौनी का खेल है । देखो बादल का पर्दा हटाकर चन्द्रमा बाहर निकल रहा है । छाया को हटाती हुई चन्द्रिका फिर धरा पर फैल गई है ।' मै पुन कक्ष मे आकर आसन पर आसीन हो गई । कई बहिने वहाँ बैठी हुई सामायिक कर रही थी । मेरे मानस मे चन्द्रमा, चाँदनी एव बादल का त्रिकोण बन रहा था ।

कक्ष के द्वार से चन्द्रमा स्पष्ट दिखाई दे रहा था । मेरा चिन्तन यथावत् था। एक छोटे से बादल ने चन्द्रमा को छुपा दिया या यो कहूँ कि उस पर कालिख ही पोत दी । उसके आवरण ने चन्द्रमा पर विकृति पैदा कर दी । हमारा आत्मचन्द्र जो कि स्वभाव से निर्मल है, शान्त है एव उर्ध्वगामी है उस पर भी कर्मो के आवरण छाकर उसे विकृत बना देते हैं । चन्द्रमा पर तो एक बादल का आवरण छाया मगर आत्मा पर तो आठ कर्मो की परते चढी है । उस स्थिति मे आत्मा कसे अपनी ज्योत्स्ना छिटका सकती है ।

मैंने समीप बैठी बहिनो से यही प्रश्न किया तो एक ने कहा - महाराजश्री आवरण हटे बिना चन्द्रमा का उजाला नहीं हो सकता ।

'यही तो मैं भी सोच रही हूँ अरे ! धन्य हैं वे सिद्धात्माएँ जिन्होने परम पुरुषार्थ से अपने निज स्वरूप को प्राप्त किया । अपने चरम एव परम लक्ष्य को प्राप्त किया । चन्द्रमा की तरह हम आत्मा को भी प्रकाशित करे "**सुण्णी कयम्मि चित्ते, णूणं अघा पयासेइ**" सच ही कहा है कि चित्त को विषयो से शून्य कर देने पर उसमे आत्मा का पकाश झलक उठता है । आत्मा को इतना उज्ज्वल बनाये कि कर्मो के घन उसके समीप आने मे ही कतराने लगे । यही साधना की साधक परिणति है ।

❀ ❀ ❀
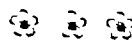
36 आदर्श ग्राम

कदवासा से सवेरे ही विहार करके कल्याणपुरा पहुँचने का लक्ष्य बना लिया था । रास्ते मे चेची, रामपुरिया, निलखडा एव माउपुरा आदि छोटे-छोटे ग्राम पडते थे, मगर कल्याणपुरा पहुँचकर ही विश्राम का मानस पूर्व निर्धारित था । मध्यप्रदेश की धरती से विहार करते हुए राजस्थान की सीमा मे प्रवेश करने पर साथ चलते हुए एक भाई ने बताया कि महाराजश्री । अब आपका राजस्थान आ गया ह । वह राजस्थान की महिमा का बखान करता जा रहा था । म चुपचाप उसकी बाते सुनती हुई चलती जा रही थी ।

कल्याणपुरा राजस्थान प्रदेश का ग्राम हे । हमारे आगमन की सूचना उन्हे ।न८ चुकी थी । बेगूँ से कुछ श्रद्धालु हमारे पहुँचने से पूर्व ही वहाँ आ गये थे । कल्याणपुरा भी राजस्थान के अन्य ग्रामो की तरह ही था । कुछ कच्चे-पक्के मकान, सकडी गलियाँ, किसानो की बस्ती, सब कुछ वसा ही था, जसा पिछले गामो मे देखा था । एक सज्जन ने कहा - महाराजश्री । यह एक आदश गाम रहा ह ।

'आदश गाम किस रूप मे मानते हो' मने सहज मे ही अपनी जिज्ञासा प्रकट की।

म यहाँ तीस वर्ष पहले पटवारी के पद पर नियुक्त था तब यह सचमुच आदर्श ग्राम था ।

कोई विशेषता तो होगी इस ग्राम की ?

एक सबसे बडी विशेषता तो इस ग्राम की यह थी कि यहाँ का कोई भी व्यक्ति अपने आपसी मन मुटाव को लेकर न्यायालय मे नहीं गया । झगडे कहाँ पर नहीं होते मगर इस ग्राम के छोटे-मोटे झगडे यहाँ की न्याय पचायत ही सुलझा देती थी । पचो मे परमेश्वर का निवास मानकर सभी उनके निर्णयो को शिरोधार्य करते थे।

'यह सचमुच ही अच्छी बात है, और कोई विशेषता ।'

'इस ग्राम मे दस बीस बुजुर्ग लोगो की बात तो मै नहीं करता मगर शेष लोग बीडी-सिगरेट के व्यसन से मुक्त थे ।'

'दुकानदार तो बीडी-सिगरेट बेचते होगे ।'

'जब वह वस्तु बिकती ही नहीं तो दुकानदार क्यो रखेगे ? जिनको इस व्यसन की आदत थी वे बेगूँ से खरीद कर लाते थे ।'

यह बात सुनकर मैं हर्ष मिश्रित आश्चर्य से गदगद हो गई । सचमुच कितना महान् ह यह भारतवर्ष । यह भारत ग्रामो का देश हैं । सभी ग्राम यदि स्वय को आदर्श बना लें तो इसकी काया ही पलट जाये । अनपढ होते हुए भी कितने सस्कारवान ह यहाँ के नागरिक । कुछ क्षणो की चुप्पी के बाद मैंने कहा - क्या आज भी यहाँ के लोग ऐसे ही हे ।

इन वर्षो मे यहाँ क्या हुआ मुझे इसका पता नहीं मगर मेरे समय मे तो यह आदर्श ग्राम घोषित हुआ था । इस ग्राम में कार्य करते हुए मुझे बडी प्रसन्नता हुई । चित्तौडगढ जिले के बडे-बडे अधिकारी इस ग्राम का उदाहरण देकर गर्व का अनुभव करते थे ।

शिक्षा के क्षेत्र मे भी आपने बहुत कुछ किया होगा ।'

उस समय हमारा उद्देश्य था कि प्रत्येक घर से बालक बालिका विद्यालय मे जाय । आदर्श ग्राम का विद्यालय भी आदर्श बन चुका था । सस्कारवान शिक्षको ने इस आदर्श को बनाये रखने मे अपना पूर्ण योगदान दिया था ।

'अब क्या स्थिति है पता करना चाहिए - मने कहा ।'

हम अभी बेठे हुए चर्चा कर ही रहे थे कि कुछ ग्रामीण हमारे समीप आ गये । वन्दन करने के पश्चात् एक भाई ने कहा - महाराजश्री । आप तो पहली बार ही इधर पधारे हे ।

'पहली बार आये हैं यह तुम्हे कैसे मालूम ?'

'यहाँ जब भी कोई सत-सती पधारते है तो मै अवश्य उनके दर्शन करने आता हूँ ।'

'यह तो बहुत अच्छी बात है पर यह बताओ कि क्या तुम्हारा यह ग्राम आदर्श ग्राम रहा है ?'

'हाँ विल्कुल रहा हे ।'

'क्या आज भी इसके आदर्श कायम हैं ?'

अव क्या वताये महाराजश्री शहर की हवाएँ इधर भी आने लगी हे । जो युवक शहरो मे जाकर रोजगार करते हैं वे अपने आदर्श भूल जाते हैं । अपने सस्कारो का त्याग कर देते हैं । इतना सब कुछ होते हुए भी यह ग्राम अन्य ग्रामो से तो आज भी अच्छा हे ।

में विचारो मे खो गई सोचने लगी कृषि प्रधान देश के लोग सस्कारवान ह, यह इसके लिए गोरव की वात हे । कहा भी जाता है -

एतद्देश प्रसूतस्य, सकाशादग्रजन्मना ।
स्व स्व चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥

क्या आज भी ऐसी वात हे ? आज तो अधिकतर ग्राम कलह के केन्द्र वन गये ह । हमारे वे आदर्श तिरोहित क्यो हो गये ? सस्कार धीरे धीरे लुप्त क्यो हो रहे ह ? क्या हम फिर से उन आदर्शो की स्थापना नही कर सकते?

❀ ❀ ❀

37

गुणानुराग

पवचन समाप्ति के पश्चात् श्रोता वन्दन, नमन करते हुए स्थानक से बाहर निकल चुके थे । मैं पवचन पट्ट पर बठी हुई पुस्तक के पृष्ठ टटोल रही थी । तीन चार बहिने अब भी सामायिक मे माला फिराती हुई जप कर रही थी । सहसा मेरी दृष्टि द्वार से होती हुई आम रास्ते पर जाकर स्थिर हो गई ।

बाहर कुछ लोग मोन बने चल रहे थे । वह एक शव यात्रा थी । अर्थी को कधा लगाये कुछ लोग आगे चल रहे थे शेष अपनी गर्दन को झुकाये पीछे-पीछे चले जा रहे थे । भीड मे कुछ चेहरे अत्यधिक उदास लग रहे थे । उन्हे देखकर लगता था कि उनका कोइ निकटस्थ परिजन चल बसा है । वियोगजन्य पीडा की अनुभूति उनके मुखमण्डल पर स्पष्ट झलक रही थी । भीड मे कुछ चेहरे ऐसे भी थे जो मात्र आपचारिकता का निर्वाह करने हेतु आए थे मानो इस भीड का अंग बनने के लिए उन्हे अनचाहे धकेल दिया गया हो ।

शवयात्रा मेरे सामने से गुजर गइ । आम रास्ता अब खाली था । शवयात्रा म चल रहे लोगो को देखकर मैने समझ लिया कि किसी मुस्लिम भाइ की मृत्यु हुई है । एक सज्जन द्वार के पास खडे होकर शवयात्रा देख रहे थे उसके जाने के बाद वे मेरे पास चले आये और बोले कइ दिनो से बीमार चल रहा था बेचारा।

'इस शवयात्रा मे क्या विशेषता थी ?'

'विशेषता क्या थी, जेसे सबकी अर्थी निकलती हे वेसी ही यह अर्थी थी । मुस्लिम भाई की होने से स्थायी ताबूत मे जा रही थी ।'

'यह तो कोई विशेषता नही हुई ?'

'तब क्या था मने तो इस बात पर कोई ध्यान ही नही दिया ।

'इस शव यात्रा मे जितने भी लोग चल रहे थे उनके सिर पर टोपी या रुमाल बधा हुआ था ।'

'यह तो उनकी परम्परा है ।'

'उनकी यह परम्परा कहॉ नहीं है ? नमाज के समय भी तुमने देखा होगा कि सभी नमाजियो के सिर पर टोपी या रुमाल अवश्य बधा रहता हे ।'

'आप सही कहते ह । यह मुस्लिम समाज की अपनी विशेषता हे । अल्पसख्यक वर्ग होने से इनमे एकता होती हे ।'

कुछ भी हो जहॉ ये लोग अल्पसख्यक नहीं हे वहॉ भी अपने धर्म, पथ एव सम्प्रदाय के प्रति इतने ही जागरूक हे । इन्हे देखने के पश्चात् जब म जिनानुयायियो की ओर दृष्टिपात करती हूँ तो मन को बडी पीडा होती हे । धर्मसभा का नियम होता ह कि प्रत्येक व्यक्ति सामायिक ग्रहण करे । सामायिक की अपनी निश्चित वेशभूषा पहनकर धर्मलाभ प्राप्त करे मगर क्या ऐसा हो रहा ह ? धमसभा मे कितने लोग पहॅुचते ह आर उनमे से कितने विधिपूर्वक सामायिक का पालन करते ह ।

'वडे वुजुर्ग ही सामायिक मे वठते ह, आजकल के नवयुवक तो सामायिक म वठने से ही कतराते ह ।'

म देखती हूँ कुछ नवयुवक भ्रम मे या शम की वजह से आ जायग तो नाजम पर वटकर घडी की ओर देखते रहेग कि कब पवचन पूरा हो आर मगलपाठ सुनकर विदा ह । आज दस पतिशत लोग भी सामायिक मे रुचि नही

रखते । मुझे गुरुदेवश्री की बात का स्मरण हो रहा है । वे धर्मसभा मे जाजम पर बेठे लोगो को देखकर कहते थे भाई कम से कम धर्मसभा मे तो जाजम का मोह त्यागकर आसन पर बेठना सीखो इसी से धर्म एव समाज का गौरव बढेगा ।

आज हर ओर एक ही शोर है कि हर क्षेत्र मे सुधार हो रहा है तो धमक्षेत्र मे भी परिवर्तन आवश्यक हे । धार्मिक क्रियाओ को सरल एव सहज बना देना चाहिए ताकि सभी को लाभ मिल सके लेकिन ऐसा कहने वालो को यह कोन समझाये कि सच्चा धार्मिक होने के लिए कोई शर्त नही होती है । पत्येक धर्मानुरागी धर्मगुरुओ एव धर्मग्रन्थो के नियमानुसार ही जीवन को ढालने का पयास करता हे । धर्मयात्रा की बाधाओ को कसौटी के क्षण समझकर उस पर खरा उतरता है । प्राचीन इतिहास के पृष्ठ पलटने पर देखते ह कि आनद, कामदेव को आदर्श मानता हुआ श्रावक धर्म साधना मे वृद्धि करता था । आज लोग सच्चे धार्मिक नहीं ह, मगर धार्मिक बनने का ढोग अवश्य रचते ह । ध्यान साधना करते समय एक मच्छर के काटने पर छटपटाने लगते ह । हमे दूसरो को देखकर कुछ न कुछ शिक्षा लेनी ही चाहिए । अन्य धर्मावलम्बी अपने धम की रक्षा मे लगे हैं, तब हमे भी सोचना चाहिए कि **'धर्मो रक्षति रक्षित'** अथात् जो धर्म की रक्षा करता हे धर्म उसकी रक्षा करता हे । धर्म के लिए कहा गया ह कि वह सर्वसिद्धि दायक हे -

धर्मः कल्पतरुर्मणि विपहरी, रत्नं च चिन्तामणिः ।
धर्मः काम दुधा सदा सुखकरी संजीवनी औपधिः ॥

अधात् धम कल्पवृक्ष विपहर मणि चिन्तामणि, कामधेनु सजीवनी के समान ह । इसका पालन करने मे पमाद क्यो । दूसरो को देखकर सीखने की आदत हमारी कब बनेगी ? सत्य को देखकर अनदेखा करना तो मूढता ही है ।

❀ ❀ ❀

38 दान बनाम विज्ञापन

यह एक छोटा सा ग्राम था । ग्राम जैसा होता हे वेसा ही यह ग्राम था । टेढी मेढी गलियो मे घरो के बाहर कीचड फेला था । सभी वर्णों एव धर्मों के मानने वाले भी वहॉ थे । विहार करते हुए हम वहॉ पहुॅच गये । जेनियो के पॉच छ घर थे । हमारे पहुॅचने पर उनमे उत्साह भर गया । उनके बताये रास्ते से स्थानक मे पहुँच गये । हमारे पहुॅचने के समाचार पाकर लोगो ने स्थानक की सफाई की । फर्श की धूल हट गई मगर दीवारो, दरवाजो एव खिडकियो पर अभी भी धूल जमा थी । उसे देखकर आभास हो गया कि सत-सती के आगमन पर ही इस स्थानक की सुध ली जाती हे ।

हमने एक कक्ष मे वस्त्र, पात्र आदि उपकरण रख दिये थे । दूसरे कक्ष की स्थिति ओर भी बदतर थी । मने एक सज्जन की ओर देखकर कहा - कितन महिनो के पश्चात् यह स्थानक खुला ह ?

'क्या करे महाराजश्री । यहॉ कोई आता ही नहीं हे ।'

'आप क्या करते ह ?'

'मेरी इस गाम मे किराने की दुकान ह ।'

'क्या चावीस वण्टे ही दुकान पर वठे रहते ह ?'

'नहीं, ऐसी तो काइ वात नही ह ।'

'सामायिक-स्वाध्याय का समय निकालते हो ?'

'हाँ महाराजश्री । घर पर ही सामायिक करता हूँ ।'

'यह ठीक नहीं है । ग्राम मे स्थानक बना हुआ है तो उसका भी नियमित उपयोग होना चाहिए । धर्म साधना के लिए स्थान निर्धारित है तो आप लोगो को यहाँ पर आना चाहिए ।'

'इसके लिए मैं क्षमा चाहता हूँ, अब आपने कह दिया है तो मैं आगे यहीं पर आकर सामायिक करूँगा ।'

'आपको ग्राम के अन्य भाइयो को भी प्रेरणा देनी है । मै भी उन्हे प्रेरित करूँगी ।

'अब तक तीन चार भाई और आ गये थे उन्हे भी प्रेरणा दी तब उन्हे अपनी भूल का अहसास हुआ । वे सब जा चुके थे । मेरी दृष्टि दीवार पर टगे एक चित्र पर गई । वह हाथ से बना एक तिथि पत्रक था । जैन साध्वीजी की स्मृति मे वहाँ के लिए किसी ने भेट किया था । भेटकर्ता ने स्वय के साथ पिता, प्रपिता, पुत्र एव पोत्रो के नाम लिख रखे थे । तिथि पत्रक के अक्षरो से भेटकर्ता के अक्षर बडे होने के कारण दर्शक को वे ही पहले दिखाई देते थे।

चित्र को देखकर मुझे आश्चर्य हो रहा था कि बीस पच्चीस रुपये के दान का कितना बडा-भारी विज्ञापन किया गया है । दान मे कुछ देकर अधिक पाने की आकाक्षा ने ही शायद ऐसा करवाया ह । कहाँ तो यह भावना शास्त्रकारो ने बताइ ह कि दाहिना हाथ दान करे तो बाये हाथ को पता भी नहीं लगना चाहिए पर यहाँ तो बात ही कुछ और थी । इस भारत मे ऐसे भी दानी हुए जो गरीबो को दान देते वक्त लड्डुओ मे अशर्फिया रख देते थे । आज यह परम्परा कहाँ लुप्त हो गइ ?

आज का दानदाता दान देकर प्रसिद्धि चाहता है । सौ पचास रुपये देकर समाचार पत्रो की सुर्खियो मे आने को मचलता ह । दानवीर के पद से विभूषित होने का लालायित रहता ह । एक युग था जब दान देकर लोग यश के भागी

बनते थे मगर आजकल तो यश की कामना पहले की जाती हे ओर दान उसके बाद दिया जाता ह । अध्यक्ष, मुख्य अतिथि बनकर समारोह मे सम्मान पाप्त करके हजारो की जनमेदिनी मे दान की घोषणा करके भामाशाह बनने का दभ भरते ह । आज दान को भी दिखावे ने लील लिया हे ।

एक ओर राष्ट्र का एक वर्ग अरबो रुपये अपने मौज शोक मे खर्च कर देता हे वही करोडो लोग प्राकृतिक प्रकोप का दारुण दु ख झेलते हुए कष्ट पा रहे हैं । बाढ, अकाल, चक्रवात एव युद्ध के कारण लाखो लोग बेघर बार होकर भटक रहे ह । उनके दु खो को दूर करने की जिम्मेदारी समाज के सम्पन्न वर्ग की ह । यदि वे शान्ति से जीवनयापन करना चाहते है तो उन्हे अपनी आमदनी का दशमाश ही सही, खुशी-खुशी दान मे निकालना ही चाहिए । व्यापारियो, उद्योगपतियो को न चाहते हुए भी सरकार को कई प्रकार के कर देने पडते ह। फिर दान देने मे उनके कर (हाथ) आगे क्यो नही आते ? दान तो मानव को दुगति से बचाने वाला हे ।

प्रकृति से प्राणी को सीख लेनी चाहिए । हवा, पानी, ऊष्मा देने वाली प्रकृति कीर्ति की चाह नही रखती तो फिर मानव मन मे यह जागरूकता कब आयेगी । दान की महिमा से सभी धर्मों के ग्रन्थ भरे हुए हे, दान देना सद्‌गृहस्थ का धर्म माना गया ह तो फिर इस शुभ कार्य मे देर क्यो की जाती हे । लक्ष्मी को चचला जानकर भी मनुष्य उसे पकडने की रोकने की चेष्टा क्यो करता ह। वह तो जसे आई ह वसे ही जायेगी । महापुरुषो ने इसीलिए कहा ह -

लच्छी दिज्जउ दाणे दया-पहाणेण ।
जा जल तरंग चचला दो तिण्णि दिणाइ चिट्ठेइ ॥

अथात् यह लक्ष्मी जल मे उठने वाली लहरो के सदृश चचल ह । दो तीन दिन ठहरने वाली ह । अत इसे दयालु होकर दान दो । जो दान देगा उसे कीति अपने आप ही मिलेगी । स्वय का विज्ञापन करना उचित नही लगता । आज फिर समाज को सोचने की आवश्यकता हे ।

39 उपहार

इस वष का होली चातुर्मास सिगोली करके चित्तौडगढ की ओर बढ रहे थे । विचार था कि महावीर जयती तक चित्तोड पहुँच जायेगे । मगर ग्रामो की श्रद्धा एव भक्ति ने हमे छोटे-छोटे ग्रामो मे जाने के लिए प्रेरित कर दिया था । आखिर में यही निणय हुआ कि महावीर जयती का लाभ रास्ते मे आने वाले किसी गाम को ही मिलेगा । बेगूँ के आस पास के श्रद्धालु नियमित दर्शनार्थ उपस्थित हो रहे थे । अधिकाश श्रद्धालु यह चाहते थे कि महावीर जयन्ती का लाभ उनके ग्राम को मिले ।

पारसोली चित्तोडगढ के रास्ते मे ही आता ह । धर्म श्रद्धा की दृष्टि से यह क्षेत्र पशसनीय हे । यहा के श्रद्धालु धर्मप्रेमी वरावर अपनी विनती लेकर छोटे-छोटे ग्रामो मे उपस्थित हो रहे थे । उनकी भावना रग लाई आर महावीर जयन्ती पारसोली मे मनाने का निश्चय हो गया । महावीर जयन्ती की स्वीकृति देने से पूव हमने एक शत भी जोड दी कि वीर पभु को त्याग-तप का उपहार आपको अवश्य देना होगा।

'त्याग तप का उपहार कसे देना ह ?' एक सज्जन वोले ।

इक्कावन दया आर उपवास करने होगे ।' मेरी वात सुनकर के अव ा सज्जन वहाँ खडे थे एक दसरे का मुँह ताकने लगे ।

क्यो क्या वात हो गइ मेरी वात समझ मे नहीं आई ?'

'सब समझ गये महाराज श्री । आप चिन्ता न करे इतना उपहार तो मिल ही जायेगा ।'

'तब महावीर जयन्ती पारसोली मे हो सकती है ।

वे हर्ष विभोर होकर अपने स्थान पर लोट गये । हम भी समय पर पारसोली पहुँच गये । सम्पूर्ण ग्राम के लोगो मे बडा उत्साह था । वहॉ एक सूची तैयार की गई, जिसे देखकर हमारे आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं था । हमने इक्कावन दया-उपवास की भावना प्रकट की मगर नब्बे की सूची हमारे सामने थी ।

महावीर जयन्ती के दिन व्यापार और बाजार बन्द रखने की घोषणा हो चुकी थी । सवेरे भव्य प्रार्थना सभा का आयोजन हुआ । बच्चे, बूढे, युवतियाँ, महिलाएँ सव ने वडे उत्साह से उसमे भाग लिया । व्याख्यान मे श्रोताओ की छटा अवलोकनीय थी । धर्मसभा मे कई वक्ताओ ने भगवान महावीर का गुणानुवाद कर अपनी भक्ति प्रकट की । श्रद्धालुओ का त्यागमय स्वरूप देखकर मन मे आत्मतोष हुआ । सब कुछ सादगीपूर्ण था । आडम्बरो से दूर यह आयोजन भगवान महावीर के प्रति सच्ची आस्था का एक सेतु था ।

सभा स्थल पर त्याग के सुन्दर सुमन खिल रहे ते । युवक युवतियॉ बडे वृढे सव दया-उपवास की भावना से बेठे हुए थे । वहॉ पर या तो हम साध्वियॉ या धर्मप्रेमी श्रावक श्राविकाएँ । न कोई राजनेता था न कोई आमत्रित श्रेष्ठी, जनके कारण श्रावक मूल उद्देश्य को भूलकर उन राजनेताओ के गुणो का बखान करते हुए नहीं थकते । वह आयोजन जिसमें त्याग की पावन मदाकिनी प्रवाहित हुइ आज भी ह्रदय के एक कोने मे स्थिर हे ।

महापुरुषो की जयन्तिया पर वडी-वडी योजनाएँ बनती ह । उद्घाटन, भाषण एव चाटन होत ह लेकिन धम साधना नहीं हो पाती । यह वात सन्त समाज को भी खटकती ह कि धर्म प्रभावना मे कमी आती जा रही ह । समारोह के पश्चात् अनेक श्रद्धालु जो वाहर से आये अपने अपन स्थानो पर जाने हेतु मगल पाठ लेकर वन्दना करते हुए जा रहे थे ।

मैं विचारो मे खोई समय के साथ लोगो की भावना मे आये परिवर्तन पर विचार कर रही थी । तभी एक सज्जन ने आकर कहा - 'महाराज श्री ! महावीर जयन्ती पर प्रथम बार इतनी त्याग-तपस्या हुई है ।'

'यह तो सब गुरु भगवन्तो की कृपा है ।'

'यदि आपकी कृपा हम पर नहीं होती तो यह धर्म मेला यहाँ नही जुड पाता। आज तो क्या जैन, क्या अजैन सब जगह आपकी ही चर्चा है । महाराजश्री की कृपा से इतनी दया और उपवास का लाभ प्राप्त हुआ ।'

'आपने अपनी श्रद्धा प्रकट की है तो धर्मलाभ मिला ही है । इस कार्य को शिथिल न होने दे । भविष्य मे भी किसी पर्वोत्सव, महापुरुषो की जन्म जयन्ती आये तो धार्मिक उत्साह मे वृद्धि करे इसमे कमी नहीं आनी चाहिए ।'

'यदि प्रेरक आप जैसे हो तो कमी आने का प्रश्न ही पैदा नही होता । आप समय समय पर आकर हमे जाग्रत करते रहे, बस यही हमारी भावना ह ।' एक भाई ने पमुदित मन से कहा ।

धर्माराधको को जगाने की क्या आवश्यकता हे ? वे तो सदैव जाग्रत रहते ह । मानव को धर्मसाधना करते हुए मनुष्य भव का पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहिए । कहा भी गया हे -

नो हूवण मन्ति राइओ, नो सुलभं पुणरावि जीवियं ।

अर्थात् जेसे बीती रात्रि नहीं लोटती वेसे ही मनुष्य जीवन पुन प्राप्त करना कठिन ह । आप सुज्ञ ह, सदव दया, दान, तप, सेवा करके इस जीवन को साधक बनाये । भगवान महावीर के उपदेशो का रसपान कर जीवन कमल को खिलाते रहे। त्याग की गगा अब रुके नहीं यही मेरी भावना हे ।

40 मृत्यु मीत नहीं बन पाई

रात्रि प्रवास गोपालपुरा मे करके सूर्योदय होते ही वहाँ से विहार कर दिया । अप्रल का महिना आधा बीत चुका था । दिन मे धूप तेज हो जाती ह यही सोचकर सूर्योदय होते ही वहाँ से निकल गये । पोने नो बजे तक हम बस्सी कस्बे मे आ गये । गर्मी कुछ तेज ही थी । आठ बजते बजते तो सूर्य की रश्मियाँ अग्निवाण बनकर धरती पर बरसने लगी । लक्ष्य बस्सी तक पहुँचने का था जो चलते चलते पूरा हो गया । यात्रा जन्य थकान को ग्रीष्म ने द्विगुणित कर दिया । गर्मी के कारण घबराहट होने लगी । बस्सी मे पहुँचकर एक जेन परिवार के खाली मकान मे ठहरे । सभी के चेहरे थकान की अभिव्यक्ति कर रहे थे ।

कुछ पल विश्राम करने के पश्चात् ग्राम के कुछ भाई वन्दन करके गाचरी हेतु पधारने का निवेदन करने लगे । श्रद्धालुओ की भावना का ध्यान रखत हुए साधु मर्यादानुसार आहार पानी की गवषणा की । अन्य दिनो की अपक्षा आज आहार जल्दी ही ग्रहण कर लिया । वहिने, बच्चे एव कई श्रावक वगवर आ जा रहे थे । एक सज्जन समाचार पत्र पढने को रख गये । म देश-विदेश की घटनाओ का सरसरी निगाहा से देख रही थी, तभी कहा दूर मे आता हृदयवधी रुदन सुनाइ दिया । सभी सतियाँ यह रुदन सुनकर अवाक् रह गइ । एक-एक करके वे मेरे पास आ वठी थी ।

एक के रुदन स्वर मे दूसरा, तीसरा, चौथा स्वर मिलते-मिलते अब वह सामूहिक रुदन हो गया था । सामूहिक रूप मे आती रुदन की करुणा भरी आवाज को सुनकर यह समझते देर नही लगी कि ग्राम मे कोई अपिय घटना घटित हुई ह।

वहॉ जो भाई बहिन बैठे थे उन्हे भी कोई पता नहीं था । तभी एक सज्जन हमारे पास आकर बैठ गये ।

एक बहिन ने आने वाले सज्जन से पूछा - किसके क्या हो गया है?

'आपके उधर ही एक बालक की मृत्यु हो गई है ।'

'हमारे उधर अरे भाई, ऐसा केसे हो सकता हे ? मेरे आस-पास तो कोइ बीमार भी नहीं था । बीमार होता तो मैं अनजान कैसे रहती । यह तो कोई अनहोनी ही हुई हे ।'

'हॉ अनहोनी ही हुइ हे । उस लडके ने वर्फ की कुल्फी खाई, उसके वाद उसका जी घवराने लगा । एक दो उल्टी हुई तो तत्काल ही अस्पताल ले गये लेकिन काल ने उसके पाण पख कतर लिए थे ।'

'कितनी अवस्था होगी ?'

'यही कोई पॉच वष का होगा ।'

'अरे यह तो वहुत ही बुरा हुआ । आज उसका आयुष्य पूरा हो गया था। यह कहकर मैं चुप हो गइ । आस पास सन्नाटा छा गया । मुझे रह रहकर उस परिवार के लिए विचार आ रहा था, जिसका वालक कुछ घण्टो पहले हॅस खेल रहा था मगर अव चिरनिद्रा मे सो गया । यह मृत्यु भी दवे पॉव आकर हाहाकार को छोडती हुइ लोट जाती ह । इसके आने का कोई सन्देशा भी नहीं आता क्योंकि -

''यह न गाती हे न गुनगुनाती है ।
मोत ह, चुपचाप चली आती हे ॥''

इस मौत का क्या भरोसा ? कब किसके घर मे बिना द्वार खटखटाये प्रवेश कर जाये । कब किसको अपना हमसफर बना ले । मृत्यु को कोई नही जीत सकता। भगवान महावीर ने कहा भी है -

'मच्चुणा अब्भाहओ लोगो ।'

अर्थात् यह लोक मृत्यु से आक्रान्त है । सभी प्राणी देर सवेर काल के गाल मे पहुँचेगे ही । यह बात सभी जानते है फिर भी मानव पापवृत्तियो से विमुख नही हो रहा है । मृत्यु किसी की मित्र नहीं होती । मानव की आकाक्षा सदेव विजय-प्राप्ति की होती है लेकिन मृत्यु पर उसका बस नही चल पा रहा ह । आज का मानव आकाश मे पछी की भॉति उड रहा हे । सागर की अतल गहराइयो मे शफरी की भॉति तेर रहा हे मगर मृत्यु के समक्ष वह हाथ डालकर खडा हे । वह उसके नाम से ही डरा हुआ है । मानव यह जानता है कि सयोग के साथ वियोग भी जुडा हुआ हे फिर भी वह इस वियोग से व्यथित हो जाता ह । इस विलाप का क्या प्रयोजन हे ?

मानव का जीवन यदि देखा जाये तो दूब पर टिके ओस बिन्दु के समान ह जो हवा के एक झोंके से कभी भी धूल मे गिर कर समाप्त हो सकता ह । मृत्यु का कोई मुहूर्त नही होता हे । उसका आना निश्चित हे फिर उससे व ।। कसा? जिस दिन मात का फरमान आयेगा उस दिन प्राण तत्व इस देह , त्याग करके चला जायेगा । बिना प्राणो के देह का क्या उपयोग ? वह भी चतत्व मे विलीन कर दी जायेगी । यह सब जानकर क्यो ना हम ज्ञा के आलोक मे रहकर जीवन मे उजाला भरे । क्योकि -

इह भविए वि नाणे, पर भविए वि नाणे, तदुभए वि नाणे।

अर्थात् ज्ञान का आलोक इस जन्म, पर जन्म आर दोनो जन्मा म भी साथ रह सकता ह । हमे यह जानकर जीवन जीना चाहिए कि मृत्यु-सत्य ह जिसे एक दिन आना ह । कोइ चाहे कितना ही कुछ कर ले मृत्यु को रोक नहीं सकता । उसका आगमन अवश्यभावी ह ।

❀ ❀ ❀

41 मरुस्थल की प्यास

चित्तौड मे प्रवासकाल चल रहा था । श्रद्धालु श्रावको का आवागमन जिले का प्रमुख केन्द्र होने के कारण अधिक ही था । ऐतिहासिक दुर्ग को देखने दूर-दूर के लोगो का आगमन होता रहता हे । दनिक कार्यों से निवृत्त होकर स्वाध्याय के लिए आगम ग्रन्थ से सम्बन्धित एक पुस्तक का अवलोकन कर रही थी । में उसके भावो मे डूबी हर पक्ति पर चिन्तन कर रही थी तभी एक सज्जन ने आकर वन्दना की और बोला - आपने कुछ सुना महाराजश्री ।

- 'कहो क्या बात हो गई ?'

- 'रात को नगर मे एक बहुत बडा हादसा हो गया ।'

- 'केसा हादसा ?'

'एक परिवार के सभी सदस्यो ने रात मे सेल्फास की गोलियॉ खाकर अपनी जीवन लीला ही समाप्त कर ली ।'

'यह तो बहुत बुरा हुआ । क्या कारण रहा होगा ?'

कारण का तो अभी कुछ पता नहीं चला ह ।'

बात सुनकर मेरे मन मे उथल पुथल मच गई । कलेजा कॉपने लग गया। अब तक यह समाचार हवाओ के साथ पूरे शहर मे फल चुका था । कारण [illegible] नहीं चल पाया । सभी को इस बात का अफसोस था कि

ग्रा का पूरा परिवार ही जानबूझ कर मृत्यु की गोद मे जाकर बेठ गया । म चुपचाप वहाँ बैठे लोगो की बाते सुन रही थी । चेहरे सभी के लटके हुए थे। कुछ इस कार्य को कायरता की सज्ञा दे रहे थे। कुछ परिवार के मुखिया की मूढता बताते हुए मासूम बच्चो को भी गोलियाँ खिलाने को पापकर्म की उपमा दे रहे थे ।

मुझे ऐसा लग रहा था मानो सन्नाटे ने कील दिया है । विचारो की प्रचण्ड हवाएँ मेरे मन-मस्तिष्क मे चल रही थी । जीए बिना ही जीवन को समाप्त कर देना कहाँ की बुद्धिमानी है । न जाने कितने पुण्यो के सचय से मानव जीवन मिला है। सब जानते ह कि जीवन सघर्ष का ही दूसरा नाम ह । भातिकता की चकाचाध मे खोया मानव बाह्य सुख का इतना दास हो गया ह कि आन्तरिक वभव के सुख को जान ही नहीं पा रहा हे । जीवन के ज्योतिर्मय दीपक को फूक देकर बुझा देने वाले एव बाह्य वेभव मे किचित् कमी होने पर मृत्यु का वरण करने वाले, अज्ञानी ही हे ।

इम ससार के प्रागण मे एक ओर तो कुछ मानव, मानव होते हुए भी दानवता का चोला ओढ लेते ह, वहीं कुछ मानव से महामानव बनकर जीवन ` गारवान्वित कर देते ह । यह केसी मृत्यु हे ? भारतीय सस्कृति मे तो 'मृत्योमा अमृत गमय' की याचना की गई किन्तु यहाँ पर बिल्कुल ही उल्टा हो गया ह।

इस मानव जीवन को ज्ञानियो ने अनमोल बताया हे । इसे धन आर सम्पत्ति के तराजू मे नहीं तोला जा सकता । इस हादसे की बात सुनकर तो लगता ह कि जीवन मूल्यहीन हो गया ह । जब तक इच्छानुकूल आनद मिलता रहा तब तक जीवन को जी लिया आर जब इससे मन भर गया इसको नष्ट कर दिया । आज के इस अशान्त वातावरण मे न जाने कितने महामूढ आवेश म आकर फासी लगा लेते ह । कुछ विषपान कर लेते ह । काइ काई तो नदी-कूप म भी डूब जाते ह । वे सोचते ह कि मृत्यु से दु खो का अन्त हो गया पर उन नादानो को यह पता नहीं ह कि आत्मा कभी नहीं मरती वह अजर अमर ह,

फिर कोई नई देह धारण करेगी फिर उन्हीं दु खो का सिलसिला शुरु हो जायेगा। पानी की धारा कभी तलवार से नहीं काटी जा सकती । आत्मा को मुक्ति की चाह होती हे । मौत से अगर मुक्ति नहीं मिली तो इसका क्या होगा ?

जीवन मे इच्छाएँ तो मरुस्थल की प्यास के समान होती है जो कभी नहीं बुझती । आज के मानव मे आत्मविश्वास, ज्ञान एव सयम का अभाव होने के कारण वह शक्तिहीन बनता जा रहा है । आसुरी भाव जब तक जीवन से नहीं जायेगा तव तक जीवन अशान्त बना रहेगा । क्या मौत उसे शान्ति प्रदान कर देगी ? जितना आयुष्य पाप्त हुआ है उसके पश्चात् यदि कोई एक दो पल भी जीने की कामना करे तो यह मानव के लिए सभव नहीं है । धूप-छाव तो इस जीवन उपवन के खेल है इसीलिए तो किसी ने कहा है-

दर्द को पीना जरूरी, घाव को सीना जरूरी ।
है तो बडा मुश्किल पर जिन्दगी जीना जरूरी ॥

जब आयुष्य को बढाना हमारे हाथ मे नहीं हे तब मारक वस्तुओं के द्वारा इस जीवन मन्दिर को ढहाने का हमे क्या अधिकार हे । ये घटनाएँ मानव जीवन का कलक ह । आज का मानव चिन्ताओ मे इतना डूब गया ह कि चिन्तन क भाव ही नष्ट हो गये हे आज तक किसी पशु ने खुदकशी नहीं की, तो इस मानव मन मे ऐसे भाव क्यो पदा हो रहे हें ? लगता ह ऐसे लोग धर्म का पथ दखने से ही वचित रह गये । उन्हे कोई तो समझाये कि - **"पुढो छदा इह माणवा, पुढो दुक्ख पवेइय"** अर्थात् ससार मे लोग भिन्न-भिन्न अभिपाय वाले होते ह । उन्हे अपना अपना दु ख स्वय ही भुगतना पडता ह । भुगते विना आत्मा को विश्रान्ति नहीं मिलती तो फिर इस पकार जीवन का अन्त करने से क्या लाभ होगा ।

ूरा का पूरा परिवार ही जानबूझ कर मृत्यु की गोद मे जाकर बैठ गया । मै चुपचाप वहाँ बैठे लोगो की बाते सुन रही थी । चेहरे सभी के लटके हुए थे। कुछ इस कार्य को कायरता की सज्ञा दे रहे थे। कुछ परिवार के मुखिया की मूढता बताते हुए मासूम बच्चो को भी गोलियाँ खिलाने को पापकर्म की उपमा दे रहे थे ।

मुझे ऐसा लग रहा था मानो सन्नाटे ने कील दिया है । विचारो की प्रचण्ड हवाएँ मेरे मन-मस्तिष्क मे चल रही थी । जीए बिना ही जीवन को समाप्त कर देना कहाँ की बुद्धिमानी है । न जाने कितने पुण्यो के सचय से मानव जीवन मिला है। सब जानते है कि जीवन सघर्ष का ही दूसरा नाम है । भौतिकता की चकाचौंध मे खोया मानव बाह्य सुख का इतना दास हो गया है कि आन्तरिक वैभव के सुख को जान ही नहीं पा रहा है । जीवन के ज्योतिर्मय दीपक को फूक देकर बुझा देने वाले एव बाह्य वैभव मे किचित् कमी होने पर मृत्यु का वरण करने वाले, अज्ञानी ही है ।

इस ससार के प्रागण मे एक ओर तो कुछ मानव, मानव होते हुए भी दानवता का चोला ओढ लेते है, वहीं कुछ मानव से महामानव बनकर जीवन को गौरवान्वित कर देते है । यह कैसी मृत्यु है ? भारतीय सस्कृति मे तो 'मृत्योर्मा अमृत गमय' की याचना की गई किन्तु यहाँ पर बिल्कुल ही उल्टा हो गया है।

इस मानव जीवन को ज्ञानियो ने अनमोल बताया है । इसे धन और सम्पत्ति के तराजू मे नहीं तोला जा सकता । इस हादसे की बात सुनकर तो लगता है कि जीवन मूल्यहीन हो गया है । जब तक इच्छानुकूल आनद मिलता रहा तब तक जीवन को जी लिया और जब इससे मन भर गया इसको नष्ट कर दिया । आज के इस अशान्त वातावरण मे न जाने कितने महामूढ आवेश मे आकर फासी लगा लेते है । कुछ विषपान कर लेते है । कोइ कोई तो नदी-कूप मे भी डूब जाते है । वे सोचते है कि मृत्यु से दु खो का अन्त हो गया पर उन नादानो को यह पता नहीं है कि आत्मा कभी नही मरती वह अजर अमर है,

फिर कोई नई देह धारण करेगी फिर उन्ही दु खो का सिलसिला शुरु हो जायेगा। पानी की धारा कभी तलवार से नहीं काटी जा सकती । आत्मा को मुक्ति की चाह होती है । मौत से अगर मुक्ति नहीं मिली तो इसका क्या होगा ?

जीवन मे इच्छाएँ तो मरुस्थल की प्यास के समान होती है जो कभी नहीं बुझती । आज के मानव मे आत्मविश्वास, ज्ञान एव सयम का अभाव होने के कारण वह शक्तिहीन बनता जा रहा है । आसुरी भाव जब तक जीवन से नहीं जायेगा तब तक जीवन अशान्त बना रहेगा । क्या मौत उसे शान्ति प्रदान कर देगी ? जितना आयुष्य प्राप्त हुआ है उसके पश्चात् यदि कोई एक दो पल भी जीने की कामना करे तो यह मानव के लिए सभव नही है । धूप-छाव तो इस जीवन उपवन के खेल है इसीलिए तो किसी ने कहा है-

दर्द को पीना जरूरी, घाव को सीना जरूरी ।
है तो बडा मुश्किल पर जिन्दगी जीना जरूरी ॥

जब आयुष्य को बढाना हमारे हाथ मे नहीं हे तब मारक वस्तुओ के द्वारा इस जीवन मन्दिर को ढहाने का हमे क्या अधिकार है । ये घटनाएँ मानव जीवन का कलक ह । आज का मानव चिन्ताओ मे इतना डूब गया हे कि चिन्तन के भाव ही नष्ट हो गये है आज तक किसी पशु ने खुदकशी नहीं की, तो इस मानव मन मे ऐसे भाव क्यो पदा हो रहे हें ? लगता है ऐसे लोग धर्म का पथ देखने से ही वचित रह गये । उन्हे कोई तो समझाये कि - **"पुढो छदा इह माणवा, पुढो दुक्ख पवेइय"** अर्थात् ससार मे लोग भिन्न-भिन्न अभिप्राय वाले होते ह । उन्हे अपना अपना दु ख स्वय ही भुगतना पडता ह । भुगते बिना आत्मा को विश्रान्ति नही मिलती तो फिर इस प्रकार जीवन का अन्त करने से क्या लाभ होगा ।

42 वातावरण का प्रभाव

चित्तोड जिले मे एक ओर जहा राजसी वभव को दर्शाने वाले दुर्ग एव महलों की अनुपम छटा बिखरी हुई दिखाई देती हे वहीं देव स्थानो की भी गोरवपूर्ण शृखला है । वैष्णव परम्परा के लिए नाथद्वारा, काकरोली, चारभुजा एव एकलिग जी के भव्य प्राचीन मन्दिर है तो जेन धर्म के मन्दिर मार्गी सम्प्रदाय के ऋषभदेवजी एव रणकपुर के मन्दिरो की अलग ही छटा हे । इन सवसे हटकर देवी माताओ के दर्शनीय मन्दिरो का भी अपना महत्त्व हे ।

चित्तौडगढ प्रवास मे यह भाव बन गये थे कि यहॉ से विहार कर सीधे बिजयनगर पहुॅचना चाहिए जिससे आचार्यप्रवर गुरुदेव श्री सोहनलाल जी महाराज सा के दर्शन-लाभ मिल सके । मन के भाव तो सॉसों के समान ही आते जाते हैं । चित्तौडगढ से बिजयनगर की दूरी, मोसम की भयकर गर्मी के साथ-साथ स्वास्थ्य भी कुछ नरम हो गया था । मेवाड-क्षेत्र से श्रद्धालुओ का आना जाना भी बराबर लगा हुआ था । दूर दराज के श्रद्धालुओ की यह भावना थी कि आप यहॉ तक आये है तो हमारे ग्राम-नगर मे भी पधार कर सेवा का मोका प्रदान करे । सारे पहलुओ पर विचार करने के पश्चात् श्रद्धालु श्रावको की ही जीत हुई । हमे गुरुदर्शन का लोभ त्यागकर क्षेत्र-स्पर्शन की वात को स्वीकारना पडा।

हम चित्ताड से प्रस्थान करके प्रथम पडाव के रूप मे पाडोली पहुॅच गये । पाडोली एक छोटा सा ग्राम ह । चित्ताड से आने वाली सडक इधर से

ही कपासन की ओर जाती है । यहाँ बस अड्डे के समीप ही एक मकान मे ठहरना हुआ । बस अड्डे से एक रास्ता झातला माता की ओर जाता है । एक पट्ट पर झातला माता मार्ग लिखा हुआ था । जीप, कार, दुपहिया वाहन उस मार्ग पर आ जा रहे थे । हमे वहाँ पर देखकर कई श्रद्धालु श्रावक आते जाते हमसे मिलने भी आ जाते । उन सबके मुख से एक ही बात निकलती कि हम झातला माता के दर्शन को गये थे । आपके दर्शन पाकर तो हमे और भी प्रसन्नता हुई।

'आप तो झातला माता के स्थान पर गये होगे ?' एक सज्जन ने कहा।

'नहीं अभी तक तो नहीं गये ।'

'यहाँ कब पधारना हुआ ?'

'आज ही आये हैं ।'

'यह बहुत ही अच्छा स्थान हे प्रतिवर्ष हजारो श्रद्धालु माताजी के दर्शनो को आते हें । नवरात्रि मे तो मेला भरता हे, मगर सामान्य दिनो मे भी वहाँ पर आने जाने वालो का ताता लगा रहता है । पक्षाघात जेसी बीमारी तो यहाँ आने पर ठीक हो जाती ह । लोग सोये-सोये आते हैं आर पेदल चलकर जाते ह ।

'क्या सब ठीक हो जाते हें ?'

सबकी तो मैं नहीं कहता मगर अधिकतर लोग ठीक होते देखे गये हें। पत्येक शनिवार को यहाँ मेले का-सा दृश्य हो जाता हे । रात मे लोग देवी मन्दिर के प्रागण मे रहते हैं आर रविवार को घर लोट जाते हें ।

म उन सज्जन की बात सुन रही थी । झातला माता की महिमा का व्याख्यान पर्व मे भी अनेक बार सुना था । सोचती थी कि वहा ऐसा क्या ह, जिसके प्रभाव से रोगी चगे हो जाते हें । पास वठे साध्वीजी ने कहा - महाराजश्री । जब हम यहाँ तक आ गये हें तो वह स्थान भी फरस लेना चाहिए ।

"यहॉ से कितना दूर है ?"

"आधा किलोमीटर हे ।"

"ठीक हे दस मिनट का रास्ता हे, अनुकूलता रही तो फरसेंगे ।'

अनुकूल समय देखकर हम वहॉ पहुॅच गये । हमारे साथ ग्राम के कुछ भाई भी थे । मन्दिर के आस पास धर्मशालाएँ बनी हुई थी । कुछ स्थायी दुकाने भी लगी हुई थी, जहॉ से श्रद्धालु प्रसाद लेकर माताजी को चढाते हें। मदिर के सामने विशाल परिसर था । जिसमे अनेक रोगी सोये हुए थे । मन्दिर की परिक्रमा मे भी बीमार सो रहे थे । उनके साथ उनके अपने परिजन भी थे । मन्दिर मे देवी का प्रतीक चिह्न बना था । पुरुषो की वनिस्पत वहॉ महिलाओ की सख्या अधिक थी । कुछ लोगो से चर्चा की तो पता चला - कुछ-कुछ लाभ हे इसीलिए यहाँ आ रहे हैं । उस स्थान से सम्बन्धित अनेक किवदन्तियॉ भी सुनने को मिली। मैं सोचने लगी क्या यह सच हे ? सभी तो स्वस्थ नहीं होते ? कुछ निराश भी लौटते हैं । देवी के दरबार मे यह भेदभाव क्यो ? यह सब इस स्थान के वायुमण्डल का परिणाम है । यहॉ के वृक्षो से होकर वायु इस तरह से चलती हे कि उसकी शक्ति से शरीर पर विशेष प्रभाव पडता ह । पक्षाघात के रोगी को यहॉ का वायुमण्डल स्वस्थ होने मे मददगार होता हे ।

जेन दर्शन के अनुसार सभी के अपने वेदनीय कर्म हॅ । जिसके साता वेदनीय कर्म का उदय होता हे उसे स्वास्थ्य लाभ मिलता ह । उपादान को बदलना सहज नहीं है । असाता की उपशाति का समय आने पर ये स्थान निमित्त बन जाते हें ।

ससार के लोग अपने पूर्वकृत कर्मों से आबद्ध ह उन्हे अपना-अपना दु ख स्वय ही भोगना पडता हे । वे पुण्यवान ह जिन्हे इस स्थान पर आकर स्वास्थ्य लाभ मिलता है ।

❀ ❀ ❀

43 श्रद्धा की उर्मियां

पाडोली से विहार करके सावता पहुँच गये । यह ग्राम कुछ विकसित ह । बालको की शिक्षा के लिए यहाँ पर एक माध्यमिक विद्यालय हैं । ग्राम के विद्यार्थी यहीं से दसवीं तक ओपचारिक शिक्षा प्राप्त करके उच्च शिक्षा हेतु चित्ताड जाते हैं । हम सावता के इस माध्यमिक विद्यालय मे ही ठहरे । बालको की परीक्षाएँ हो चुकी थी । विद्यालय बालको के बिना सूना-सूना लग रहा था । दूर एक कक्ष मे शिक्षकगण परीक्षा परिणाम तैयार करने मे व्यस्थ थे । हमारे वहाँ पहुँचने से सभी शिक्षिको मे प्रसन्नता थी । श्रद्धालुओ का आवागमन होने लगा था । आहारादि के पश्चात् स्वाध्याय, लेखन व पठन मे हम व्यस्त हो गये ।

दोपहर होने लगी थी । शिक्षक बन्धुओ के घर जाने का समय हो गया । बाहर बडी तेज धूप थी । एक शिक्षक हमारे पास आकर बैठ गये । हाथ जोडकर उन्होने कहा - आपको मैंने चित्तोड मे देखा था ।

'हाँ हम चित्ताड से ही यहाँ आये ह ।'

आप जहाँ ठहरे थे' मेरा घर भी पास मे ही था । मन । कई बार हुआ कि आपके दर्शन करूँ मगर सकोचवश नहीं आया ।'

'अरे भाइ । हमारे पास आने म क्या सकोच, आप तो देख ही रहे ह- बच्चे और बहिन आ-जा रहे ह ।'

'मैं जैन नहीं हूँ इसलिए मन मे थोडा विचार आता था कि आप क्या सोचेंगे ?'

'क्या जैन और क्या अजैन हमारे पास तो सभी वर्ण एव जातियो के भाई बहिन आते हे ।'

'आपकी क्या जाति है महाराजश्री ?'

'अरे भाई । सन्त सती की क्या जाति होती हे ? साधु-साध्वी की जाति पूछने की जरूरत ही क्या है ? आपने एक दोहा पढा ही होगा -

जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान ।

मोल करो तलवार का, पडी रहन दो म्यान ॥

'हमने तो सासारिक बन्धनो को त्याग दिया हे । भगवान महावीर तो क्षत्रिय थे । उनके सारे गणधर ब्राह्मण थे । जाति-पॉति के विरोध मे ही जैन धर्म का उदय हुआ है । जैन-धर्म है जाति नहीं । चित्तोड मे आप सकोचवश हमसे नहीं मिल पाये कोई बात नहीं, यह समझो अब हम ही आपके यहॉ तक आ गये है ।'

'यह तो मेरा अहोभाग्य है । आपको आज विद्यालय मे प्रवेश करते देख मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई और सोचा कि आज महाराजश्री से अवश्य धर्मचर्चा करूँगा। आपको देखकर लगा कि ज्ञान गगा आज सावता मे आ गई हे । वे मुस्कराते हुए बोले ।'

'आपके मन मे क्या जिज्ञासा है कहिये ?'

'महाराजश्री । जब मैं जैन सन्तो को नगे पाव कटीले, पथरीले पथो पर चलता देखता हूँ तो सोचता हूँ कि इस युग मे ऐसा त्यागमय जीवन । सच मानो मुझे बडी पीडा होती है, दया भी आती है । आपने यह पथ क्यो चुना, कोई दूसरा भी चुन सकते थे ।'

देखो भाई, जो मार्ग स्वेच्छा से चुना जाता है उसमे काटो की चुभन भी फूलो की कोमलता का अहसास करवाती है । साधना के सभी मार्ग शूलो पर होकर ही जाते हे । हमने बचपन मे ही अन्त प्रेरणा से वीतराग प्रभु का

यह पावन पथ स्वीकारा है। अब तो इस जीवन के इतने अभ्यस्त हो गये है कि किसी भी प्रकार के कष्ट का अहसास नहीं होता है ।

'आप इतने वर्षों से साधना के मार्ग पर चल रहे है, इससे आपने क्या प्राप्त किया है ?'

'शान्ति प्राप्त की है । साधना की सबसे बडी उपलब्धि ही शान्ति है। कर्मो का कर्ज प्रत्येक व्यक्ति पर चढा है । साधक इस कर्ज को उतारने के लिए ही साधना करता है। इस साधना के प्रभाव से न सिर्फ हमे शान्ति मिली है बल्कि जो हमारे सम्पर्क में आता है उसे भी आनद और शान्ति मिलती है ।'

'आपके उपदेश जैन स्थानको मे ही होते हैं, वहॉ अन्य धर्मावलम्बी नहीं पहुँच पाते, इसलिए आपका प्रभाव जैनियो पर ही अधिक होता है ।'

'नहीं, ऐसी बात नहीं है । हमारे विचार सम्पूर्ण मानव समाज के लिए हें। आज यदि यहॉ विद्यार्थी होते तो हम उन्हे भी वीर प्रभु का सन्देश देते । जनी तो हमारी बातें सुनने के अभ्यस्त हो चुके हैं । दूसरे धर्म के लोग यदि हमारी बात सुनते हें तो वे जैनियो से भी ज्यादा प्रभावित होते ह । हमारे पद-विहार का उद्देश्य ही यही है कि ग्राम-ग्राम मे पहुँचकर प्रेम, दया, करुणा एव अहिसा का प्रचार-प्रसार करे । कई ग्राम तो ऐसे आते हे कि वहॉ जैनियो का एक घर भी नहीं होता वहॉ पर भी अनेक धर्मप्रेमी श्रद्धालु हमारे पास आकर धर्मचर्चा एव प्रवचन हेतु निवेदन करते हें ।'

'क्या आप उनको भी अपना प्रवचन सुनाते है ?'

क्यो नहीं। जहॉ श्रद्धा का दीप जलेगा वहॉ ज्ञान की रोशनी तो फैलेगी ही।

'बिल्कुल ठीक कहा आपने । उधर देखिये हमारे साथी मेरी प्रतीक्षा कर रह हें । कल सवेरे मे जल्दी ही आऊँगा । क्या आप कल भी समय दे पायेगे ?'

जसा अवसर होगा ।'

वे भाइ मेरी बात सुनकर श्रद्धा से अभिभूत होकर वन्दना करते हुए जाने लगे । मुझे लगा कि उनके पॉव आगे वढ रहे हें पर मन पीछे छूट गया ह।

❀ ❀ ❀

44 संशय की टूटती दीवार

विद्यालय मे अध्यापको के चले जाने से सन्नाटा छा चुका था । दूर एक छोटे से वृक्ष तले वहॉ का चोकीदार बैठा हुआ समाचार पत्र के पृष्ठो को पलट रहा था । तेज धूप की वजह से बाहर से आने वाले श्रद्धालुओ की स्थिति भी नगण्य थी । पहाडी प्रदेशो मे वर्षाकाल जितना मन मोहक होता हे उतना ग्रीष्मकाल नहीं होता । राजस्थान की स्थिति तो विचित्र ही है । आस पास की छोटी छोटी पहाडियाँ पत्थरो को अपने सीने से चिपकाये बेठी थी । उन पर खडे बडे वृक्ष काट लिए गये थे । चट्टानो पर बिखरती सूरज की किरणे उनको तप्त बना रही थी ।

शान्त एव एकान्त वातावरण को देखकर मन मे विचार आ रहा था कि ऐसे स्थान स्वाध्याय एव लेखन के बहुत अनुकूल होते हे । सभी साध्वियाँ विद्यालय के बरामदे मे बैठकर अपना कार्य कर रही थी । मेरी निगाह सहसा द्वार की ओर उठी तो देखा कि दो बन्धु विद्यालय मे प्रवेश कर रहे हे । उनमे से एक वही सज्जन थे जो एक घण्टे पहले मुझसे वार्तालाप करके अपनी जिज्ञासा शान्त कर रहे थे । उन्होने आकर पुन हम सभी को वन्दन किया । उन्हे देखकर मेने पूछा - क्या अभी तक आप गये नही ?

'हम तो यहॉ से निकल गये थे मगर रास्ते मे हमारा एक मित्र मिल गया। उनके यहॉ शाम को सहभोज का आयोजन हे उनके आग्रह से ठहरना पडा। मने सुना हे आप भी कल यहॉ से विहार कर जायेगे ।'

'हॉ कल तो यहाँ से विहार सभावित है।'

'आपने तो मुझे यह नहीं बताया था । मेरे मन की जिज्ञासा अभी शान्त नहीं हुई । मैं आपसे कल विचार विमर्श करने की भावना लेकर ही निकला था ।'

'हमे रात्रि विश्राम आगे आने वाले ग्राम मे करना है ।'

'सयोग से मै पुन आपकी सेवा मे लौट आया हूँ । महाराज श्री । एक बात बताइये ।'

'हॉ पूछिये ।'

'वेदिक धर्म मे आयी विकृतियो के उन्मूलन के लिए ही जैन एव बौद्ध धर्म का अभ्युदय हुआ मगर इतिहासकार मानते है कि इनके कारण देश का बहुत बडा अहित हुआ । अहिसा और दया के कारण हम परतत्रता की बेडियो मे जकड लिये गये हे ।'

आपकी यह धारणा गलत है । बौद्ध धर्म महावीर के समय अभ्युदय मे आया मगर जेन धर्म का प्रादुर्भाव तो वैदिक काल में ही हो गया था । ऋग्वेद मे भगवान ऋषभदेव का उल्लेख मिलता है । सच पूछा जाय तो जैन धर्म अहिसा आर दया की वात करता है मगर कायरता का यहॉ काम नहीं है । महावीर ने कायरता का परिचय कहीं नहीं दिया । जीवन मे साधना के प्रत्येक क्षेत्र मे वीरता प्रदर्शित करने के कारण ही वे महावीर कहलाये हैं ।

'जन धर्म की अहिसा के कारण भारतीयो ने दूसरो को मारना पाप माना ह इसलिए शत्रुओ का सहार करने मे वे हिचकिचाने लगे, हत्या के भय ने ही इस देश को परतत्र वनाया हे ।'

'आपका यह सोच ही निर्मूल हे कि जन धर्म के कारण यह देश परतत्र वना। जन धम शत्रु कभी नहीं वनाता । यह तो विश्व वन्धुत्व का उद्घोष करता ह ।'

'मित्ति मे सव्व भूएसु वेर मज्झ न केणई' - इस कथन से मेरी बात की पुष्टि होती है । जब सारी दुनिया ही अपनी हो तो फिर शत्रु कोन होगा? जब कोई शत्रु ही नहीं रहा तो फिर परतत्रता कहाँ रही ? तेरे मेरे की भेद रेखा जब तक रहेगी तब तक विश्व मे अशान्ति के बादल छाये रहेगे । व्यक्ति यदि धर्मानुसार आचरण करे तो पराधीनता के बन्धन स्वत ही टूट जायेगे । आप जैन कथा साहित्य पढेगे तो आपका भ्रम दूर हो जायेगा । कई जैन राजाओ ने धर्म का पालन करते हुए युद्ध भूमि मे भी अपनी तलवार का शौर्य दिखाया है ।'

'मैं अब तक दूसरो की सुनी सुनाई बातो पर ही विश्वास करता था । जैन धर्म एव दर्शन का अध्ययन कभी नहीं किया, न ही कभी जेन सन्त-सतियो के श्री चरणो मे बैठने का सोभाग्य मिला आज आपके कारण मेरे मन का सारा सशय दूर हो गया इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ । आपके विचार सुन करके मुझे बडा सन्तोष मिला है । अब मैं भविष्य मे भी आपके दर्शन करके ज्ञान लाभ प्राप्त करने को उपस्थित होऊँगा ।'

अपनी बात पूरी करके वे उठ गये और जाने की इजाजत माँगी तो मँने मुस्कराते हुए कहा - भाई आपने हमारा इतना समय लिया हे तो कुछ सकल्प स्वीकार कीजिए ।

'आप आज्ञा दीजिए मे आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ।'

'आप दूसरो से वह व्यवहार कभी नहीं करे जो आप अपने लिए नही चाहते हैं ।' सप्ताह मे एक घटा मौन स्वाध्याय का सकल्प करे ।'

यह तो आपने मेरे कल्याण की बात कही हे, मे अवश्य आपके पवित्र आदेशो का पालन करूगा । यह कहकर वे आभार प्रकट करते हुए चल दिये ।

❀ ❀ ❀

45

यह कैसी श्रद्धा ?

मेवाड के घर, गली, ढाणी, ग्राम एव कस्बो की ओर यात्रा करते हुए आगे बढते जा रहे थे । श्रद्धालुओ का आवागमन सुदूर ग्रामो मे भी अनवरत बना हुआ था । उस दिन अजमेर एव मद्रास के श्रद्धालु श्रावक पता करते करते हमारे पास पहुँचे । उनके स्वर मे शिकायत के भाव थे कि आप कहाँ आ गये? हम अपने स्वय के वाहनो द्वारा यहाँ आये हैं फिर भी कठिनाई का सामना करना पडा । यह यात्रा बडी ही दुरूह है । हमको इतनी परेशानी हुई है तो आपको न जाने कितनी हुई होगी ? इन छोटे-छोटे ग्रामो मे विचरण करने से क्या लाभ? इस गर्मी को देखते हुए तो आपको किसी अनुकूल शहर मे रहना चाहिए ।

वे जब अपनी बात पूरी कर चुके तब मैंने कहा - हमको तो किसी भी तरह की परेशानी नहीं हुई हैं ।

'क्या बतायें महाराजश्री । हमे तो इधर पीने का स्वच्छ पानी भी नसीब नहीं हुआ ।'

'आप लोगो के खाने-पीने का भी शहरीकरण हो चुका है । बन्द बोतलो का पानी पीने लग गये हो इसलिए परेशानी महसूस करते हो । मेवाड मे पानी की कमी नहीं है ।'

इस ग्राम मे कितने जैन परिवार है ? एक सज्जन बोले ।'

'चार परिवार हैं ।'

'बस चार परिवार ही हे ।'

'हॉ परिवार तो चार ही है मगर उनकी सेवा भावना चार सो परिवारो से कम नही है । शहरो की अपेक्षा धर्मगुरुओ के प्रति ग्रामो मे अधिक श्रद्धा है । जैनो के अलावा दूसरे धर्मावलम्बी भी वही श्रद्धा-भावना प्रकट करते हे जिसे देख कर मन गद्‌गद हो जाता हे । हमारे विचारो को सुनकर के वे तत्काल जीवन की बुराइयो को तिलाजलि देने को तत्पर हो जाते हें । हमे इसके सिवा चाहिए ही क्या ?

'आपका अभिप्राय है कि शहरो मे श्रद्धा भावना का अभाव ह ।'

'मै यह बात नहीं कह रही हूँ बल्कि यह बताना चाहती हूँ कि शहरो मे आज व्यस्तता अधिक है, बुराइयॉ अहर्निश अपने पाव पसार रही ह, उनसे विलग होने की बात बताई जाती है तो सब बहाने बनाकर मोन हो जाते ह । हमारी भावना यही रहती है कि समाज हर क्षेत्र मे प्रगति करे सद्‌सस्कार जाग्रत हों । क्या आज के शहरो मे यह बात दिखाई दे रही हे ? कुछ दिनो पहले का प्रसग है । हम विचरण करते हुए एक कस्बे मे पहुँच गये । श्रावको का आग्रह था कि कुछ दिन यहॉ ठहर कर हमे प्रवचनो का लाभ प्रदान करे । सघ का आग्रह स्वीकार कर प्रवचन का समय निश्चित किया गया मगर यह क्या । प्रवचन मे गिने चुने श्रावक-श्राविकाएँ थे । मेने मत्रीजी से कहा । यह क्या स्थिति है ?

'क्या बतायें महाराजश्री । सघ मे बडी शिथिलता हे ।'

'अध्यक्ष-मत्री का क्या उत्तरदायित्व बनता हे ?'

'अब क्या करे, आप तो जितने आते हे उन्हे ही व्याख्यान का लाभ प्रदान करते रहे ।'

'मात्र पन्द्रह व्यक्तियो में प्रवचन देना यह तो ठीक नही लगता । कोई त्राहर का श्रावक आयेगा तो देख करके हॅसेगा कि इतने बडे शहर मे केवल इतने ही धार्मिक प्रवृत्ति के लोग है। इस स्थिति मे प्रवचन देना क्या उचित रहेगा ?'

वे बोले - क्यो नही महाराजश्री । पन्द्रह क्या पॉच भी श्रोता हो तो आपको प्रवचन देना ही चाहिए । प्रवचन नही देते है तो फिर आपका समाज के लिए क्या उपयोग है ? आप हमारे समाज का खाते हे तो उसके बदले मे आपको कुछ तो करना ही चाहिए ।

उनकी बात मन को चुभने वाली थी । ऐसी कठोर बात सुनकर भी म चुप रही । इस शहर मे नई चेतना जगाने हेतु मैने कुछ विचार रखे एव उन्हे सकल्प लेने को कहा तो उन्हे अपनी भूल का अहसास हुआ एव बोले महाराजश्री । सकल्प तो मे नही लेता मगर मै कोशिश अवश्य करूँगा ।

वे चले गये । मैं विचारो मे डूब गई कि साधु जीवन का उद्देश्य क्या हे ? स्व के साथ परकल्याण मे जीवन को लगाना । समाज के लोग साधुओ से यह कहे कि आप हमारा दिया खाते हे अत हम कहें वह आप करो । यह कसी श्रद्धा हे । हमारे दायित्व का हम निर्वाह कर रहे हें मगर समाज अपने कत्तव्यो से क्यो हट रहा हे ? साधक सिर्फ साधक होता है न कि टेपरिकार्डर या रेडियो जिसे जब चाहो बटन दवाकर शुरु कर दो । श्रोता के विना वक्ता क्या दीवारो को अपनी बात बताये । चलो ऐसा भी कर लेगे तो हमारा तो समय सार्थक हो जायेगा, कर्मनिर्जरा होगी मगर रोटी, कपडा एव मकान सुलभ कराने वाला यह समाज क्या लाभ उठा सकेगा । समाज के मठाधीशो की भावनाएँ कितनी बौनी हो गइ ह । शहर जितने फेलते जा रहे हें उनके विचार उतने ही सकुचित बनते जा रहे ह । प्रत्येक शहरी श्रावक को साधको से लाभ लेने से पूर्व अपने कर्तव्य क्या ह इस पर भी मनन करना होगा । कर्त्तव्यो से विमुख लोगो से मै यह कहना चाहूँगी कि वे जीवन को जाग्रत कर विवेक को वनाये रखे । यह स्वयं उनके एव समाज के लिए आवश्यक ह ।

❀ ❀ ❀

46 समझ का अभाव

सावरिया जी, एक ऐसा स्थान जहाॅ श्री कृष्ण का एक मन्दिर हे । वर्षभर दर्शनार्थियो का आना जाना लगा ही रहता है । सभी धर्मों के लोग यहाॅ पर आते हैं । इस स्थान के सम्बन्ध मे अनेक बाते प्रचलित है । कुछ ही वर्षों मे एक साधारण सा मन्दिर जन जन के आकर्षण का केन्द्र बन गया । यात्रियो की सुविधा के लिए सडक, धर्मशालाए सब कुछ बन गये । राजस्थान के धनाढ्य मन्दिरो मे इसकी गिनती होने लगी है । मन्दिर मे गुप्तदान बहुत होता हे । एक सज्जन बता रहे थे कि इस क्षेत्र मे अफीम की खेती होती हे । राज्य सरकार अफीम ˆ खेती के लिए स्वीकृति पत्र प्रदान करती हे । चाहे अफीम पेदा हो या न ो पत्र धारक को निश्चित मात्रा मे अफीम लेवी के रूप मे राज्य सरकार को दे ˆ ही पडती है । लेवी के पश्चात् शेष बची अफीम को उत्पादक तस्करो के हाथ बेच देते हैं । तस्कर उस अफीम को राज्य से बाहर चोरी छिपे भिजवाते रहते है, जिसके कारण उन्हे लाखो रुपयो का लाभ मिल जाता हे । अपनी आमदनी का एक हिस्सा वे मन्दिर की दान पेटी मे चुपचाप डाल देते ह । मन्दिर की दान पेटी मे से प्रतिवर्ष लाखो रुपये निकलते हे । यह रुपया मन्दिर के विकास पर खर्च हो रहा हे । आजकल इस राशि का उपयोग शिक्षा एव चिकित्सा मे भी होने लगा है ।

मेवाड विचरण का एक पडाव सावरिया जी मे भी था । श्रद्धालुओं की सख्या भी बहुत थी । व्याख्यान चल रहा था । श्रोता ध्यानमग्न होकर व्याख्यान

का लाभ ले रहे थे । अपने व्याख्यान को रोककर मैने एक श्रावकजी से पूछ लिया कि नमस्कार महामत्र के पाँच पदो मे से जीव कितने है और अजीव कितने है । वे सज्जन कुछ क्षण चुप रहने के पश्चात् बोले - महाराजश्री । नमस्कार महामत्र के पाँच पदो मे एक अजीव है ।

'कौन सा पद अजीव से सम्बन्धित है ।'

'सिद्ध अजीव होते हैं ।'

'कैसे ?'

'क्योकि सिद्ध होने पर उनके सभी कर्म समाप्त हो जाते हैं ।'

'आपको विश्वास है कि सिद्ध होने पर वे अजीव हो जाते हैं ।'

मेरी बात सुनकर वे मौन हो गये । उस चुप्पी को आखिर मैंने ही तोडते हुए कहा - आप स्वाध्याय नहीं करते इसीलिए सिद्ध को अजीव ठहरा रहे थे। नमस्कार महामत्र मे कोई भी पद अजीव नहीं ह यह तो त्रिकाल सत्य है कि न तो जीव कभी अजीव बनता हे और न ही अजीव कभी जीव बन सकता ह । स्वय त्रिकालज्ञ तीर्थंकर अनन्त केवल ज्ञानी भी इस कार्य को कर पाने मे असमर्थ हें ।

प्रवचन पूरा हो गया था । सभी श्रद्धालु श्रावक अपने अपने घरो को लाट चुके थे । मुझे रह रहकर विचार आ रहा था कि श्रावक सुनते तो ह मगर समझ का अभाव हे । इन्हे यह भी ज्ञान नहीं हे कि सिद्ध जीव हे या अजीव। इनमे जिज्ञासा का अभाव ह ये स्वाध्याय से जी चुराते हें । तन से भले ही व्याख्यान स्थल पर आकर अपनी उपस्थिति दर्ज करा देते ह मगर मन इनका कहीं ओर ही होता हे तभी तो ये सुनकर भी सुन नहीं पाते हें । सिद्धो के मन, वचन व काया का योग नहीं ह पर जीव का लक्षण ह - उनका चेतना भाव तो सिद्धावस्था मे भी रहता ह अत वे भी जीव ह, यदि कर्म के दूर होते ही जीव अजीव बनने लगे तो फिर ससार का स्वरूप ही कुछ आर बन जायेगा ।

अब नक छोटे सती जी गोचरी लेकर आ गये थे । साथ बेठकर आहार ग्रहण किया मै अपने आसन पर पुन आकर बैठ गई । स्वाध्याय के लिए पुस्तक खोली ही थी कि कुछ श्रद्धालु आ गये । वन्दना करके सामने बेठ गये। उनमें से एक ने कहा- महाराज श्री ! आप स्वाध्याय की बात तो कहते हें मगर हमारे पास इतना समय कहॉ हे कि धार्मिक पुस्तको को खोलकर बेठ जायॅ । कई बार कोशिश भी करते हें कि धर्म दर्शन के गूढ तत्वो को पढे मगर विषय इतना गूढ होता है कि हमारे कुछ भी पल्ले ही नहीं पडता ।

मैंने कहा - जो बात आप समझ नहीं पाये उसे एक कागज पर लिख ले, समय आने पर किसी स्वाध्यायी श्रावक या सन्त सतियो के समक्ष अपनी जिज्ञासा रखकर बात का समाधान कर सकते ह । इस युग मे तो पुस्तको का अभाव नहीं रहा है । पहले तो सारे ग्रन्थ हाथ से लिखे होते थे । सन्तगण उन हस्त प्रतिलिपियो की बडी सुरक्षा करते थे । जब से छापेखाने मे क्रान्ति हुई ह धर्म और दर्शन की पुस्तके जन सामान्य की पहुॅच से दूर नहीं रही । समय का जहॉ तक प्रश्न है, मैं सोचती हूॅ कि इसके अभाव की बात करना स्वय को धोखा देना है । प्रतिदिन नियमित एक-दो सामायिक कीजिए ओर इस समय का उपयोग । साधना के साथ-साथ स्वाध्याय मे भी कर सकते हे । समय तो निकालने निकलता है ।

'आप ठीक ही फरमा रहे हैं, आज से हम नियमित स्वाध्याय के लिए समय निकालेगे ।'

मुझे लगा कि सावरिया जी मे दिया प्रवचन श्रावको के जीवन को सवारने वाला सिद्ध हुआ है । हमारा यहॉ का पडाव सार्थक हो गया हे ।

❀ ❀ ❀

47 जन जागरण
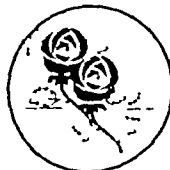
प्रात सावरिया जी से विहार करके आगे की यात्रा के लिए प्रस्थान करना था । प्राची की ओर दृष्टि गई तो देखा कि सूर्य की रश्मियॉ आकाश से उतर कर मन्दिर के कलश पर बिखर रही थी । मन्दिर का स्वर्णिम शिखर सूर्य की रोशनी मे चमक रहा था । हम सब आगे बढ गये । तारकोल की काली सर्पिली सडक पर वाहन तेजी से आ जा रहे थे । रास्ते मे कुछ स्त्री-पुरुष पैदल कुछ ट्रेक्टर आर साइकिलो पर बेठे हुए जा रहे थे । ट्रेक्टरो मे बैठी हुई ग्रामीण महिलाऍ गीत गाती जा रही थी । स्त्री-पुरुषो ने नये रगीन वस्त्र धारण कर रखे थे । सावरिया जी से ही कुछ श्रद्धालु हमे आगे आने वाले ग्राम तक छोडने के लिए साथ-साथ चल रहे थे । तीन-चार किलोमीटर चलने के पश्चात् एक सघन वृक्ष को दखकर कुछ पल विश्राम का मानस बनाकर ठहर गये । पास ही एक दूसरे वृक्ष के नीचे विश्राम हेतु कुछ साइकिल सवार भी आकर ठहर गये । उन्होने हमारे पास आकर वन्दना की आर बोले - आप कहाँ पधारेगे ?

आज दस-पन्द्रह किलोमीटर चलने का विचार ह । जो भी उपयुक्त ग्राम मिलेगा वही ठहर जायेगे । आप लोग कहॉ जा रहे ह ? मैंने पूछा ।

आज पास ही एक ग्राम मे गगामाइ की प्रसादी ह ।'

'क्या ये सब लोग उधर ही जा रहे ह ?'

[illegible] चारो को न्योता दिया गया ह ।'

'क्या कोई यात्रा करके आये हैं ?'

'हमारे एक रिश्तेदार हे, उनकी मृत्यु हो गई, उनके परिजन हरिद्वार जाकर आये हैं ।'

'यह तो मृत्युभोज हो गया ।'

'हॉ, है तो मृत्युभोज ही, मगर अव मृत्युभोज पर सरकार की पावन्दी है इसलिए इसका नाम गगामाई की प्रसादी रखा गया हे ।'

वह अपनी बात कह ही रहा था कि एक ट्रेक्टर फिर वहॉ से निकल गया। उन्हे देखकर वह व्यक्ति बोला - हमारे ग्राम के लोग जा रहे हैं । हम भी चलेगे, वह मुस्कराता हुआ अपने साथियो सहित साइकिल पर सवार हो गया। मैं उसे जाते हुए देखती रह गई ।

हमने भी विश्राम कर लिया था, पुन. आगे बढ गये लेकिन मन इस सामाजिक कुप्रथा के कारण बेचैन था । इस सामाजिक कुरीति को मिटाने के लिए शासन नियम बनाता है मगर लोग कानून को अगूठा दिखाकर अपना उल्लू सीधा कर लेते हैं । इस परम्परा के कारण निम्न एव मध्यम वर्ग के लोग तबाह हो रहे हैं । महगाई के कारण दो समय का पेट भरना मुश्किल हो गया हे । ऐसे समय मे घर मे किसी बडे बूढे का अवसान होना कितना पीडादायक हे। मृत्युभोज की पुरानी प्रथा आज नये नये नाम धर कर समाज मे घुन का काम कर रही है । समाज का प्रत्येक वर्ग चाहे अनचाहे इस प्रथा का निर्वाह कर रहा है । कहीं यह गगामाई की प्रसादी है, कहीं केशरिया नाथ जी की थाली, कहीं शोक मिलन तो कही माता-पिता की अतिम इच्छा बनकर व्याप्त हे ।

सत एव सामाजिक कार्यकर्ता इस प्रथा का अन्त करने का अहर्निश प्रयत्न करते रहते है । सन्त अपने उपदेशो के माध्यम से समाज को उद्बोधन देते ह। इतना सब कुछ होने के पश्चात् भी यह कुप्रथा चोला बदलकर समाज के विकास मे बाधक बनकर खडी हे । हम अगले ग्राम मे पहुँच गये थे । मृत्युभोज की वात मेरे अन्तर्मन में शूल की तरह चुभ रही थी । हमारे वहॉ पहुॅचने पर ग्राम

के कई श्रद्धालु आ गये । मैंने अपनी पीडा उन्हे बताई तो एक सज्जन ने कहा- महाराजश्री । इस समाज मे भजन प्रेमी और भोजन प्रेमी दोनो ही है । भोजन प्रेमी का मानना है कि जो दिवगत हो गया है उसकी अर्थी को कधा देना चाहिए ताकि बारह दिन पश्चात् सुस्वादु भोजन प्राप्त होगा । यदि यह पता चल जाये कि मरने वाले के पश्चात् उसका मृत्युभोज नहीं होगा तो अर्थी उठाने वाले तो दूर स्पर्श करने वाले भी दिखाई नहीं देगे ।

वे जब अपनी बात पूरी कर चुके तब मैंने कहा - भाई । युग के साथ समाज मे परिवर्तन आवश्यक है । विचार बदलने पर ही विश्वास बदलता ह । स्वार्थी लोग तो ससार में सदैव विद्यमान रहते हैं । बारह दिन तक बीडी, तमाखू, सिगरेट पीकर एव अन्तिम दिन मधुर मिष्ठान्न युक्त भोजन करके वे मृत आत्मा को कैसी शान्ति प्रदान करना चाहते हें । समाज को भोजन पर निमत्रण देने के अनेक अवसर ह, मृत्यु के अवसर पर ऐसे आयोजन समाज को खोखला एव परम्परावादी बनाये रखते ह । स्वार्थी लोगो से समाज का कभी भी भला नहीं हो सकता । समाज का उच्च वर्ग ऐसी प्रथाओ को त्याग चुका ह मगर मध्यम वर्ग आज भी किकर्त्तव्यविमूढ बनकर देख रहा हे । आर्थिक रूप से उन्नत बनने के लिए जन जागरण करके इस कुप्रथा का अन्त करना होगा। जो प्रथाए समाज को पगु बनाये उन्हे एक ही झटके मे तोडना होगा । इस हेतु आवश्यक ह कि शिक्षित वर्ग ऐसे आयोजनो का वहिष्कार करे, तभी सामाजिक क्रान्ति सम्भव ह ।

48 सम्प्रदायवाद का जहर
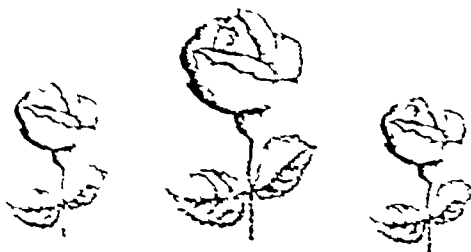
राजस्थान से बाहर चातुर्मास का इस बार पहला ही अनुभव था । हम अनेक ग्राम-कस्बो मे धर्म प्रभावना करते हुए बढ रहे थे । इन क्षेत्रो मे बाह्य रूप से सास्कृतिक एकता के दर्शन होते थे मगर मानसिक विकृति भी कहीं-कहीं दिखाई दे जाती थी। दीपक जलते हैं तो पतगे आ ही जाते हें, पथ पर चलते हैं तो शूल चुभ ही जाते हैं । नये क्षेत्रो के अनुभव भी नये ही थे ।

सम्प्रदायवाद एक ऐसा विष है जो धर्म एव समाज को नष्ट कर देता है । अब तक सम्प्रदायवाद का नाम ही सुना था मगर उससे साक्षात्कार नहीं हो पाया । वर्षों तक गुरुजनो के सान्निध्य मे रहते हुए तथा बाद मे कोसो दूर परिचित क्षेत्र मे श्रावक श्राविकाओ के मध्य विचरण करते रहने से सम्प्रदायवाद का अहसास नहीं हो पाया । मेवाड से निकलकर मालवा की भूमि पर पाँव धरा तो जाना कि सम्प्रदायवाद का विष कितना घातक होता हे ।

नदी के जल से गाय भी अपनी तृषा शान्त करती है तो हिसक शेर भी इसके शीतल नीर को पीकर प्रसन्न होता है । साधु-साध्वी का जीवन नदी के निर्मल नीर की तरह ही होता है वे भले और बुरे सभी के जीवन को धर्ममय बनाने की भावना लेकर आगे बढते हैं । हम भी यही भाव लिए एक ग्राम मे पहुँच गये थे। अनजान ग्राम के अनजान लोग । ग्राम मे प्रवेश करने के उपरान्त एक अनुकूल स्थान देखकर विश्राम का निर्णय ले लिया था । अजेन भाइयो ने जब हमारे ठहरने की व्यवस्था कर दी तब मैंने पूछ लिया - क्या इस ग्राम मे कोई जेनी भाई नही रहता है ।

'क्यो नही महाराजश्री । यहाँ तीन-चार जेन परिवार रहते हे मगर उनका सम्प्रदाय भिन्न हे ।'

'सम्प्रदाय भिन्न है, क्या मतलब ?'

'वे धर्म तो आपका ही मानते हें, मगर सम्प्रदाय दूसरे सन्तो का मानने के कारण आपसे किसी भी प्रकार का सम्पर्क नही रखना चाहते ।'

'क्या वे सज्जन यहीं पर ह ?'

'नही, खेतो की ओर जाते हुए दिखाई दिये थे ।'

'खैर इधर आये तो कहना कि महाराजश्री आपके लिए पूछ रहे थे ।' वह भाई चला गया । मैं विचारो मे खो गई । हमारे पूर्वजो ने सम्प्रदाय को व्यवस्था के लिए स्वीकार किया था । अच्छाई के लिए स्वीकृत सम्प्रदाय आज धर्म के लिए ही समस्या बन गया है । सम्प्रदाय से जुडा वाद घातक विष बन गया है जो पीये बिना ही समाज को मार रहा है ।

इस ससार में जब जब भी धार्मिक उन्माद भडके तो खून की नदियाँ बह गई मगर एक ही धर्म मे सम्प्रदाय का यह घातक विष आज उसी धर्म एव समाज को नष्ट करने पर तुला है । आज समाज मे सम्प्रदायवाद का सिर उठाने वाली ताकते पनपती जा रही है । वाद ने ही विवाद का रूप ले लिया ह । कुछ ने अपने प्रभाव से वाद को सम्मानपूर्वक आमत्रित किया ताकि वे क्षेत्र के शहशाह बन सके । भक्तो की भीड उन्हीं के इर्द गिर्द घूमती रहे । गुरु के शिष्यो ने भी उसी राह पर अपने कदम बढाते हुए अपनी-अपनी ढपली अपना अपना राग निकालना शुरु कर दिया जिसका प्रतिफल आज धर्म एव समाज को भुगतना पड रहा हे ।

मुझे गुरुदेवश्री का स्मरण हो रहा था । वे एक बार धर्मसभा मे कह रहे थे कि खेत के प्रत्येक भाग को खाद एव जल उचित रूप से मिल सके इस हेतु क्यारियो का निर्माण आवश्यक है ठीक उसी प्रकार प्रत्येक क्षेत्र के प्रत्येक भाई-बहिन को धर्म प्रेरणा नियमित मिल सके इसके लिए सम्प्रदाय की भावना सुसगत हे । यही भावना आगे जाकर वाद का रूप ले लेगी, ऐसा हमारे पूवजो ने कभी नही सोचा होगा ।

इस सम्प्रदायवाद ने धर्म और समाज को मजबूत बनाने के बजाय कमजोर एव खोखला बना दिया हे । विश्व के सभी धर्मों की आज यही स्थिति है । सन्त-मनस्वी इस घातक विष को दूर करना चाहते हैं मगर किसी का वस नहीं चल रहा हे । सम्प्रदायवाद की भावना को पल्लवित करके हम मनुष्य जीवन मे धामिक भावनाओ की सुनियोजित हत्या कर रहे हैं । यह एक ऐसा पाप ह, जिसे करते हुए भी मानव को अपराध बोध नहीं हो रहा है । पाप तो पाप होता ह, वह पुण्य का स्थान कभी भी नहीं ले सकता । मानव का उद्देश्य जोडना होना चाहिए । समाज टूटेगा तो उसका प्रभाव धर्म पर भी पडेगा और धर्म का रूप विकृत हो जायेगा । जहर चाहे स्वर्ण पात्र मे भरा हो मगर उसका प्रभाव तो मारक शक्ति के रूप मे ही रहेगा । यही स्थिति सम्प्रदायवाद की है । वाद के इस घातक विष को जितना जल्दी हम समाप्त करेंगे उतना ही यह धर्म और समाज के लिए उचित होगा । लोगो के अन्तर्मन मे भरे इस जहर को जितना जल्दी निकाल सके निकालने का प्रयास करना चाहिए तभी हम सच्चे धार्मिक कहलायेंगे ।

49 पुण्य की जयकार

प्रवचन का समय हो रहा था । श्रावक एव श्राविकाऍ रग-बिरगे वस्त्र पहने स्थानक के प्रवचन भवन मे प्रवेश कर रहे थे । प्रवचन का यह कक्ष काफी बडा था, उसकी दीवारो पर ठीक सामने आकर्षक रगो मे नवकार मत्र लिखा हुआ था । दाये बायें दीवारो पर तीर्थकरो एव गणधरो के नाम लिखे हुए थे। प्रवचन कक्ष की फर्श पर श्वेत श्याम सगमरमर की टाइले जडी हुई थी । प्रवचन कक्ष मे प्रवेश करने वालो मे बुजुर्ग व्यक्तियो का आगमन पहले हुआ । वे अपने साथ सामायिक के उपकरण भी लेकर आये थे । वे आसन बिछाकर के अपना स्थान ग्रहण कर रहे थे । उनके पश्चात् श्राविकाऍ, पदाधिकारी, कुछ युवा आकर बैठ रहे थे । आने वालो का क्रम जारी था ।

दीवार पर लगी घडी की सुई नो बजने का सकेत दे रही थी । प्रवचन का समय होने वाला था । मैं अपने स्थान पर चुपचाप बेठे-बेठे एक धार्मिक ग्रन्थ का अवलोकन करती रही । छोटे सतीजी प्रवचन कक्ष के तख्ते पर बेठकर प्रवचन प्रारभ करने हेतु मगलाचरण शुरु कर चुके थे । उस नव्य-भव्य भवन में श्रोताओ के लिए बिछाई गई दरी अभी तक आधी से अधिक खाली पडी थी । महिलाओ की सख्या पुरुषो से अधिक हो चुकी थी । कुछ श्रावक-श्राविकाओ के मुख पर मुखवस्त्रिका लगी थी तो कुछ खुले मुख ही बेठे हुए थे । मन मे बार-बार विचार उठ रहा था कि प्रवचन मे आज कोन-कोन आये ह ? एक

दृष्टि डालकर देखा तो लगा कुछ सघ के पदाधिकारी है, कुछ यह सोचकर आये थे कि महाराजश्री अपने को पहचानते हैं ? नहीं जायेगे तो क्या सोचेगे ? कुछ शायद इसलिए आये थे कि पन्नालाल जी महाराज की साध्वियाँ ह, पहली बार यहाँ आई है, ज्ञान, ध्यान, प्रवचन कैसा है ? तो कुछ धर्म श्रद्धा से वहाँ पर आये थे ।

छोटे महाराज आधा घण्टे तक प्रवचन करते हैं, उनका समय हो रहा था । अन्य साध्वीजी के साथ मैं तख्ते की ओर बढ गई सभी ने खडे होकर सम्मान दिया । अब मेरी बारी थी । ससार की विचित्र स्थिति, समभाव का महत्त्व एव प्राप्ति के लिए साधको की बात करते हुए कहा -

सुयणो न कुप्पइ, अह कुप्पइ विप्पियं न चिन्तेइ ।
अह चिन्तेइ न जम्पइ, अह जम्पइ लज्जिओ भवइ ॥

अर्थात् सज्जन कभी क्रोध नहीं करता है, यदि कभी क्रोध आ भी जाए तो किसी का बुरा नहीं सोचता है । यदि कभी काई बुरा विचार आ जाए तो भी मुह से उसे प्रकट नहीं करता है और यदि कभी असावधानी से मुँह से ऐसे शब्द निकल भी जाये तो वह लज्जित होकर सिर झुका लेता है । यह स्थिति ससार मे सज्जन की होती है ।

सज्जन एव दुर्जन मे बहुत अधिक भिन्नता होती है, एक का दृष्टिकोण सद्गुण चयन का होता हे, वहीं दूसरा दुर्गुण खोजता है । एक गुण ग्रहण करके जीवन को गुणयुक्त बनाता हे वहीं दूसरा गुणहीन बनता जाता है । सच्चा श्रावक सदव गुण ही ग्रहण करने का लक्ष्य रखता है । इसी बात पर एक घण्टे तक अपने विचार प्रकट कर मगल पाठ सुनाया । प्रवचन सुनकर सभी प्रमुदित थे। एक श्रद्धालु भाई ने खडे खडे भगवान महावीर स्वामी की जय, पूज्य प्रवर्तक पन्नालाल जी महाराज की जय, आचार्य श्री सोहनलाल जी म सा की जय के साथ पूज्य सन्तो के जयकारे लगाये । श्रावको ने जय बोलकर उक्त सज्जन का साथ दिया । श्रावक अपने अपने घरो को लौट चुके थे । छोटे साध्वीजी गोचरी हेतु निकल गये । मै कक्ष मे आकर वहाँ रखी एक धार्मिक पत्रिका को देखने लगी ।

गोचरी आ चुकी थी हमने आहार ग्रहण किया ओर अपने स्वाध्याय मे लग गये । एक सज्जन ने स्थानक भवन मे प्रवेश करके हमे वन्दना की ओर पास बैठकर बोले महाराजश्री । आपके प्रवचन की सभी श्रोताओ ने बहुत प्रशसा की है । शास्त्र सम्मत आपकी वाते मन को छूने वाली है ।

'यह सब गुरु कृपा का प्रसाद हे ।' मैंने कहा ।

'लेकिन एक बात सबको बुरी लगी हे। एक भाई का मेरे पास फोन भी आया है।'

'बुरी बात तो हमारे मुँह से कभी भी नहीं निकलनी चाहिए । कहिए ऐसी कौनसी बात है जो उन सज्जन को बुरी लगी हे ?'

'महाराज श्री । आपकी ओर से नहीं निकली थी, जिस भाई ने जयनाद लगाया उसने सभी की जयकार लगाई मगर हमारे इधर के आचार्यश्री की जय नहीं बुलाई थी । उस भाई ने फोन पर कहा है कि हमारे स्थानक मे हमारे गुरुदेव का जयनाद न होना बुरी बात है । फिर कभी ऐसी भूल न होने पाये । मने कह दिया है कि कल यह भूल नहीं होगी ।'

इधर उधर की बाते करके वे चले गये । मैं पुन सोचने लगी क्या श्रावको का ध्यान प्रवचन पर केन्द्रित था या यह देखने आये थे कि यहा किसकी जयकार होती है । हमारे जय जयकार करने से क्या ? महापुरुष तो अपने स्वय के पुरुषार्थ एव पुण्य से जय प्राप्त कर चुके हैं । हमारे बोलने एव न बोलने से जेन धर्म, जैन शासन, प्रभु महावीर, दिव्य सन्तो के जीवन पर क्या फर्क पडता हे । हम लोग आज भी धर्म का बाह्य कलेवर लेकर घूम रहे है । समता, समभाव, सज्जन, दुर्जन के बारे मे दिया प्रवचन कितने लोगो के हृदय मे उतरा होगा । इस ससार में समता कम ओर विषमता ने अपने पाव अधिक पसार रखे हे । हमारा प्रयास तो समता भाव बढाने का है ओर सदैव रहेगा।

❀ ❀ ❀

50 कम सामान - सफर आसान

सूर्योदय होते ही विहार हो गया था । सभी साध्विया एक के पीछे एक चल रही थी । जिस ग्राम मे रात्रि का पडाव था वहीं के दो तीन भाई-बहिन हमे अगले पडाव तक पहुँचाने हेतु साथ-साथ चल रहे थे ।

आगे आने वाले ग्राम के श्रद्धालुओ को हमारे विहार का समाचार मालूम हो चुका था वे भी रास्ते मे ही मिल गये । यात्रा अनवरत चल रही थी । हमारे साथ चलने वालो को हमसे यह शिकायत हो रही थी कि आप वहुत तेज चलते ह । उनकी वात सुनकर मै मुस्कराकर बोली - हमारा तो यह सतत चलने वाला कायक्रम ह, यदि गति धीमी रहेगी तो समय कितना व्यर्थ चला जायेगा । हम सवके कधो पर तो कुछ वजन भी हे । आप के हाथ तो खाली है, गति बटाइये । धूप तेज होने पर चलना मुश्किल हो जायेगा । अव वे सहयात्री भी तज कदमो से चलने लगे ।

अगले पडाव तक पहुँचने मे अभी बहुत दूरी थी । सहयात्री पसीने से तर हो उठे थे । एक सघन वृक्ष के नीचे पहुँचकर कुछ पल विश्राम करने का विचार किया । कुछ दूर चलने पर एक नीम का वृक्ष आ गया । उसके नीचे ही एक अन्य पथिक विश्राम कर रहा था । हमारे पहुँचते ही वह खडा होकर वन्दना करने लगा । उसका परिचय प्राप्त करने के पश्चात् पूछा - यहाँ कसे बैठे हो ?

वह बोला - मुझे आगे जाना हे । सोचा था पैदल ही एक घण्टे मे पहुँच जाऊँगा मगर सामान का बोझ अधिक हो गया । मेरी तो पीठ ही दुखने लग गई है ।

'इतना क्या सामान हे ?'

'बस यही खाने-पीने, ओढने बिछाने के एव पहनने के कपडे हें । इधर कोई बस भी तो नहीं आती, क्या करूँ ?'

'अरे भाई । इतना सामान पीठ पर ढो रहे हो । बस भी अगर होती तो उसमे भी चढाने उतारने मे कितनी परेशानी होती । अनावश्यक सामान को सफर मे ले जाने से बचना चाहिए । कहा भी गया है - कम सामान - सफर आसान ।'

'मैं तो इतना सामान नहीं लाना चाहता था मगर घरवालो ने कहा कि बाहर का मामला है ले जाओ । क्या करू लेकर तो चल दिया मगर अब तो स्थिति आप देख ही रहे हैं । एक घण्टे का सफर दो घण्टे मे पूरा होगा । एक मन तो करता है कि वापिस घर चला जाऊँ ।'

हमारे साथ चल रहे एक भाई ने कहा - कुछ मुझे दे दो, में ले चलता हूँ उसने मना कर दिया कि आप तकलीफ न करे । मे ले चलूगा ।

मैं कुछ क्षण विश्राम करके उठ गई । मेरे साथ अन्य साध्वीजी एव सहयात्री भी उठ गये । यात्रा पुन शुरु हो गई । वह पथिक भी सिर, पीठ एव कधे पर सामान रखकर चल पडा । वह शनै.शनै. हमसे बहुत पीछे छूट चुका था।

मैं चलते चलते सोच रही थी कि लोग अनावश्यक बोझ लेकर क्यों चलते हें । बोझ आखिर बोझ होता हे । क्षमता से अधिक बोझा उठाने वाला अपने लक्ष्य पर पहुँचने से पहले ही डगमगाने लगता हे । घबराकर कुछ तो बोझे को फेक कर किकर्तव्यविमूढ बन खडे हो जाते हैं । आज इस ससार में पशु ही नहीं मनुष्य भी बोझा उठा रहे है । यदि केवल सामान का बोझा ही होता तो उसे कम किया जा सकता हे मगर आज कल मानव कभी स्वय दूसरो

के लिए बोझा बन जाता है । कुछ अपने जीवन को ही बोझ समझकर ढोते रहते हैं । उन्हे मानव भव अच्छा नहीं लगता, बार-बार भगवान से प्रार्थना करते हैं कि वह उसे उठा ले तो अच्छा है ।

सामान का वजन तो विश्राम के समय उतारा भी जा सकता है मगर जिसके मन मे दुर्भावना का बोझ है, राग, द्वेष, ईर्ष्या व क्रोध का सामान लादे चल रहा है उसकी क्या दशा होगी ? उसे उसकी मजिल कभी नहीं मिल सकती। जब तक वह पापो की गठरी का बोझ उठाकर चलेगा हर बार उसका लक्ष्य उससे दूर हट जायेगा । लक्ष्य तक पहुँचने के लिए हमे अपने मन को हलका करना होगा । उसको निर्मल बनाना होगा । तपाग्नि मे तपकर सोना कचन बन जाता हे वही स्थिति इस मन की करनी होगी तभी आत्मा पर से कर्मों का वजन कम होगा । हमारी यात्रा कम सामान होने से निर्विघ्न समाप्त होगी ।

जब हम भगवान की सस्वर प्रार्थना करते हैं तो अन्त मे कुछ क्षण मौन धारण करके मन ही मन परमपिता परमात्मा के गुण स्मरण करते हैं । महान् सन्त मनीषियो ने तो मौन प्रार्थना पर ही अधिक ध्यान दिया है । विचारक ने कहा ह कि मोन प्रार्थनाएँ बहुत जल्दी पहुचती हे परमात्मा के पास, क्योकि वे होती ह सदेव शब्दो के वजन से मुक्त । सचमुच प्रार्थना मे भी यदि शब्द नहीं ह, मात्र भगवान का अन्तर्मन से ध्यान है तो हमारी प्रत्येक कामना स्वत पूर्ण होती जायेगी, आत्मा ही तो परमात्मा का बिम्ब हे, वह दिखाई नहीं देता मगर आभासित होता ह । परमात्मा से कोई चीज छुपी हुई नहीं है । आत्मा पर जमा कमो के मेल का सामान इसी ससार मे उतारकर फेक दो परमात्मा से मिलन हो जायेगा । जो महामानव अरिहन्त एव सिद्धो की श्रेणी तक पहुँचे ह उन्होने होश सभालते ही कर्मो की निर्जरा शुरु कर दी । वे पाप ओर पुण्य दोनो के ही बोझ से मुक्त होकर हलके हो गये । उनको अपनी मजिल मिल गई । वर्तमान युग मे ज्ञान के अभाव से लोग कमो का सामान लादे लक्ष्य की ओर बढने का प्रयास कर रहे ह, उन्हे अपना विवेक जाग्रत कर सोचना चाहिए कि कम सामान से सफर आसान होता ह ।

❀ ❀ ❀

51 स्नेह का निर्झर

साझ ढल चुकी थी । सभी प्रतिक्रमण हेतु आसन बिछाकर करवद्ध होकर बैठ गये । अनेक माताएँ एव बहिने भी स्थानक के कक्ष मे बेठकर प्रतिक्रमण कर रही थी । कुछ बालिकाएँ चुपचाप बैठी हमारी ओर देख रही थी । उनमे से कुछ वातावरण के प्रभाव से मौन प्रार्थना करने लगी ।

प्रतिक्रमण की समाप्ति के पश्चात् प्रतिदिन की भाति आज भी म कण्ठस्थ किए आगम के स्वाध्याय मे लग गई । किसी सूत्र या पद को स्मरण रखने हेतु उनकी पुनरावृत्ति आवश्यक है । दोहरान के अभाव मे किसी भी सूत्र को विस्मृत होते देर नहीं लगती । उन्हें हर समय स्मृति पटल पर स्थिर रखने के लिए दोहराना आवश्यक है । इस सम्बन्ध मे कभी कभी आचार्य गुरुदेव श्री सोहनलाल जी महाराज सा की एक पहेली मेरे स्मृति पटल पर उभर आती है । गुरुदेवश्री राजस्थानी भाषा की एक पद्यबद्ध पहेली पूछा करते कि इसका उत्तर क्या होगा ? पहली थी -

पान सड़े घोड़ा अड़े, विद्या बिसर जाय ।
झगरा म्हें बाटी बलै, कहो चेला किण न्याय ॥

पहली बार सुनी इस पहेली का उत्तर आखिर गुरुवर ने ही बताया था कि- इसका उत्तर है फेरी नही । पान, घोडा, विद्या एव आग पर रखी बाटी को घुमाते रहो वरना सब बेकार हो जायेगे । यही सोचकर म सूत्रो का दोहरान करने लगी । यह कार्य एक ओर जहाँ समय की सार्थकता का उपाय हे वहीं स्वाध्याय कर्म निर्जरा का हेतु भी है ।

एक घण्टे भर मेरा यह कार्यक्रम चलता रहा । अब तक कुछ और बालिकाएँ भी आकर मेरे पास बैठ गई थी । कुछ समय तक आपस मे धर्म चर्चा चलती रही । एक बालिका आज प्रथम बार ही यहाँ आई थी । परिचयात्मक वार्ता के दारान पता चला कि वह अपने ननिहाल मे रहकर अध्ययन कर रही है । मनुष्य के जीवन पर वातावरण का प्रभाव अवश्य पडता है । बात ही बात मे वह बोली- महाराजश्री मैं तो अपने पिताजी जिनको पापा कहती हूँ उनसे सर्वाधिक प्रभावित हूँ । मुझे अपने पापाजी का जीवन प्रेरणा प्रदान करता है । उन्होने जीवन मे कितना सघर्ष किया, घर-परिवार मे आने वाली कठिनाइयो का हँसते हँसते सामना किया । किसी ने उनके प्रति बुरा सोचा ओर व्यवहार भी किया तो वे सदैव शान्त रहकर कह देते - सब ठीक हो जायेगा । उन्होने अनौपचारिक शिक्षा प्राप्त कर सरकारी सेवा मे स्थान पाया । मकान बनाया, परिवार बसाया । परिवार की जिम्मेदारियाँ पूरी की और आज भी कर रहे हैं । हमे वे सब साधन सुविधाएँ दे रहे हें, जो उन्होने हमारी उम्र तक पाना तो दूर उसके लिए सोचा भी नहीं था । में तो प्रतिपल यह सोचती हूँ कि मुझे सदैव वही कार्य करना है जिससे पापा को शान्ति पाप्त हो । मेरे कार्यो से पापा को आनन्द मिले यही मेरे जीवन का सबसे बडा सुख-सन्तोष है । मैं आज भी उनकी अनिच्छा पर कोई कार्य नहीं करती हूँ । उनके अनुभव सुन-सुनकर ही मैं नव उत्साह एव प्रेरणा प्राप्त करती हूँ । यहाँ उच्च अध्ययन की सुविधा नहीं होने के कारण मुझे बाहर रहना पडता ह मगर में हृदय से अपने पापा को सदैव स्मरण करती रहती हूँ । वे भी सदव मुझे पेरणा देते रहते हैं ।

उस बाला की बातो ने मुझे ही नही वहाँ वेठे सभी को वडा पभावित किया । में मन ही मन सोच रही थी कि इस भातिक चकाचोंध वाले युग मे ऐसी सन्तान भी हे, जो अपने माता-पिता की खुशी को ही अपनी खुशी मानती ह । उसे देखते हुए मेरे स्मृति पटल पर कुछ दिनो पूर्व एक दनिक समाचार पत्र मे पकाशित एक व्यग्य आलेख उभर आया जिसमे लेखक ने सामाजिक विसगतियो पर प्रहार करते हुए लिखा कि - आधुनिक वही जो माता-पिता की उपेक्षा करे । लेखक का यह व्यग्य आजकल के युवाओ पर प्रहार था । आधुनिकता की दाड मे नइ पीढी ने घर, परिवार एव समाज की जिम्मेदारियो

से मुख मोड लिया है । युगो से चला आ रहा भारतीय सस्कृति का उद्घोष 'मातृदेवो भव·' एव 'पितृदेवो भव ' का भाव आज अपनी इस स्थिति पर कोने मे बैठकर नौ नौ आँसू बहाने लगा है ।

जो सन्तान अपने जन्मदाताओ का मन नहीं जीत पाये वह यदि विश्व विजय कर ले तो भी उनका मानव जन्म निरर्थक ही कहलायेगा । जो अपने पूर्वजो का आदर नहीं करते उनको उनकी सन्तान के स्नेह से भी वचित होना पडता है । स्नेह को कभी भी रुपये पैसे से नहीं खरीदा जा सकता । यह तो परम्परा एव सद्भाव के कोमल स्तभों पर टिका रहता हे । सेवा ओर सहानुभूति के सहारे ही सामाजिक सम्बन्धो मे मजबूती आती हे । आधुनिक जीवन की विषमताओ ने भावनाओ के स्रोत सुखा दिये हें, फिर भी अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करते हुए सन्तान को चाहिए कि वृद्ध माता-पिता को सेवा ओर सम्मान दोनो यथाशक्य अवश्य देते रहे । उनकी भावनाओ का सम्मान करना चाहिए । स्नेह के समक्ष धन सदैव गौण होता है । उनको तो सन्तान की सेवा एव स्नेहिल बोलो की आवश्यकता होती है । पश्चिमी सभ्यता का अधानुकरण, जनसख्या का बढता दबाव, महगाई की मार ने मनुष्य की आपस मे दूरियॉ बढा दी है, यदि हमारे दैनिक व्यवहार मे स्नेह का निर्झर कल कल निनाद के साथ प्रवाहित होने लगे, तो हमारा जीवन-प्रसून निश्चय ही प्रफुल्लित होकर अपनी सौरभ लुटा सकेगा । हमे जीवन मे सुखशाति की फसल लहलहानी है तो आवश्यक है कि हम अपने माता-पिता के प्रति स्नेह का सिचन कर उन्हे सुख प्रदान करे। यह सभी के जीवन का एक उद्देश्य होना चाहिए । उस बाला के विचारो को सुनकर मैंने अन्य बालाओ की ओर उन्मुख होकर कहा - इसे देखकर तुमको भी अपने जीवन क्षेत्र के अन्तर्गत पीहर मे माता-पिता एव ससुराल मे सास-श्वसुर के प्रति सदैव सेवा एव सम्मान का भाव जगाना चाहिए ।

मेरी बात सुनकर वे करबद्ध सकल्प स्वीकार करते हुए बोली - महाराजश्री । आपकी प्रेरणा सदैव हमारा मार्ग प्रशस्त करेगी एव हम अपने कर्त्तव्य के प्रति जागरूक रहेगी ।

❀ ❀ ❀

52 दर्शन ही मंगल है

इन दिनो आकाश मेघाच्छन्न था । चातुर्मास काल होने के कारण सवेरे से शाम तक सभी धार्मिक कार्यक्रम योजनानुसार क्रियान्वित हो रहे थे । प्रातः प्रार्थना, प्रवचन, चरित्रवाचन तो हमारे दैनिक कार्यक्रम के अग थे ही मगर जब से त्रिदिवसीय स्वाध्यायी महिला शिविर प्रारम्भ हुआ व्यस्तता बढ गई थी । लेखन कार्य तो लगभग अस्त व्यस्त ही हो चुका था । अनेक बार कलम उठाते ही विचार बनता कि कुछ न कुछ नया मौलिक लिखा जाये, लेकिन कार्य व्यस्तता क कारण भावोर्मियो को पत्राकित करना असम्भव हो जाता ।

मध्याह्न के पश्चात् कभी-कभी समय मिलता भी है, लेकिन तव तक शारीरिक आर मानसिक थकान इतनी हो जाती है कि लिखने की प्रक्रिया को गति ही नहीं दे पाती। मन मे कुछ विचार होता कि आज भी नया सृजन नहीं हो पाया है । आने जाने वालो का क्रम भी यथावत् था । धार्मिक कार्यक्रमो के साथ मुझे अपने व्यक्तिगत कार्य भी समय पर पूरे करने होते थे ।

प्रवचन की समाप्ति हो गइ थी । सभी श्रद्धालु मगलपाठ सुनकर निज घरो की ओर चले गये थे । हमे प्रासुक जल (धोवन पानी) की आवश्यकता का आभास हुआ । स्थानक से कुछ दूर ही जन परिवार ह वहाँ पहुँचकर के आवश्यकतानुसार अचित्त जल ग्रहण किया आर स्थानक की ओर लाट चली ।

हाथो मे पानी का वजन हो गया था । वजन उठाये में विचार कर रही थी कि यो तो साधु को पूर्णत स्वावलम्बी कहा जाता हे, पर उसके जीवन की प्रत्येक छोटी से छोटी आवश्यकता की पूर्ति समाज द्वारा ही होती हे । साधु एव श्रद्धालु समाज एक दूसरे पर अन्योन्याश्रित हें । जो हो, म प्रासुक जल पात्र हाथो मे लटकाये बढ चली तभी मार्ग मे एक बहिन ने खडे होकर करबद्ध अभिवादन किया और सिर झुकाकर खडी हो गई । क्षण भर के लिए मुझे भी ठहरना पडा।

मैंने 'दया पालो' कहते हुए अपने कदम पुन लक्ष्य की ओर बढा दिये । कुछ कदम आगे बढते ही पीछे से आवाज आई - 'महाराज मागलिक तो सुनाते जाइये ।'

मैने मुडकर प्रत्युत्तर दिया - स्थानक में सुनना ओर अविलम्ब आगे बढ गई । हाथो मे पानी का वजन होने के कारण वे अत्यधिक खिच रहे थे । म आगे बढ चली थी, पर चिन्तन की गभीरता से वजन ओर अधिक बढ गया । मन ही मन सोचने लगी कि लोगो को मागलिक कितना प्रिय ह । वे हर शुभ कार्य से पहले मागलिक सुनना चाहेगे । यह एक अच्छी परम्परा है । श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाओ की भावना का सम्मान करने हेतु साधु-साध्वी भी मागलिक सुनाना अपना कर्त्तव्य मानते हैं । यह श्रद्धा की श्रेष्ठ अभिव्यक्ति हे, किन्तु मागलिक सुनने वालो को समयज्ञ तो होना ही चाहिए । कब सुने, कहॉ सुने, किससे सुने आदि का ज्ञान होना कितना अनिवार्य है ।

मैं अब तक स्थानक मे पहुॅच चुकी थी । पानी को अपने निश्चित ठिकाने पर रखकर राहत की सास ली लेकिन चिन्तन की उर्मियॉ अभी भी उठ रही थी । मैं विचार करने लगी, उस बहिन का बीच पथ पर मागलिक मागना अनुचित ही था । उसने यह भी नहीं सोचा कि मेरे हाथो मे कितना वजन हे । वह स्थान भी कहॉ उपयुक्त था । आस पास के घरो का गन्दा पानी लेकर वहती नालियाँ । जिसकी दुर्गन्ध से वह स्थान प्रदूषित हो रहा था । गली के मध्य सूअर

ओर उनके बच्चे धमाचौकडी मचा रहे थे । ऐसे अपवित्र वातावरण मे मागलिक सुनना कहाँ तक उचित है ? क्या हमारे शारीरिक कष्ट की रच मात्र अनुभूति भी उसे नहीं हो रही थी ?

वस्तुत समाज की स्थिति भेडचाल-सी हो गई है । क्या आज साधु केवल मागलिक सुनाने के यत्र बन गये हैं ? किसी भी समय की गई माग की पूति करना साधु के लिए आवश्यक है । वह तपस्वी, विद्यार्थी, वृद्ध, अशक्त तो नहीं ह अथवा अन्य किन्हीं आवश्यक कार्यों मे व्यस्त तो नहीं है ? लोगो को तो बस मागलिक चाहिए । सुनने वाले एक एक कर आते हे, सुनाने वाला पूरे समय इसी का पाठ करता रहे । कैसी परम्परा है ? इस सुन्दर परम्परा मे यह विकृति कब व क्यो प्रविष्ट हुई ? एक के बाद एक प्रश्न उभरते रहे ।

सभवत पहले लोग कम आते हो । उनको किसी भी तरह से धर्माभिमुख करना भी एक कारण हो सकता हे । उनमे यह निष्ठा जगाई गई कि मागलिक सुनने से सब मगल होता है । अच्छा हे, सुनना भी चाहिए, मगर साधु-साध्वियो की अनुकूलता देख ले । उन्हे इस हेतु बाध्य न करे । उनका तो दर्शन भी मगलप्रद ह । यदि उन्होने आपको ध्यान से देखा हे आपका वन्दन स्वीकार करके हाथ का आशीर्वाद स्वरूप उठाया हे तो यह क्या मगलमय नहीं ह ?

यही सब कुछ सोचकर आचार्यप्रवर गुरुदेव ने एक निश्चित समय पर मागलिक देने का निर्णय किया था । कुछ लोग सोचते होगे कि ऐसा क्यो ? मुझे यह निणय अति उत्तम लगा हे । मैंने निरन्तर लोगो को समय पर प्रदत्त मागलिक का रहस्य समझाने का पयास भी किया ह आर आगे भी अनवरत करती रहूँगी । मेरी इस भावना को लोग कितना समझ पायेगे यह तो आने वाला समय ही बतायेगा ।

53 जीवन निर्माण एक कला

रात्रि अन्तिम प्रहर मे गुजर रही थी । कक्ष मे अधकार था अचानक नींद खुल गई । क्या समय हुआ कुछ पता नहीं । नींद खुलते ही उठने की आदत है । मैंने णमो अरहताणम् कहते हुए शय्या को त्याग दिया । णमो अरहताण की ध्वनि कक्ष मे गूज उठी, उसे सुनकर अन्य साध्वीजी भी जाग गये । दीवार पर टगी घडी ने टन टन करके चार बजाए । घण्टाध्वनि सुनकर लगा घडी अवश्य दस-पन्द्रह मिनिट पीछे होगी। मैं चार बजे करीब करीब उठ जाती हूँ । वर्षों से यह क्रम अनवरत चल रहा है ।

मैंने आसन बिछाकर उस पर पद्मासन लगा लिया था । देव, गुरु एव धर्म का स्मरण करने बैठी तो स्मृति शिराओ के स्पन्दन से स्मरण हो आया कि अरे । आज तो मेरा जन्मदिन हे । जीवन मे यह दिन मेरे लिए सदेव महत्त्वपूर्ण एव प्रेरणा स्रोत रहा है । जन्म दिन पर एक ओर जहाॅ बडो का आशीर्वाद मिलता है वहीं हम उम्र एव छोटो की शुभकामनाएँ भी प्राप्त होती हें । उनके माध्यम से जीवन मे नवोन्मेष का सूत्रपात होता है ।

मैं अपने अन्तर में प्रसन्नता का दीया जलाकर ध्यान साधना मे लग गई। नेत्र बन्द कर अपने आप मे खो गई, उस समय लगा जेसे बाहर के कोलाहल को अन्दर के सन्नाटे ने लील लिया हो । जव घडी ने पाच के टकारे लगाये तव ही ऑखे खोली । मुख से जय महावीर का उच्चारण किया । छोटी साध्वियो ने वन्दना करके कहा - महाराजश्री जी । आप जानते ह, आज क्या ह ?

'हाँ मैं जान रही हूँ कि आप लोग क्या कहना चाहते हैं । सवेरे उठते ही यह बात मुझे स्मरण हो आई थी ।'

'हमारी ओर से जन्मदिन की शुभकामनाएँ स्वीकार कीजिए ।'

'मेने मुस्कराकर उनकी बात स्वीकार की और कहा - जीवन के कलेण्डर का एक पृष्ठ पूरा हो गया है । मेरी कामना है कि आगत वर्ष मेरे लिए ही नहीं वल्कि समाज, राष्ट्र एव विश्व के लिए आह्लादमय हो । आतक एव अराजकता का अन्त होकर शान्ति का साम्राज्य फैले । हम बैठे हुए यही विचार कर रहे थे कि सूर्य ने प्राची मे कुकुम बिखेर दी, आकाश मे लाली छा गई । सूर्य के निकलने के साथ ही स्थानक मे भाई-बहिनो का आगमन प्रारम्भ हो गया । दैनिक कार्यो से निवृत्त होकर अपने आसन पर बैठी, सहसा मैंने देखा कि ठीक हमारे सामने वाला मकान पहली बरसात मे ही क्षतिग्रस्त हो गया है । चार पॉच व्यक्ति मकान का अवलोकन कर रहे थे । उस मकान के पडोसी स्वय को असुरक्षित महसूस कर रहे थे । पता नहीं कब दीवारे ढह जाये ओर हमारे जान माल को आत्मसात् कर ले । एक व्यक्ति ने थोडा आवेश मे कहा ।

'आप चिन्ता न करे में आज ही मजदूर लगवाकर इस मकान को गिरवा दूगा ।'

निर्णय हो चुका था - वहॉ खडे लोग चले गये । कुछ ही समय के वाद चार मजदूर गेंती, फावडा लिए वहॉ उपस्थित थे । एक व्यक्ति वता रहा था कि मकान को किस तरह से तोडना हे । मजदूर कार्य मे लग गये । वे सब वडी सावधानी से कार्य मे सलग्न हो गये । उन्हे पडोसी के घर के साथ-साथ अपनी सुरक्षा का भी ध्यान रखना था । वे उस जीर्ण घर के विध्वस मे जुट गये । मकान मालिक चेहरे पर उदासी लपेटे अपने मकान को गिरता हुआ देख रहा था । में चुपचाप वठी हुई सोच रही थी कि मकान वनाते समय पहले मजबूत नींव वनाई गइ आर अन्त मे कगूरे वनाये गये ह मगर आज कगूरे पहले ढहाए जा रहे ह । मकान का निर्माण भी योजना से हुआ ह तो विनाश भी योजनावद्ध ढग से किया जा रहा ह । निर्माण के समय जितनी सावधानी नहीं रखा गई उससे अधिक सावधानी आज इसके विध्वस के समय रखी जा रही ह ।

कैसे हैं ये कामगार भी, जो उदरपूर्ति के लिए अपनी जान हथेली पर रखकर ऐसे कठिन एव चुनोतीपूर्ण कार्यो को करने हेतु तेयार हो जाते हे । हर क्षण आशका, सन्देह, भय ओर भविष्य की अव्यक्त चिन्ता इनके अन्तर मे छुपी है मगर इनके चेहरे इसे व्यक्त नहीं कर पा रहे हे ।

मानव जीव॰ भी इस भवन की तरह ही हे । जीवन निर्माण मे दिन, महीने, वर्ष लगते जाते ह मगर जीवन का भव्य भवन हर कोई पूर्ण रूप से तैयार नहीं कर पाता ओर एक दिन देखते देखते जीवन का अन्त हो जाता हे । नीतिकारो ने कहा भी है -

'सरीरं सादियं सनिधणं ।'

अर्थात् शरीर की आदि भी हे ओर अन्त भी हे । यह जीवन जिस दिन मिला सबको खुशी थी, आज भी खुशी है । क्या जन्मदिन की यह खुशी - जिस दिन इस जीवन का अन्त होगा तब भी इसी भॉति स्थायी रह पायेगी ? मुझे तो हॅसते-मुस्कराते ही इस जीवन को परमात्व तत्व की ओर ले जाना हे। मनुष्य की जीवन शैली ऐसी होनी चाहिए कि मृत्यु के समय वह हसता रहे ओर ससार उसका स्मरण कर रोये ।

मानव का जीवन मिला, यूँ ही इसे न खोय ।
करनी ऐसी कर चलो, आप हँसे जग रोय ॥

निर्माण चाहे जीवन का हो या भवन का उसकी निर्माण प्रक्रिया मे आशा का सचार होता हे तो विध्वस से निराशा का । यह जीवन प्रासाद भी एक दिन क्षतिग्रस्त होगा । इसे धैर्य एव विवेक से जीना जरूरी हे । जीवन मे नित्य पति कई प्रकार के ऑधी तूफान आकर इसकी प्रक्रिया मे वाधक वन सकते हे । आशा पर जिसकी दृष्टि होगी वही अपने पेरो पर सुस्थिर खडा रह सकेगा । जिन भवनो की नींव कठोर धरातल पर होती हे उन्हे बाह्य शक्तियॉ प्रभावित नहीं कर सकती । वे युगो तक खडे रहते हे । इसी पकार श्रेष्ठ पुरुषो के जीवन इतिहास से युगो तक मानव दिशा बोध प्राप्त करते हुए स्वय को धन्य वनाते ह ।

❀ ❀ ❀

बरसात पागल है

54

पावस प्रवास प्रारम्भ हो चुका था । कल शाम से ही आकाश मे सघन घन छा गये थे । तेज आधी एव बिजलियो की चकाचौंध के साथ वर्षा ने अपने आने की दस्तक दी थी । रात मे करीव दो घण्टो तक तेज मूसलाधार वर्षा हुई। सवेरे उठे तो देखा चारो ओर पानी ही पानी है लोगो के चेहरे खिले हुए थे। सचमुच यदि पावस मे पानी न बरसे तो ऋतु का माहात्म्य ही क्या ? आज इन्द्रदेव धरती के लिए प्रीत है । छुटपुट रूप से वर्षा जून के अन्तिम सप्ताह से ही शुरु हो गई थी इस कारण धरती ने हरियाली की चादर ओढकर स्वय को शस्य श्यामला वना लिया था । लोग कह रहे थे कि यह मानसून की वर्षा है । मानसून पूरे प्रदश में प्रवेश कर चुका था ।

आज सूर्योदय होने पर भी सूर्य की झलक दिखाई नहीं दी । आकाश की नीलिना को बादलो ने ढक रखा था । वादल रह रहकर अपनी वाछारो से धरती के कण कण का अभिषेक कर रहे थे । प्रार्थना एव प्रवचन के दनिक [illegible]क्रम पूण हो गये । श्रद्धालु श्रावको की दृष्टि वार-वार वाहर की ओर जाकर [illegible] चाट रही थी । उन्हे हमारे आहार-पानी की चिन्ता सता रही थी। [illegible] ने [illegible] री आकाश न टपकना शुरु कर दिया था, जो रुकने का नाम [illegible] ता था। वरसते पानी मे आहार-पानी हेतु निकलना साधु मर्यादा के

अनुसार उचित नहीं होता, यह जानकर कि यह बादल बिखरने वाले नहीं ह हम स्वाध्याय मे बैठ चुके थे । कभी-कभी वातायनो से दृष्टि पसार करके वर्षा की स्थिति को देख लेते थे ।

दोपहर होते होते बादलो ने अपने कार्य को विराम दे दिया । हवा के तेज झोको से बादल छितरा गये । सूर्य की किरणें गुनगुनी धूप के रूप मे आगन पर उतार चुकी थी । यह देख कुछ धर्म प्राण श्रद्धालु बहिने आ गई । हमारे गोचरी मे विलम्ब होने का उन्हे दु ख था । हमसे अधिक उनको परेशानी हो रही थी । वे बार बार आग्रह करने लगी कि अब तो उठिये, पन्द्रह मिनिट से एक भी बूद नहीं गिरी है । मैंने खडे होकर आकाश एव धरती को देखा, अब बरसात रुक चुकी थी । मैं मुडी तो दूर एक बहिन को देखा जिसके आज तेले का पारणा था मगर हमारे आहार-पानी मे अतराय देख चार की तपस्या करने को उद्यत हो गई ।

एक बहिन दूर खडी खडी कह रही थी – यह बरसात भी पागल हे इसे समय का तो ज्ञान ही नहीं है । कब आना चाहिए, कहॉ कितना बरसना चाहिए। हजारो लाखो वर्ष हो गये बरसते हुए मगर अभी तक इसे ज्ञान नहीं आया ।

उसने अपनी बात स्नेहाभिभूत होकर कही, लेकिन उसे सुनकर में अन्तर्मन की गहराइयो मे खो गई । शास्त्रीय ज्ञान का अवलम्बन लिए मे चिन्तन मे अवगहन करने लगी, तो पाया कि वास्तव मे ही वर्षा मे ज्ञान नहीं हे, यह पागल हे । जल स्थावर है, जिसे हम अप्‌काय कहते हैं । स्थावर जीवो के एक इद्रिय होती है । एक इद्रिय (स्पर्श) वाले जितने भी स्थावर हे उनमे ज्ञान नही होता । दो अज्ञान एव एक दर्शन होता हे, किन्तु ज्ञान नही होता । अत निश्चय ही जलकाय अज्ञानी है, ना समझ हे । इसलिए सभवत समयज्ञता का उसमें अभाव ह ।

वर्षा को रुका हुआ समझ, नगर के श्रद्धालु एक के बाद एक गोचरी हेतु निवेदन करने आ रहे थे । मॅने आकाश की ओर देखकर कहा अभी बादल

पूर्ण रूप से छँटे नहीं है, हो सकता है हमारे स्थानक से निकलते ही बरसने लगे । मेरी बात अभी पूरी भी नहीं हो पाई थी कि बरखा रानी बूदो की पेजनिया वजाती छत पर छम-छम नाच उठी । सब अवाक् होकर बाहर की ओर देख रहे थे ।

समय गुजरता जा रहा था । सूरज अपनी एक झलक दिखाकर बादलो मे खो गया था । शाम कब आ गई पता ही नहीं चल पाया । आज अनचाहे ही सभी साध्वियो के उपवास हो गया । शाम को प्रतिक्रमण-सामायिक के पश्चात् वहिने आकर वठ गई । उनके मन मे मलाल था कि महाराजश्री ने आज सवेरे से अन्न-पानी ग्रहण नहीं किया है ।

में मन ही मन विचार कर रही थी कि कभी हम सकल्प लेकर के उपवास करते हें तो कभी बिना सकल्प ही उपवास हो जाता है । वर्षा ऋतु मे व्रत एव उपवास पर धर्मशास्त्रो मे विशेष बल यो ही नहीं दिया गया है । इस ऋतु मे मानव की जठराग्नि कमजोर हो जाती है । प्रकृति जलती हुई धरती पर वर्षा करके उसकी तपन को मिटा देती है जल की शीतलता का सामीप्य पाकर धरती का कण कण सरसित हो जाता है यह वर्षा हमारी जठराग्नि को ही मद नहीं करती वल्कि जीवन के त्रयतापो को भी शमित करती है । प्रकृति के सुरम्य वातावरण को दखकर मन भी प्रफुल्ल हो उठता है । अन्तर मे सुप्त धर्म भावनाएँ खिल उठती ह । मानव की क्षुधा तो कभी भी शान्त नहीं होती। वे मुढ ह जो भोजन के प्रति आसक्त हे । साधको ने अपने प्रयोगो द्वारा सिद्ध कर दिया हे कि भोजन मात्र शरीर निर्माण करने वाला तत्व हे, उससे शक्ति प्राप्त नहीं होती शरीर को भोजन की आवश्यकता होती ह क्योंकि श्रम करने से शरीर के कोषो का क्षय होता ह, भोजन से उनके वनने की प्रक्रिया अहर्निश चलती रहती ह । आत्मा को इसकी आवश्यकता नहीं होती । में तो आत्मकल्याण के पथ पर वढ रही हूँ। जो भी इस पथ के पथिक ह उन्हे चाहिए कि वे जीने के लिए खाये, खाने के लिए नहीं जीये ।

55 देव दुर्लभ मानव भव

वर्षा ऋतु ने अवनी के आँचल को धानी बना दिया था । सूखी दूव एव सुषुप्त बीजो मे नव जीवन का सचार हो गया था । जल तत्व की प्राप्ति ने धरती के कण कण मे नई चेतना को जगा दिया । मोसम मे आये इस परिवर्तन ने सजग रहते हुए भी मुझे ज्वर ग्रस्त बना दिया । प्रकृति में आया परिवर्तन मानव प्रकृति को भी प्रभावित किये बिना नहीं रहता । मौसम परिवर्तन से तन मे विकृति आने पर मैं प्रकृति के अनुरूप ही रहकर उसे स्वस्थ बनाने की चेष्टा करती हूँ। स्वास्थ्य पुन अनुकूल हो गया । स्वाध्याय के साथ-साथ नियमित लेखन के क्रम को अस्वस्थता से आघात लगा था फिर भी थोडा ही सही लिखने का क्रम अनवरत चलता रहा।

आज स्वास्थ्य को देखते हुए सवेरे ही एकासन व्रत स्वीकार कर लिया था । मुझे जब जब भी अपना स्वास्थ्य कुछ प्रतिकूल दिखाई देता हे, मेरी सर्वप्रथम ओषधी अनशन ही होती है । उपवास, व्रत एव अन्य तपस्याओ का तन एव मन से घनिष्ठ सम्बन्ध है । बडे-बडे ऋषि-मुनि इन्हीं तपस्याओ के प्रभाव से दीर्घ जीवन को प्राप्त करते रहे हैं । मेरी यह दृढ आस्था है कि प्रकृति जिसे बिगाडती है तो वही उसे ठीक करने का भी प्रयास करती हे । इस बार तीन दिन के इस ज्वर मे मेने प्रकृति का ही सहारा लिया था । महात्मा गाधी तो उपवास को अमोघ अस्त्र मानते थे । उनका विचार था कि इसके समान कोई अहिसक अस्त्र ही नहीं है । इसके द्वारा मनुष्य स्वय के साथ-साथ दूसरे के

हृदय को भी बदल सकता है । वे जब जब भी किसी कठिनाई मे फसते थे, उपवास का सहारा ले लेते । उनका चिन्तन एव मनन बढ जाता और समस्या का निदान भी हो जाता ।

मेरे आज एकासन था । तीन दिन की अस्वस्थता से तन भले ही कमजोर हो गया मगर मन मे अद्‌भुत शक्ति का समावेश हो गया । शाम को निभृत वातावरण मे हम सभी साध्वियो ने सानन्द प्रतिक्रमण पूरा किया । काफी देर तक धर्मचर्चा भी की । निश्चित समय पर शयनासन पर जाकर सो गई मगर बहुत देर तक नींद नहीं आई । उसी समय एक आवाज ने मेरे चिन्तन की दिशा ही बदल दी, मुझे ऐसा लगा मानो शान्त सरोवर के जल मे किसी ने पत्थर फेक दिया हा । आवाज श्रवण के प्रथम क्षण मे ही अनुमान प्रमाण से लगा - शायद किसी के घर कोई दुर्घटना हो गई हैं, फिर लगा सभवत कोई मद्यपान के नशे मे चिल्ला रहा होगा । तभी किसी राहगीर के शब्दो ने निर्णय पर पहुँचाया कि पास ही किसी को भाव आ रहा है ।

रात्रि अपनी यात्रा आधी तय कर चुकी थी । बादलो के कारण अधकार भी सघन था । चारो ओर सन्नाटे का विराट् साम्राज्य फैला हुआ था । ऐसी दशा मे निभृत सूनेपन को चीरता हुआ यह स्वर प्रतिपल तीव्र से तीव्रतर होता गया । मैं शय्या से उठकर बैठ गई । कुछ देर बैठे बैठे में जब कुछ थक गई तब हिम्मत करके अपनी शय्या पर उठ बैठी । बाहर बरामदे मे सोई प्राढ महिला को आवाज दी, वह तुरन्त उठकर के मेरे पास आ गई और बोली कहिये महाराज श्री । क्या बात ह ?

यो ही बुला लिया था, नींद नहीं आ रही हे आप मेरे पास बेठकर नवकार महामत्र का जाप करो । वह तत्क्षण ही पच परमेष्ठी का जाप करने लगी । उन स्वरो के साथ स्वर मिलाते हुए मैंने अपनी ऑखे बन्द कर ली, रात मे कब मेरी ऑख लग गइ पता ही नहीं चला । सवेरे उठी तो तन-मन पूर्व की अपेक्षा आज स्वस्थ थे । मध्यरात्रि की वह कर्णभेदी चीख में अभी तक भुला नहीं पाई था । इतनी रात गये भाव आना, क्या कारण रहा होगा इसका ।

क्या रात को आने वाला वह कोई देव था ? देवो का आगमन राग और द्वेष दो कारणो से होता हे । यदि वह किसी का हितैषी बनकर आया, तो इस तरह चीखने चिल्लाने की कहाँ आवश्यकता थी ओर यदि द्वेष से आया तो जिसके साथ वैरभाव है, उसे ही परेशान करता सबको परेशान क्यो किया ? जिस घर मे उस देव का आगमन हुआ वहाँ तो सभी की नींद उड चुकी होगी । क्या वह वास्तव मे मिथ्यात्वी देव था? अपने मन मे उठते प्रश्नो का समाधान मुझे मिल नहीं पा रहा था ।

इस ससार में जीव विभिन्न योनियो मे जन्म लेकर अपने जीवन को पूर्ण करते है । पुण्य कर्मों के उदय से कुछ जीव देव योनि मे जाते हें तो कुछ तिर्यंच योनि को प्राप्त करते हैं । यह मानव-भव ही ऐसा हे जिसे प्राप्त करने को देव भी तरसते हैं । इसी योनि मे कर्म निर्जरा करके आत्मा परमात्म तत्व की ओर अग्रसर होता है । अरिहन्त और सिद्ध की स्थिति तक पहुँचने के लिए मानव भव मे आना आवश्यक बताया गया है । देव शक्तियो की भी इच्छा होती होगी कि वह मानव भव मे प्रवेश करे लेकिन पूर्व कर्मों की समाप्ति से पहले यह भव भी नहीं मिल पाता । यही कारण हो सकता हे कि दुष्ट भाव वाले देव कोमल मन मस्तिष्क वालो मे अपना स्थान बनाकर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करते हैं । मानव शरीर मे प्रवेश करके उसे पीडित बना देते हे । मानव मे स्वय की अपनी ऊर्जा होती हे मगर उससे कई गुणा अधिक शक्ति देवो मे होती ह । वह शक्ति यदि मनुष्य मे प्रवेश करेगी तो अपना विकराल रूप अवश्य प्रकट करेगी । इस सारी स्थिति को जानकर के ही धर्मशास्त्रो मे तप की महत्ता को बताया है । जहाँ तप शक्ति का प्रभाव होता है वहा देवशक्ति भी गोण हो जाती है । तपस्वी मानव के पास देव शक्ति आते ही थर्राती हे । मिथ्यात्वी देव इन्हे देखकर घबरा उठते हैं । उनका तेज तपस्वियो के समक्ष कान्ति-विहीन हो जाता है, वे उदासीन होकर उस स्थान का त्याग कर देते ह । यह सोचकर प्रत्येक मानव को जब भी समय मिले अपना जीवन जप-तप मे लगाकर, कम निजरा कर आत्म तेज प्रकट करना चाहिए । यही उसके लिए श्रेयस्कर होगा ।

❀ ❀ ❀

56 स्वविवेक जगे !

आचार्य श्री का चादर समारोह सानन्द सम्पन्न हो गया था । विभिन्न नगरो एव ग्रामो से धर्मप्रेमी श्रद्धालुओ ने आकर समारोह मे समर्पण के साथ अनुमोदन किया । समारोह के पश्चात् भी आने जाने वालो का क्रम यथावत था। मै सवेरे अपने दनिक कार्यो से निवृत्त होकर स्वाध्याय मे सलग्न थी । उसी समय दो बन्धुओ ने आकर वन्दन किया और सामने बेठ गये ।

मने उनसे पूछा - क्या आप चादर समारोह के प्रसग पर उपस्थित नहीं थे । उनमे से एक ने कहा - हम आये थे महाराजश्री । मगर उस दिन श्रद्धालुओ का सलाब उमड रहा था हमारी वार्ता नहीं हो सकी अत आज पुन दर्शन लाभ का भाव लिये आये हें ।

वे भाइ जाति से ब्राह्मण थे । विचरण काल में हमारा उनके ग्राम मे परसने का प्रसग भी बना था । वहाँ प्रवचन भी हुआ था । उस प्रवचन मे जैन धर्मानुयायियो के साथ-साथ वष्णव धर्मावलम्वी भी वडी सख्या मे उपस्थित थे । मैने उनसे पुन प्रश्न किया - आपके साथ ये भाई कहाँ से आये हें ?

ये हमारे ग्राम के ही ह । उस दिन धर्मसभा मे ये आर इनकी पत्नी भी उपस्थित थी । जिनवाणी की देशना ने इनके हृदय मे उथल पुथल मचा दी है । उस दिन के पश्चात् इन्होने मदिरापान एव मास भक्षण का परित्याग भी कर दिया ह ।'

'यह तो बहुत उत्तम निर्णय हे ।'

'महाराज श्री इनकी घरवाली ने कहा है कि इनका कोई भरोसा नहीं, कुसगति के प्रभाव से पुन बदल सकते हे इसलिए इनको महाराजश्री के समक्ष प्रतिज्ञाबद्ध करने की आवश्यकता हे इसलिए में इन्हे लेकर आया हूँ ।'

'आप अपनी पत्नी के दबाव से यहाँ आये हो या स्वविवेक से, पहले यह निर्णय अच्छी तरह कर लो । उसके पश्चात् ही मैं आपको सकल्प करवा सकती हूँ, मैने गभीर होकर कहा ।'

'वह करबद्ध होकर बोला - महाराजश्री । घरवाली की तो प्रेरणा रही है मगर मैंने मास-मदिरा का सेवन तो आपके प्रवचन के पश्चात् ही छोड दिया था । मैं प्रतिदिन शाम को शराब पीता था मगर आज दस दिन हो गये, मने पीना तो दूर उसे छुआ भी नहीं है ।'

'यह तो बहुत ही अच्छी बात है भाई । तुमने ठीक समय पर उचित निर्णय लिया है । आज के बाद भूलकर भी तुम मद्य एव मास का सेवन नहीं करोगे । मैं तुम्हे प्रतिज्ञा बद्ध करती हूँ यदि इस प्रतिज्ञा का जागरूकता से निर्वाह करोगे तो तुम्हारी जीवन बगिया मे आनन्द की बहार आ जायेगी । घर-परिवार मे वैभव की फसल लहलहा उठेगी । तुम्हारा जीवन दिव्य आनन्द से भर उठेगा ।' उसने करबद्ध होकर शपथ ग्रहण की और मगल पाठ सुनकर अपने साथी सहित चला गया ।

इस बात को एक माह से अधिक बीत गया । आज वह अकस्मात ही हमारे समक्ष उपस्थित हो गया । उसे देखा तो लगा उसमे बहुत कुछ परिवर्तन हो गया । आज वह अकेला ही आया था । मै दूर से उसे देखकर सोचने लगी कि कल तक जिसे शराब के नशे मे अपना व परिवार का हित भी नजर नही आता था, पत्नी एव बेचारे बच्चो को छोटी छोटी बात पर मारा करता था, असमय जिसके चेहरे पर बुढापे के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे थे पर आज इसकी मुखाकृति पर कितनी प्रसन्नता झलक रही है । इसके पावो मे गति एव भावना मे उल्लास हे ।

'वह सिर झुकाकर नीचे बढते हुए बोला – महाराजश्री मैं आपके उपकार को जनम-जनम तक भी नहीं भूल पाऊगा ।'

'अरे भाई उपकार तो तुमने अपने जीवन के साथ किया है ।'

'आपके आशीर्वाद से अच्छा हो गया है । इधर आया तो पता चला कि आप यहाँ विराज रहे हैं । अत दर्शनार्थ चला आया । कुछ समय ठहरकर वह वहा से चला गया ।

उसके जीवन मे आया यह परिवर्तन मेरे लिए भी आह्लादकारी था । मैं सोचने लगी कि मद्य का मद आदमी को कितना गिरा देता है । मद्य की एक घूट मानव को मदहोश बना देती है तो सत्तर कोडा-कोड सागरोपम की स्थिति वाला मोहनीय कर्म न जाने कितनी वेहोशी लाता हे । इसी कारण तो मनुष्य अपने लक्ष्य को ही विस्मृत कर देता हे । मद्यपान करने वालो की धार्मिक, पारिवारिक आर शारीरिक सभी स्थितियाँ हेय आर क्षीण हो जाती हैं । मद्यपी पैसा और प्रतिष्ठा दोनो से हाथ धो बेठता ह । मद्यपो की स्थिति को देखकर मैं सोचती हूँ जव ये नशे से मुक्त हो जायेगे तो इनका जीवन कसा शान्तिमय होगा साथ ही ये आत्मोन्नति भी कर सकेगे । काश ! ससार का प्रत्येक मानव मोह मद से मुक्त हो जाये तो उनकी आत्मशान्ति को आत्मसात् कर परम आनन्द की स्थिति मे पहुँच सकेगी । वही परम आनन्द का क्षण उसके साभाग्य का सूचक होगा। मुझे उस दिन की प्रतीक्षा ह जिस दिन ससार का प्रत्येक मानव मद्य एव मद से स्वय को परे कर लेगा ।

57 वानर कौन है ?

जून माह का मार्तण्ड सवेरे क्षितिज हो प्रकट होते ही अपनी किरणो का प्रभाव प्रकट करने लगा था । भीषण गर्मी को देखते हुए प्रवचन का कार्यक्रम आठ से नो तक रखने का श्रावको ने निवेदन किया । उनका यह निवेदन मुझे भी उचित लगा । प्रवचन के पश्चात् आहार आ गया था । सभी ने आहार ग्रहण किया । स्थानक की घडी ने दस बजने का सकेत किया किस कार्य को प्राथमिकता दी जाये । स्वाध्याय किया जाये या लेखन इस ऊहापोह से आज एक विचित्र स्थिति पैदा हो गई ।

तभी एक वानर न जाने कहाँ से आकर स्थानक मे रखे पट्टे पर बेठ गया । कल ही कुछ भाई कह रहे थे कि एक वानर चुपचाप आकर घरो मे प्रवेश कर जाता है, मन्दिर मे प्रतिमा के समीप पहुँचकर बेठ जाता हे । वह किसी को डराता नहीं है परन्तु मानव स्वभाव हे कि वह उससे डरता हे । वानर हमारे बहुत ही करीब आकर बेठ गया था । छोटी साध्विया भयभीत होकर एक ओर खिसक गई । वह वानर हमारी ओर आश्चर्यचकित होकर देख रहा था । पट्टे पर बैठा कभी अपनी पूछ को हिलाता तो कभी अपने अगले पावो से शरीर को खुजलाने लग जाता । छोटे साध्वीजी ने स्थानक मे नीचे बेठे एक भाई को आवाज दी कि श्रावक जी । देखिए वानर आ गया हे ।

वानर को आज पहली बार इतने करीव से देखने का मोका मिला था। मै उत्सुकता से उनके क्रियाकलाप को देख रही थी । वानर को वेज्ञानिको ने मनुष्य का पूर्वज बताया है । उसके कई लक्षण मानव से मेल खाते ह । जव तक एक भाई लम्बा डडा लेकर आ गया था । वह वानर कभी उसकी ओर तो कभी हमारी ओर देखने लगा मानो हमसे प्रश्न कर रहा था कि मने आपका क्या अहित किया हे जो इस डडे से मुझे खदेडना चाहते हो । मने कहा डडे को वहीं रख दो, यह तो वेसे ही चुपचाप बेठा हे । इसे देखकर लगता हे मानो वर्षों से हमारा इसका परिचय हे ।

सामान्यत लोग जानवरो से कुछ डरते है । मैं स्वय को डरपोक नहीं मानती हूँ । कहा गया है कि नख सींग एव तीक्ष्ण दात वाले जानवरो से दूर ही रहना हितकर है । यहाँ अन्य भाई बहिनो की उपस्थिति ने साध्वियो के भय को कम कर दिया था । **'तावत् भयाद्हि भेतव्यम्, यावद भयमना गतम्'** के अनुसार परिस्थिति आने पर सामना करने की हिम्मत आ ही जाती है । मैंने उच्च स्वर मे नमस्कार महामत्र का पाठ किया और साथ का साथ ही सस्वर मगलपाठ भी सुना दिया ।

पाठ समाप्त होते ही वह वानर बिना किसी प्रतिक्रिया के वहाँ से उठा आर दीवारे लाघता हुआ आँखो से ओझल हो गया । हमारे आश्चर्य का कोई पार नहीं था । उसके जाने के पश्चात् लोगो की उत्सुकता को शात करते हुए वडे महाराजश्री ने कहा - भाई । अरिहन्तो की वाणी कहती है कि तिर्यंच भी श्रावक बन सकते हैं । पाँचवे गुणस्थान तक पहुँचने की उनमे भी क्षमता होती हे । इस वानर की आत्मा मे भी सम्यक्त्व का बीज छिपा है, जो जिनवाणी की वर्षा तथा आचरण के अनुकूल अवसर पाकर फलेगा फूलेगा । पशु योनि मे जीने वाला भी धर्म के प्रति कितनी श्रद्धा रखता हे । शान्ति से मगल पाठ सुनकर चला जाना भी कोई न कोई विशेषता प्रकट करता हैं ।

मेरी बात सुनकर वहाँ खडा एक भाई बोला - महाराजश्री यह वानर बडा जिद्दी ह लकडी फटकारते हैं, ककर फेंकते हैं फिर भी वडी मुश्किल से भागता ह आज तो गजब ही हो गया हे ।

मने कहा - भाई समय, स्थान एव वाणी का प्रभाव तो होता ही है । आज बीसवी शताब्दी का मानव इक्कीसवी सदी मे जाने की दस्तक दे रहा है। उसकी धर्म स्थान, धर्मगुरु आर धर्मक्रिया, श्रद्धा कमजोर पड रही हे । पाश्चात्य सभ्यता के विष ने समाज के चिन्तन को विषला वना दिया हे । आज का मानव पशु से भी गया वीता बन रहा हे मगर पशु इसके विपरीत आचरण कर रहे हें। यदि यही स्थिति रही तो सोचना पडेगा कि वास्तव मे वानर कान हे और मनुष्य कौन ह ? इस कलियुगी दार मे श्रावको के पास स्थानक मे आने का समय नहीं ह आर यह वानर न जाने कहाँ से दर्शनार्थ आया आर धर्म वचन सुनकर शान्त भाव से लाट गया ।

अब तक आस पास से अनेक भाई-वहिन यह सुनकर कि वानर महाराजश्री के पट्टे पर आकर बैठ गया ह उसे देखने को स्थानक मे आ गये थे । कुछ ने मगलपाठ सुनकर उसे जाते हुए देखा तो दातो तले अगुली दवाकर धर्म के प्रभाव को हृदय से स्वीकार रहे थे । हमे भी प्रमोद की अनुभूति हो रही थी।

58 केकड़ा वृत्ति का त्याग करें ?

सन्त-सती का जीवन कलकल निनाद कर अनवरत प्रवहणशील निर्झर के जल सदृश स्थिर हो जाना, टिक जाना उचित नहीं होता । इन्ही भावनाओ को लेकर ग्रामानुग्राम विचरते हुए एक छोटे से ग्राम मे पहुँचे । श्रावको की भावना थी कि प्रवचन का लाभ मिले । मै तो यह चाहती ही थी कि धर्मप्रेमी श्रोताओ के समक्ष जिनवाणी का प्रचार प्रसार हो ।

मै प्रवचन के माध्यम से आगम के उद्धरण उदाहरणो द्वारा अपनी बात श्रोताओ तक पहुँचा रही थी । प्रवचन मे अचानक ऐसा प्रसग आ गया कि सासारिक व्यक्तियो मे केकडा वृत्ति घर कर गई है । भारतीय समाज इससे अछूता नहीं है । मुझे बरबस ही एक स्थान पर पढी घटना का स्मरण हो आया कि एक ` अमेरिका मे विभिन्न देशो के केकडो की प्रदर्शनी आयोजित की गई, जिसमे रू`, चीन, जर्मनी सहित भारत के केकडे भी प्रदर्शित किये गये । जिन जारो मे केकडे रखे गये वे सभी ढके हुए थे लेकिन भारत द्वारा प्रदर्शित केकडो के जार का मुँह खुला हुआ ता । दर्शको को इस बात पर आश्चर्य हुआ कि इस जार का मुँह खुला क्यो है ? आयोजको से इसका कारण जानने पर बताया गया कि ये भारत के केकडे ह । इस जार मे से कोई केकडा बाहर निकलने का प्रयास करेगा भी तो नीचे वाला केकडा ऊपर वाले की टाग खीचकर नीचे गिरा

देगा । अत एक भी इससे बाहर निकल नहीं सकता है । घटना सामान्य एव हास्ययुक्त हो सकती है मगर इस ससार मे भी यही स्थिति है । कोई इस ससार से निकलना चाहे, तो दूसरे उसकी टाग खेंच लेते हैं, वे उसे रोकने का प्रयास करते ह । यहाँ केकडो की तरह सब एक दूसरे की टाग खीचने मे लगे है।

सच मानो तो यह जिन्दगी अनेक हादसो को झेलती रहती है । इसी तडफ, उदासी एव बोझिलता ने मानव जीवन की तस्वीर ही बदल दी है । मानव को यह जिन्दगी कई गलतियो, अहसासो और अनुभवो से बिगडती और सवरती रहती हे । कभी कभी ऐसा होता है कि हम अनजाने अनचाहे कुछ ऐसे क्षणो से गुजरते हें जो हमारे जीवन को कुरुपता के अतिरिक्त और कुछ नहीं दे पाते आर [illegible] सोचते हें कि हमे इस बोझिलता, नीरसता एव उदासी से कोई उबार ल । उस वक्त हम अपने को नितान्त एकाकी एव असहाय पाते है । ऐसी समस्त चिन्ता, परेशानी दु ख दर्द एव दुर्घटनाओ से बचाने वाली है जिनवाणी। स्वाध्याय व प्रवचन के माध्यम से इसे सुनकर और समझकर व्यवहार मे लाने वालो को असीम आनन्द की अनुभूति हो सकती हैं ।

भातिक कचाचौंध से परिपूर्ण वर्तमान युग मे इस प्रकार की वाते कहना एव करना दोनो ही कुछ लोगो को अवाछित लग सकता है मगर जिनका जीवन स्वाध्याय के वारिधि मे डुबकिया लगा चुका हे उन्हे असीम शाति का अनुभव होता ह । स्वाध्याय एव पवचन श्रवण का लाभ लेने वाले ही चिन्तन की उर्मियो का आनद ले सकते हें । वीर वाणी को आत्मसात करन वाले ही ससार की [illegible]भगुरता को समझ सकते हे । वे अपनी केकडा मनोवृत्ति को त्यागकर स्वय [illegible] स बाहर निकलते हें आर दूसरो को भी सहारा प्रदान कर बाहर निकालने [illegible] रहते हें । वास्तव मे जिनवाणी अनुपम ह । इसका आलोक जिम [illegible] ह वह फिर अधकार मे नहीं भटकता, ठोकरे नहीं खाता । दृढ श्रद्धा [illegible] श्रवण भी कर्म निर्जरा का हेतु ह ।

धर्म पथ पर अग्रसर होने वाले मानव को चाहिए कि वे अपनी केकडा वृत्ति का परित्याग करे । स्वय त्याग के पथ पर नहीं बढ सके तो कम से कम दूसरो के लिए तो व्यवधान उपस्थित न करे । जीवन मे ऐसे अनेक प्रसग उपस्थित होते है जब कोई श्रद्धालु धर्ममार्ग पर आगे बढने को प्रवृत्त हो जाते हे, वह अपना अधिकाश समय धर्म स्थान मे बैठकर स्वाध्याय एव सामायिक मे व्यतीत करता है । उसकी यह स्थिति दूसरो को उतनी पीडा नहीं पहुँचाती जितनी उसके अपने परिजनो को पहुँचाती है । तब उनके मन मे एक टीस उठने लगती है । एक भय उनके अन्तर्मन को उद्वेलित कर उठता है । वे सोचने लगते ह कि कहीं यह हमारा परित्याग तो नहीं कर जायेगा । अधिक स्वाध्याय, चिन्तन एव मनन देख कर उनके हृदय पर साप लोटने लगते हैं । वे उसके समक्ष सासारिक सुख वैभव के नश्वर प्रलोभन उपस्थित कर विचलित करने का प्रयास करते हैं। वे लोग साधक के साधना मार्ग पर अचानक काटे ही नहीं, बल्कि कीले बिछा देते हैं । जिसकी भावना अधपकी होती है वह माता-पिता, भाई-बहिन की आँखो मे आँसू देखकर पुन सासारिक दल दल मे फॅस जाता हे । साधक की भावना को मजबूत करने के बजाय काटे एव कील बिछाने वाले जरा विचार करे कि क्या वे उचित कर रहे है ? उनमे ओर जार मे रखे केकडो मे क्या फर्क है। वे स्वय तो दलदल मे फॅसकर मृत्यु के मुख की ओर अग्रसर होते ही है, साथ ही जो मुक्ति की ओर बढ रहा हे उसे भी रोकने का प्रयास करते है । यह कहाँ तक उचित हे । हम जिनवाणी को मात्र सुने ही नहीं बल्कि अन्तर मे उतार कर उस पर मनन भी करे । यही मानव जीवन के लिए हितकर होगा ।

❀ ❀ ❀